गंगा-पुस्तकमाला का २०४वाँ पुष्प

नौजवान

[सामाजिक उपन्यास]

लेखक
श्रीगोविंदवल्लभ पंत

[वरमाला, राजमुकुट, अंगूर की बेटी, सुहाग-बिंदी, अंतःपुर का छिद्र, सन्ध्या-प्रदीप, मदारी, प्रतिमा, तारिका, एकसूत्र, नूरजहाँ, जूनिया, यामिनी आदि के रचयिता]

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, गौतम बुद्ध-मार्ग
लखनऊ

संवत् २०११] प्रथम संस्करण [मूल्य ५)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

अन्य प्राप्ति-स्थान—

१. भारती (भाषा)-भवन, ३८१०, चर्खेवालाँ, दिल्ली
२. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मछुआ-टोली, पटना
३. सुधा-प्रकाशन, भारत-आश्रम, राजा बाजार, लखनऊ

नोट—इनके अलावा हमारी सब पुस्तकें हिंदुस्थान-भर के सभी प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं। जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें। हम उनके यहाँ भी मिलने का प्रबंध करेंगे। हिंदी-सेवा में हमारा हाथ बँटाइए।

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

[एक]

वे दोनों फुटपाथ पर सो रहे थे। उन दोनों का कहीं घर नहीं था। उनमें से एक भिखारी का छोकरा था, जँभाई लेकर वह पत्थर के फर्श पर बैठ गया। दोनों हाथों से माथा पकड़कर उसने कुछ सोचा-विचारा। मैले और फटे कोट की जेब में हाथ डालकर जेब की तमाम संपत्ति हथेली पर उलटी—एक खोटी इकन्नी, तीन-चार दियासलाई की तीलियाँ, एक टूटी प्लास्टिक का कंघी, तीन काच की गोलियाँ, एक आतिशबाजी का अधजला टुकड़ा और एक-दो मूँगफली के दाने—यही सारा संग्रह था उसका।

मूँगफली के दाने मुख में रख लिए उसने। एक लहर आई उसके दिमाग में, अधजली आतिशबाजी का टुकड़ा बाहर निकालकर और सब चीजें फिर जेब में ही रख ली। अपने मन में बनते हुए मान-चित्र पर वह हँसा। पास ही सड़क पर मोटरों के पहियों से पिचका हुआ एक वनस्पति-घी का टीन पड़ा था, वह उसे उठा लाया। अपने फटे हुए कुरते में से उसने एक धज्जी फाड़ ली, और अपने मन की लहर को पार्थिव रूप देने के लिये तैयार हो गया।

दूसरा सोनेवाला एक फालतू कुत्ता था, उसी भिखारी की

भाँति। लोगों के चाटकर फेंक दिए गए पत्तों मे वह कुत्ता उसके साथ प्रतिद्वंद्विता रखता था। लेकिन वैर-भाव नहीं कोई था भिखारी का उस मूक पशु के प्रति। संबंध-विहीन जगत में उस कुत्ते के लिये ममता थी उसको। जहाँ कहीं, जब कभी उसे अतिरिक्त भोजन मिल जाता था, तो वह जरूर उस कुत्ते के लिये बचाकर ले आता था।

कोई बदले की भावना नहीं, केवल एक हँसी-मजाक़ ही उसे इष्ट था। साँस रोककर बड़ी धीरता से उसने वह टीन कुत्ते की पूँछ से बाँध दिया, और वह अधजली फुलझड़ी एक हाथ में ले दूसरे से जेब की दियासलाई की तीली बाहर निकाली, लेकिन जलावे कैसे? सड़क पर जाते हुए एक मुसाफ़िर ने आखिरी कश खींचकर बीड़ी फेंक दी। छोकरा दौड़कर उसे उठा लाया। उसने उसका बाक़ी धुआँ भी खींच लिया, और उसकी आख़िरी चिनगारी छुआ दी दियासलाई के सिर से। दियासलाई से झलझला उठी फुलझड़ी। उसे वह कुत्ते के मुँह पर ले गया। कुत्ता नींद से चौंककर भागा। उसकी दुम में बँधा, खड़खड़ाता हुआ विशुद्ध सतोगुणी घी का टीन! उस भिखारी के छोकरे को मानो जन्म की सबसे क़ीमती हँसी मिल गई!

कुत्ता घबराकर बेतहाशा भागा। फुटपाथ पर बैठे-चलते हुए कई मुसाफ़िरों और खोमचों से टकराता हुआ न-जाने कहाँ चला गया। भिखारी बड़ी लापरवाही से ताली बजाता हुआ ठहाका मारकर हँसने लगा। पास ही एक मकान के द्वार पर से

एक अधेड़ उमर का मनुष्य उसके ये करतब शुरू से देख रहा था। वह धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ा। पीछे से आकर बड़े प्यार से उसने उस छोकरे के कंधे पर हाथ रखकर कहा—"क्या नाम है तुम्हारा ?"

"मेरा नाम है नौजवान।"

"बड़ा सुंदर नाम है, नौजवान, तुम बहुत अच्छे आदमी हो सकते थे, लेकिन अपने स्वरूप को नहीं पहचान रहे हो। मेरी बात मानो तो।"

"क्या बात है आपकी ? कहिए तो सही।"

"यह अपने कान में खोंसी हुई अधजली बीड़ी निकालकर फेक दो। यह तुम्हारी बड़ी ग़लत तसवीर बना रही है। इसे फेक दो, इसे फेक दो।"

नौजवान ने कान मे से वह बीड़ी निकाल ली। बड़ी सफाई से उस मनुष्य की आँख बचाकर, दूसरे हाथ में लेकर अपनी जेब में रख ली, और उस हाथ से फेकने का अभिनय कर उसके अनुशासन की पूर्ति कर दी।

मनुष्य ने प्रसन्न होकर, नौजवान की पीठ ठोककर कहा—"नौजवान, भीख माँगना अच्छा पेशा नहीं।"

"काम देता कौन है ?"

"काम करने की इच्छा हो, तो वह सर्वत्र मिल जाता है। मैं दूँगा तुम्हें काम। मुझे बहुत-सा रुपया अपने चचा की विरासत मे मिला है, और मेरे मन में वैराग्य है। मैं उस रुपए

को दुनिया की भलाई में ख़र्च करना चाहता हूँ—यह बहुत बुरी हो गई !"

'बुरी हो गई !" आश्चर्य में पड़कर नौजवान ने चारों-तरफ़ देखा—"बिना बुरा समझे भलाई की भी तो नहीं जा सकती। यह दूकान आपकी है ?"

"हाँ।"

"क्या माल बेचते-ख़रीदते हैं आप ?"

"यहाँ मेरी एंटी-निकोटीन-सोसाइटी और लेबोरेटरी है। मैं प्रोफ़ेसर हूँ—प्रोफ़ेसर जोश। अगर तुम पढ़े-लिखे होते, तो ज़रूर पहचानते मुझे। मैं युनिवर्सिटी में प्रोफ़ेसर था।"

'नौकरी छोड़ दी ? बहुत ज्यादा काम और तनख़्वाह कम थी क्या ?"

"नहीं, यह सब कुछ नहीं था। मुझे रुपए की कोई ज़रूरत नहीं। किताबी विद्या में कुछ नहीं रक्खा है। मैं दुनिया में भलाई फैलाना चाहता हूँ। मैं तंबाकू के बारे में रिसर्च करता हूँ। उसके बीमारों का इलाज करता हूँ। उसके ख़िलाफ़ लेक्चर देता हूँ। लोगों में उसका प्रचार रोकने के लिये कमेटियाँ खुलवाता हूँ। उसकी बुराइयों को दिखाने के लिये किताबें छपवाकर मुफ़्त बाँटता हूँ।" प्रोफ़ेसर ने कहा।

"बड़ी मेहनत करते हैं आप। लेकिन आपकी बग़ल ही में यह जो बीड़ी-फ़ैक्टरी की आलीशान इमारत है, इसका क्या होगा ?"—नौजवान हँसता हुआ बोला।

"जब पीनेवाले न रहेंगे, तो वह कितने दिन ठहर सकेगी ?"

नौजवान ने एक उदास हँसी से कहा—"हाँ।"

"नौजवान, तुम मेहनत करो, तो बहुत बड़े आदमी बन सकते हो।"

"सुबह से शाम तक यह जो मोटरों के पीछे हाथ फैलाता हुआ मैं दौड़ता रहता हूँ, इसे आप क्यों 'मेहनत' नाम नहीं देते ?"

"देखो, मै बहुत बड़ा प्रोफेसर हूँ, मेरे साथ बक-बक नहीं चलेगी। मैं तुम्हारे खर्च के लिये रोज पैसे दे दिया करूँगा, यह भीख माँगना छोड़ दो।"

"लेकिन आप मुझे अपनी दूकान मे ऑफ़िस-ब्वाय बनाकर एक कोने में गाड़ देंगे।"

"नहीं, आज़ाद हो छोड़ दूँगा; जहाँ तुम्हारी मर्जी हो, जाना, लेकिन रोज तुम्हें मुझे उस रुपए का सही-सही हिसाब लिखा देना पड़ेगा शाम को।"—कहकर प्रोफेसर ने जेब से एक ठोस रुपया निकालकर दिखाया उसे।

नौजवान राज़ी हो गया। उसने प्रोफेसर जोश की हथेली पर से रुपया उठा लिया—"शाम को हिसाब लिखा जाऊँगा।"

नौजवान बिजली की चाल से चलता बना। दिन-भर नगर में चारों ओर घूमता रहता था वह। कभी रेल के स्टेशनों और मुसाफिरखानों में, कभी पार्क और मैदानों में, कभी होटलों और

सिनेमा-घरों के बाहर। मतलब यह कि जहाँ भी भीड़ में बिना टिकट के प्रवेश मिलता, वहीं पहुँच जाता।

आज जेब में पूरा साबुत रुपया होने से उसके उत्साह की सीमा नहीं थी। भाँति भाँति की कामनाएँ, गुड़ पर की मक्खियों की तरह, उस पर चढ़ाई कर रही थीं। कहाँ जाकर वह उस रुपए को तुड़ाये? मोड़ पर के एक विश्रांति गृह के चाय के प्यालों की खनक ने उसे अपने भीतर खींच लिया।

तुरंत ही उसने उसके भीतर गया हुआ अपना कदम बाहर खींच लिया। एक जान-पहचान की भिखारिन की छोकरी को देख लिया उसने। चंपा था उसका नाम। वह उसकी ओर बढ़ा, लेकिन उस छोकरी ने मुँह बनाकर दृष्टि फिरा ली। नौजवान उसके निकट गया। वह खाँसने लगा, चंपा वैसी ही रही। नौजवान सीटी बजाने लगा, चंपा टस से मस नहीं हुई। नौजवान सीमेंट के फ़र्श पर वह रुपया बजाते हुए बोला, स्वर में—"मैं तो नौकर हो गया रे ऽ ऽ..." फिर भी चंपा के रुख में कोई बदलाव नहीं हुआ। नौजवान ने धीरे से वह रुपया उसकी तरफ़ उछाल दिया। रुपया उसके फैलाए हुए अंचल में जा गिरा। रुपया हाथ में लेकर, मुख पर क्रोध व्यक्त कर चंपा ने मुँह फिराया, और बिगड़ उठी—"मैं ईंट उठाकर तेरा सिर फोड़ दूँगी, अगर फिर ऐसी हरकत की, तो। पेट के लिये भीख माँगती हूँ, तो क्या इज्ज़त नहीं रखती?" उसने वह रुपया बड़ी घृणा के साथ नौजवान की तरफ़ फेंक दिया।

नौजवान वह रुपया उठाकर, अपना-सा मुँह लेकर प्रोफेसर साहब के पास जा पहुँचा। वह ऑफिस की मेज़ पर बैठे कुछ लिख रहे थे। नौजवान ने वह रुपया उनकी मेज़ पर पटक दिया।

"क्यों, क्या बात है?"

"खोटा है, नही चला।"

"कौन कहता है?"

"उसने नही लिया। कोई नहीं लेगा इसे।"

"तुम झूठे हो। दूसरा देता हूँ।"

"नही प्रोफेसर साहब। दुनिया जैसी है, उसे वैसी ही रहने दीजिए, उसे ठीक करना भूल है।"

प्रोफेसर साहब कुछ कहना चाहते थे, लेकिन नौजवान बड़ी तेज़ी से कमरे के बाहर हो गया।

[दो]

पंडित गजाननजी, कपाल धीरे-धीरे बालों को उड़ाता हुआ, अपनी सीमा बढ़ाकर चोटी की जड़ तक जा पहुँचा है। ठगने क़द के हैं। तोंद कुछ बाहर निकल आने से और भी नाटे दिखाई देते हैं। ज्योतिष का काम करते है। प्राचीनता की पुट देने के लिये मिरज़ई और धोती पहनते है, नवीनता का रंग चढ़ाने के वास्ते आँखो पर चश्मा, हाथ में फाउंटेन और रिस्टवाच धारण करते है।

इधर दो तीन दिन से उनकी घड़ी बंद पड़ी है। न-जाने क्या हो गया? गृहिणी कहती हैं, उन्होंने उसे छुआ तक नहीं। ग्रह-तारागण रुक जायँ, कोई परवा नहीं, ज्योतिषी की घड़ी बंद नहीं होनी चाहिए—ऐसी धारणा थी पंडित गजाननजी ज्योतिषाचार्य की! समय के अंकों पर ही उनके ग्राहकों का भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनो ठहरे हुए थे। इसलिये तुरंत ही उसकी मरम्मत हो जानी जरूरी थी। किसी घड़ीसाज़ को दी, और उसने उसके जवाहरात निकालकर नक़ली चिपका दिए, तो?

पड़ोस में बाबू रामधन वकील रहते थे। दोनो की ख़ूब मिली-भगत थी। गजाननजी के पास जो भी मुक़दमे में फँसा

हुआ आता, वह उसे ग्रह-देवता की मंत्र पूजा के साथ-साथ रामधनजी के घर का पता भी बता देते, और श्रीरामधनजी इसके जवाब में अपने मुवक्किलों से कहते—"धरती के सिवा आकाश भी कोई चीज़ है। धरती के हाकिमों से बहस करने को मैं तैयार हूँ, लेकिन आकाश के देवताओं को मनाने के लिये तुम्हें पंडित गजाननजी का सहारा लेना बहुत ही ज़रूरी है।"

ज्योतिषीजी ने वकील साहब का द्वार खटखटाकर कहा "वकील साहब, चलिए। आपने कहा था, मैं घड़ी की मरम्मत करा दूँगा।"

"याद है।" वकील साहब ने द्वार खोलते हुए कहा—"पान तो खा लीजिए।"

"अभी खाया है। बस से चलिएगा?"

"बहुत दूर नहीं है। घूमना भी हो जायगा।"

दोनो बातें करते हुए चले। एक विशाल इमारत के फाटक पर साइनबोर्ड लगा हुआ था—'दि जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी'। रामधन बाबू बोले—"शायद आपको मालूम होगा, सेठ जयराम की है यह फैक्टरी। लेकिन दूसरी बात न जानते होंगे। कहते हैं, बहुत वर्षों की बात है, तब जयराम मुश्किल से अपने जीवन के दूसरे दशक में होगा। एक फकीर ने उससे खुश होकर दुआ दी कि पत्ती में पत्ती बाँध लेगा, तो लक्ष्मी तेरी मुट्ठी में बँध जायगी। ईश्वर जानें सच-झूठ, बीड़ी की ईजाद का यही इतिहास है। बरसों जयराम ने पत्ती में पत्ती के बंधन पर माथा

खपाया, और अंत में बीड़ी का जन्म हो गया, और जयराम एक साधारण मनुष्य से सेठ हो गया।"

"बहुत गंदी चीज है यह बीड़ी। मैं तो सफर में भी अपने बिस्तर में गुड़गुड़ी बांधनेवाला मनुष्य हूँ।" गजाननजी बोले—"अभी कितनी दूर है वह घड़ीसाज ?"

"बस, यही तो, वह बाद की दूकान।"—रामधन ने उत्तर दिया।

फैक्टरी के दरवाजे पर सिपाही पहरा दे रहा था। बाहर सड़क पर ठेलो और ट्रकों में कच्चा-पक्का माल उतारा और भरा जा रहा था। रामधन और गजानन के आगे उसी भिखारिन की छोकरी ने अपना हाथ फैलाया—"बाबूजी, कुछ दया कीजिए।" वे दोनों आगे बढ़ गए। भिखारिन फैक्टरी के आगे भीख माँगने लगी।

रामधन बोले—"भिखारिन और इतनी खूबसूरत !"

गजानन ने जवाब दिया—"यह हमारा ही पाप नहीं, तो क्या है ?"

दोनों उस दूकान के द्वार पर पहुँच गए, जिसके साइनबोर्ड में अंकित था—'भूधर ऐंड कंपनी—वाच-मेकर्स'। गजानन ने मिरजई की जेब से घड़ी निकाली, और रामधन के साथ दूकान में प्रवेश किया। दूकान बहुत बड़ी न थी, पर सुरुचि और स्वच्छता से सजी हुई थी। भूधर ने दोनों को बैठने के लिये कुरसियाँ दीं, और घड़ी खोलकर उसकी जाँच करने लगा।

सेठ जयराम—रूप और पहनावा, दोनो में एक सीधा-सादा आदमी—एक मुंशी के साथ फैक्टरी के फाटक के बाहर आता है, और ठेले में ज़ोर से बीड़ी का पार्सल पटकते हुए कुलियों से कहता है—"धीरज के साथ, बीड़ियाँ टूट गईं, तो मैं बदनाम हो जाऊँगा।" उसने मुंशी की ओर मुँह किया—"सिगरेट की तरह मैं बीड़ियों को पैकेटों में बंद करना चाहता हूँ, लेकिन इनकी यह बेडौल बनावट सुलझाए नहीं सुलझती।"

भिखारिन ने उनके सामने हाथ बढ़ाया—"सेठजी की जय हो!"

सेठजी ने मुँह फिरा लिया—"नहीं, मैं मेहनत की पूजा करता हूँ, और पैसा देकर भिखारियों का हौसला बढ़ाने के बिलकुल ख़िलाफ़ हूँ। अगर तुम राज़ी हो, तो मेरी फ़ैक्टरी में तुम्हारे काम के लिये जितनी गुंजायश है, उतनी ही तुम्हारे सुख और आराम के लिये भी।"

चंपा अपने मुख पर एक अभेद्य वेदना अंकित कर भूधर की दूकान की तरफ़ चली गई। उस समय गजानन घड़ीसाज़ को अपनी घड़ी देकर बाहर आ रहे थे। चंपा ने एक अभिमान से उनकी तरफ़ से मुख मोड़ लिया, और साहस कर भूधर की दूकान के भीतर चली गई।

"एक पैसा।"—माँगते हुए चंपा भूधर के सामने खड़ी हो गई।

भूधर कुरसी पर से उठ पड़ा—"एक पैसा? सिर्फ़ एक पैसा

से होगा क्या? इतनी बड़ी उम्र तुम्हारे आगे पड़ी हुई है। कौन हो तुम?"

"देखते नहीं आप।"

"देखकर ही तो शक बढ़ा है। दुःख और अपमान की तसवीर। मा-बाप हैं तुम्हारे?"

"नहीं, कोई नहीं।"

"कहाँ गए?"

"मैं नहीं जानती।"

"हैं, तुम तो रोने लगीं! तुम्हारा इस प्रकार दर-दर भटकना कौन सह सकता है? तुम मेरे यहाँ रहो, मैं तुम्हारा परवरिश करने को तैयार हूँ।"

जयराम सेठ ने मुंशी से कहा—"कहाँ गई वह छोकरी? उसे बुला लाओ मुंशीजी। मुझे उसे देखकर बड़ी दया आ गई है। दुनिया बड़ी ख़तरनाक है, और उस अभागिनी के पास रूप है। इसे भी भरती करो मेरी फ़ैक्टरी में, नहीं तो वह भिखारिन लूट ली जायगी।"

मुंशीजी ने देखा, चंपा एक बाल्टी लेकर नल पर पानी भरने जा रही थी। वह तुरंत ही उसके पास पहुँचे। बोले—"क्या तुमने घड़ीसाज़ के यहाँ नौकरी कर ली?"

चंपा चुपचाप पानी भरती रही।

मुंशीजी फिर बोले—"भीख माँगने से मजूरी कई दर्जे अच्छी चीज़ है। लेकिन हमारे सेठजी की फ़ैक्टरी में भरती

होने से अधिक आराम और इज़्ज़त के साथ रह सकोगी। तुम्हारी-जैसी और कई लड़कियाँ भरती है वहाँ। एक बार चलकर देखो तो सही, क्या रंग है अब उनके। भूधर के यहाँ चूल्हा फूकने और बर्तन मलने मे क्या रक्खा है। अकेला आदमी, कौन जाने, कैसी नीयत है उसकी।" मुंशीजी ने भूधर की दूकान की ओर देखा, और उसे नल की तरफ़ ग़ौर से देखता हुआ पाया।

चंपा बाल्टी लेकर उधर चली, और मुंशीजी ने झूठमूठ नल खोलकर हाथ धोने शुरू किए। चंपा ने भूधर की दूकान के पिछले हिस्से में पानी की बाल्टी रख दी, और चुपचाप जाने लगी।

"क्यों, कहाँ चलीं ?"—अधीरज से भूधर ने पूछा।

"नहीं बाबूजी, आप अकेले है घर में, मुझे डर लगता है।", जाते-जाते चंपा बोली।

"ज़रूर तुम्हें उसके मुंशी ने बहकाया है। बड़ा बदमाश है वह सेठ। उसने कई जवान लड़कियाँ बंद कर रक्खी हैं अपनी फ़ैक्टरी में, तुम्हें भी वहीं क़ैद कर देगा।"

लेकिन चंपा तेज़ी से चली ही गई। भूधर ने जब उसे बीड़ी-फैक्टरी के भीतर जाते देखा, तो प्रतिहिंसा से उसकी आँखें लाल हो गईं। उसने मेज़ पर मुट्ठी मारकर प्रतिज्ञा की—

"जयराम, अगर तेरी फ़ैक्टरी को मिट्टी में न मिला दिया, तो भूधर नाम नहीं।"

[तीन]

मुंशी चंपा को आकृष्ट कर जयराम सेठ के दफ़्तर में ले गए। वह भिखारिन सिमटती-सकुचाती हुई सेठजी के भव्य कमरे में खड़ी हो गई।

"तुम आ गईं, हमारी फ़ैक्टरी में भरती होने को। एक नया प्रकाश पड़ जायगा तुम्हारी ज़िंदगी में।" सेठजी कुर्सी से उठकर बाहर चलने लगे। उन्होंने चंपा से भी चलने का इशारा किया—"मेहनत भिखारी को भी करनी ही पड़ती है, लेकिन इज्जत खोकर। मैं तुम्हें उस समय चार आने भी दे देता, तो तुम्हारी एक शाम भी नहीं कटता। यहाँ जो कुछ तुम्हें मिलेगा, उससे सारा जन्म सुख और शांति के साथ कट जायगा।"

सेठजी चंपा को फ़ैक्टरी के एक भीतरी हिस्से में ले गए। वहाँ दो ऊँची दीवारों के घेरे में दो फाटक बने हुए थे। एक फाटक के द्वार पर पुरुष का चित्र अंकित था, वहाँ एक गोरखा सिपाही पहरे पर था। दूसरे फाटक पर एक नारी की तसवीर बनी हुई थी, वहाँ एक गोरखा-स्त्री, कमर में खुकरी लटकाए, चौकसी कर रही थी।—

जयरामजी दूसरे फाटक के भीतर घुसे, चंपा को लेकर। कई इमारतें थीं उस चहारदीवारी के अंदर। सेठजी ने एक हॉल का

द्वार खोलकर चंपा को दिखाया। चंपा ने देखा, कई लड़कियाँ साफ़-सुथरे, एक-से कपड़े पहने कुरसी पर बैठी कुछ काम कर रही हैं। मेज़ पर प्रकाश और हवा के लिये सुंदर खिड़कियाँ और स्काइलाइट हैं चारों ओर। दीवारों पर तरह-तरह के विशाल, रंगीन चित्र हैं। कहीं-कहीं सुंदर वाक्य लिखे हैं।

सेठजी को मौजूद देखकर लेडी-सुपरिंटेंडेंट फ़ौरन् ही दौड़ती हुई वहाँ आकर खड़ी हो गई।

जयराम सेठ ने चंपा से कहा—"इन तमाम लड़कियों की भी एक दिन तुम्हारी ही जैसी हालत थी। आज इनसे पूछो, तो ये जवाब देंगी, हम-सा सुखी दूसरा कोई नहीं है धरती पर। इन्हें अच्छा खाना पीना, रहने को बोर्डिंग, पहनने को कपड़े, सब मुफ्त मिलते हैं। इनकी पढ़ाई, दवा और मनोरंजन का भी इंतज़ाम है। तनख़्वाह हर महीने डाकख़ाने में, इन्हीं के नाम से जमा हो जाती है।"

उत्साह में भरकर चंपा ने पूछा—"काम क्या करना पड़ेगा?"

"बैठे बैठे बीड़ियाँ लपेटना, और क्या? होशियारी का काम हो सकता है, मशक़्क़त का नहीं।"—लेडी-सुपरिंटेंडेंट ने कहा।

सेठजी बोले—"काम क्या, मदद करने का एक बहाना है। हरएक राह चलते को भरती नहीं किया जाता। जिसे देखता हूँ, इसके भीतर कुछ है, उसी को यह सौभाग्य मिलता है। बोलो, क्या कहती हो तुम? फ़ैसला करो अपनी तक़दीर का।"

चंपा ने तुरंत उत्तर दिया—"मैं राजा हूँ।"

"सेठजी ने लेडी-सुपरिंटेंडंट की ओर देखा—"इसे भरती कर दो आज ही, अभी।"

सुपरिंटेंडेंट ने माथा झुकाया, और सेठजी चले गए। वह चंपा को अपने साथ लड़कियों के हॉस्टल के बाथ-रूम में ले गई। एक नौकरानी ने उसे तेल-साबुन, धोती और तौलिया दिया।

"अच्छी तरह नहा-धोकर अपने ये गंदे कपड़े कूड़े में फेंक देना।"

सुपरिंटेंडेंट ने उसे लड़कियों की यूनिफ़ॉर्म—नारंगी सलवार, बैंगनी कुरता और गुलाबी ओढ़नी—दी। "फिर मेरे दफ़्तर में आना।" कहकर वह चली गई।

चंपा ने नहा-धो नई यूनिफ़ॉर्म पहनी। बाल सुखा जूड़ा बाँधा। दर्पण में बार-बार अपनी छाया देख वह स्वयं अपने ऊपर मोहित हो गई। उसे निश्चय हो गया, उसके माँग खाने की आख़िरी रात बीत चुकी।

नौकरानी ने एक नई चप्पल उसके पैरों के पास रखकर कहा—"इसे पहनो अभी, छोटी-बड़ी होगी, तो फिर स्टोर में से बदल दी जायगी।"

चंपा सुसज्जित होकर सुपरिंटेंडेंट के दफ़्तर में जाकर खड़ी हो गई। उसने एक रजिस्टर को खोलते हुए पूछा—'तुम्हारा नाम?"

"चंपा।" —विनीत स्वर में उसने जवाब दिया।

"पिता का नाम ?"

"नहीं जानती।"

"माता का ?"

"वह भी नहीं मालूम।"

"तो फिर पाला किसने तुम्हें ?"

"अर्जी के खिलाफ दी गई दाताओं की भीख ने।"

"यह नहीं पूछती।"

चंपा ने कुछ याद कर कहा—"सुनती हूँ, एक भिखारिन ने मुझे कहीं पर पाया था, उसी ने पाला पोसा। जब मैं घूमने-फिरने, हँसने-बोलने लगी, तो वह चल बसी। मैं नहीं जानती उसका नाम।"

"तुम्हारी उम्र ?"

"उसका भी कुछ पता नहीं।"

सुपरिंटेंडेंट ने रजिस्टर में उसका नाम लिखकर उसे अपने साथ लिया, और दोनों हॉल के भीतर गए। वह चंपा को आठ नंबर की सीट पर ले गई, और बोली —"यही तुम्हारी सीट है, यहीं बैठकर तुम्हें काम करना होगा।"

चंपा ने देखा, उसकी मेज़ पर एक थाली में तंबाकू की पत्ती, एक डलिया में लपेटने के पत्ते, एक क़ैंची और एक तागे की गोली रक्खी है। चंपा कुरसी पर बैठने लगी।

लेडी-सुपरिंटेंडेंट हँसती हुई कहने लगी—"जल्दी नहीं, आज

तो आई ही हो। बिना गुरु के कोई विद्या नहीं आती। इन सातों लड़कियों को अपना गुरु बनाओ। इन सातों के पास बैठकर इस काम के भेद को समझना और सीखना पड़ेगा तुम्हें।" वह चली गई।

चंपा पहली लड़की के पास जाकर बैठी। उसने पूछा —"कहाँ है घर तुम्हारा?"

"कहाँ बताऊँ?"—एक ठंडी साँस लेकर चंपा ने जवाब दिया।

"शरमाती क्यों हो, हम सब ऐसी ही हैं यहाँ।"

"यह काम सिखा दो।"

"सीखने का उत्साह है, तो कोई काम मुश्किल नहीं।"

"फिर भी कोई भेद तो होता ही है।"

"मेरी समझ में सारा भेद आसन पर है। रीढ़ सीधी कर, जमकर बैठी रहोगी, तो बड़ी देर तक अच्छा काम होगा, यही बुनियाद है। अगर बुनियाद अच्छी रही, तो उस पर जो भी इमारत खड़ी होगी, सुंदर और मजबूत रहेगी।"

कुछ देर उसका काम देखकर चंपा दूसरी लड़की के पास बैठी, और उससे पूछा—"बहन, कैसा है यह काम?"

"काम खुद अच्छा-बुरा नहीं होता। मन लगाया, तो वह अच्छा ही होता है।"

"कुछ सिखाओ मुझे भी।"

"हर चीज की एक जगह और हर काम का एक समय। पत्ते

क़ैची, तंबाकू और डोरा, इनकी जगह और समय का नक़शा जिस दिन तुम्हारे दिमाग़ में ठीक-ठीक बन जायगा, काम आते कोई देर न लगेगी।"

कुछ देर उस दूसरी लड़की का भी काम देखकर चंपा तीसरी के पास पहुँची। उसने कहा—"बहन, सारी बात पत्ती को ठीक-ठीक काटने पर है, न एक सूत कम, न ज़्यादा।" उसने कई पत्ते काटकर उसे दिखाए।

चंपा ने पूछा—"रहने-खाने की कोई तकलीफ़ तो नहीं है यहाँ?"

तीसरी हँसकर बोली—"तकलीफ़ लालच बढ़ा देने से होती है। मन में संतोष है, तो दुनिया में कहीं कोई खटका नहीं। लालच होगा, तो तुम ज़्यादा पत्ती काटोगी, बीड़ी की शकल ख़राब हो जायगी। कंजूसी करोगी, तो पत्ती छोटी कटेगी, तंबाकू गिर जायगी। इसलिये न कम, न ज़्यादा।"

चंपा चौथी के पास गई। उसने शिक्षा दी—"सारी बात तंबाकू पर है। जितनी चाहिए, उतनी ही। ठूँस दोगी, तो बीड़ी ठस हो जायगी, दम नहीं खिंचेगी; ढीली छोड़ दोगी, तो जल-जलकर बुझती जायगी।"

चंपा ने पूछा—"बहन, शादी हो गई तुम्हारी?"

उसने आँखों से घूरकर, होंठों को तानकर जवाब दिया—"हिश्! शादी किसी को भी नहीं हुई यहाँ, और तुम्हें भी

इस लफ्ज़ से दूर ही रहना पड़ेगा, इस चहारदीवारी के भीतर।"

चंपा पाँचवीं के पास जा पहुँची। उसने बताया—"सारी बात बीड़ी के लपेटने मे है। न वह कसी होनी चाहिए, न ढीली।" उसने कई बीड़ियाँ लपेटकर दिखाई।

चंपा ने पूछा—"यहाँ जो बिना ब्याही लड़कियों की भरती है, इसका क्या मतलब है ?"

"मन सिर्फ काम ही में लगा रहे, और क्या ? शादी से मन में मनसूबों की उधेड़ बुन मच जाती है।"

चंपा छठी के पास पहुँची। उसने बताया—"बीड़ी की सारी अच्छाई है उसे डोर से बाँधने में। तुमने उसे काटने छाँटने, भरने-लपेटने में कैसी ही चतुराई क्यों न की हो, अगर वह ठीक-ठाक बँधी न होगी, तो सब कुछ धरा ही रह जायगा।" उसने कई बीड़ियाँ बाँधकर दिखाई।

चंपा बोली—"यह बंधन तो हुआ, मैं दूसरे बंधन की बात सोच रही हूँ। सुनती हूँ, दूसरी चहारदीवारी में ऐसे ही लड़के भी बीड़ी बनाते हैं। हमारी शादी की इजाजत नहीं, उनके क्या हाल हैं ?"

"हमारे ही जैसे। हमें एक-दूसरे को देखने, बातें करने और कमरे में जाने की सख्त मनाही है।"

"यह है असली बंधन।"

"एक कमरा है, जहाँ हम दोनो जा सकते हैं—देवी का कमरा,

वहाँ नाच-गीत और आरती के लिये हम लोग जाते हैं। लेकिन दोनो की आँखों में पट्टियाँ बँधी रहती हैं।"

"ऐसी वह कौन देवी हैं, जो भक्तों को अंधा बनाकर अपने दर्शन देती हैं?"

"देवी निकोटीन।"

"नहीं समझी।"

"तंबाकू की देवी—समुद्र-पार से आई है।"

चंपा सातवीं के पास पहुँची। उसने थोड़े में कहा—"क्या बताऊँ बहन, काम को काम ही सिखा देता है।"

चंपा अपनी सीट पर जाकर बीड़ी लपेटने लगी। पहले कुछ हिचकी वह, धीरे-धीरे उसका हाथ सध चला। लेडी-सुपरिंटेंडेंट ने आकर उसका काम देखा और कहा—"तुम तो बहुत होशियार हो। ऐसे ही काम करती रहोगी, तो कुछ ही दिन में पक्की हो जाओगी।"

पाँच बजे घंटा बजा। सब लड़कियाँ अपना-अपना काम समेटकर बाहर चलीं। चंपा भी पासवाली के साथ बातें करती निकल गई। उसने पूछा—"अब क्या होगा?"

"कपड़े बदल, हाथ-पैर धो, कुछ खा-पीकर खेल के मैदान में जायँगी, हाफ़पैंट और बनियान पहनकर। कभी ड्रिल होती है, कभी फ़ुटबाल-हॉकी।"

"बड़े अच्छे आदमी हैं सेठजी।"

"इसमें भी क्या कोई शक है? सीधे कितने हैं। कोई नया

आदमी उन्हें देखकर फैक्टरी का कुली समझता है। बीड़ी और हैंडबिल कंधे पर लादकर खुद ही पैदल शहर में चले जाते हैं, फैक्टरी का इश्तिहार देने के लिये।"

[चार]

बात बिलकुल ठीक थी। वह देखिए, उस सड़क के एक कोने पर सेठजी अपनी बीड़ियों का लेक्चर दे रहे हैं। चारों ओर से भीड़ ने उन्हें घेर रक्खा है। अजब शकल बनाई है उन्होंने—गले में लटक रही है जलते हुए सिरे की रस्सी, एक कंधे पर टँगा है बीड़ियो का, दूसरे पर बीड़ी के हैंडबिल और पोस्टरों का थैला। उनका लेक्चर सुनिए—"भाइयो, मै यह तो नहीं कहता आपसे कि बीड़ी पीना सीखो। यह बड़ी बढ़िया चीज़ है। इससे भूख लगती है, खाना हज़म होता है। यह वायु को मारती है, बादी को छाँटती है, कफ को काटती है, इससे जाड़ा जाता है, यह सुख दुख की साथी, अकेले की दोस्त है। इससे उलझे हुए मसले आनन्-फानन् मे तय होते है। पढ़ने-लिखने मे मन लगता है—अक़्ल बढ़ती है, नई सूझ उपजती है। नई आशा और नई उमंग पैदा होती है। नहीं, यह सब कुछ नहीं—इश्तिहार-बाज़ी के लटके, काला धोखा, सफेद झूठ!...मेरी अर्ज़ यही है, अगर आप बदक़िस्मती से इस मनहूस चसके मे फँसे हुए है, तो विलायती सिगरेटो मे मुल्क का करोड़ो रुपया बाहर गँवा देने के बदले अपने देश का पैसा अपने ही घर मे रखने में मदद दें। ये बीड़ियाँ आपके ही मुल्क की ईजाद है। इनमें खर्च किया

गया! एक-एक पैसा आपके ही देश के किसानों और मजदूरों में बँट जाता है।"

एक बीड़ी का बंडल थैले से निकाला उन्होंने, और हाथ में ऊँचा कर सारी भीड़ को दिखाया—"यही है वह 'जय हिंद बीड़ी' तीन रंगों में—कड़ी पीनेवालों के लिये हरे धागे में, नरम लाल में और पिपरमिंट की खुशबूदार सफ़ेद धागे में बँधी रहती हैं। यह बारीक पहचान है, समझकर खरीदिए। 'जय हिंद बीड़ी'—देश की जय भी पुकारो, और मुँह से धुआँ भी निकालो। देश की जय तभी है, जब आप उसका रुपया उसी के भीतर बहाव में रहने दें।"

जयराम एक-एक बीड़ी निकालकर सबको बाँटने लगे, और उनके गले से लटकती हुई रस्सी से सब सुलगाते चले। सेठजी बोलते भी जा रहे थे—"इसका जायक़ा कुछ ही दिनों में आपकी ज़बान पर जम जायगा। किसी तरह की मिलावट नहीं इसमें—शुद्ध और पवित्र! तमाम तंबाकू की दूकानों पर यह आपको मिलेगी। हिंदुस्तान के तमाम शहरों में इसकी एजेंसियाँ हैं।"

भीड़ में से एक छोकरे ने भी बीड़ी के लिये अपना हाथ फैलाया। जयराम ने जलती हुई रस्सी का सिरा उसकी तरफ़ बढ़ाते हुए कहा—"हटाओ हाथ, नहीं तो छुआ दूँगा यह जलता हुआ डंक। मैं तुम्हारे-जैसे छोकरों के बीड़ी पीने के सख्त खिलाफ़ हूँ।"

छोकरा अपना-सा मुँह लेकर, हतप्रभ हो वहीं खड़ा रह गया। लेक्चर खत्म हो गया था, भीड़ छँट गई थी, और सेठ जी लौटने के मनसूबे में थे। चलते-चलते उन्होंने छोकरे से कहा—"मेरे साथ चलने को तैयार हो, तो मैं तुम्हें एक नए आदमी में गढ़ दूँ।"

"कहाँ चलना पड़ेगा ?"

"मेरी बीड़ी की फ़ैक्टरी में। मुझे देखकर नहीं कह सकते तुम कि वह कितनी बड़ी है।"

छोकरे को कुछ याद पड़ा, बोला—"तैयार हूँ।"

"लेकिन यह बीड़ी पीने की गंदी आदत छोड़ देनी पड़ेगी।"

"छोड़ दूँगा।"

"और कौन है तुम्हारे ?"

"फ़क़त दम, और कोई नहीं।'

"ऐसे ही ढूँढ़े हैं मैंने। नाम तुम्हारा ?"

"नौजवान।"

"नौजवान, मैं तुझे शुद्ध परिश्रम के उजाले में ले जा रहा हूँ।"—सेठजी आगे चल रहे थे, नौजवान उनके पीछे पीछे। सेठजी ने फिर कहा—"तेरे ही जैसे मैंने वहाँ भरती किए हैं, जब तू उनकी काया-पलट देखेगा, तो दंग रह जायगा।"

नौजवान अचानक एक राहगीर के ताज़े फेंके हुए सिगरेट के टुकड़े पर झपटा। उसी समय सेठ जयराम ने सिर

घुमाया। नौजवान ने अपना हाथ उधर से खींच पैर पकड़ लिया।

"क्या हो गया?" सेठ ने पूछा।

"ठोकर लग गई।"

जयराम ताड़ गए—"नौजवान, अगर बीड़ी नहीं छोड़ सकते, तो लौट जाओ। कोई ज़बर्दस्ती नहीं है।"

"नहीं, मैं आपके साथ चलूँगा। बीड़ी छोड़ दी।"

दोनों चलते-चलते फैक्टरी के द्वार पर पहुँचे। नौकर चाकरों ने जब बड़े आदर से सेठजी को हाथ जोड़े, तो नौजवान चौंक पड़ा। उसी की बगल में प्रोफेसर जोश का भी मकान था। वह अपने मन में सोचने लगा—"लेकिन ये दोनों मेरी बीड़ी के दुश्मन क्यों हो गए। उनका रुपया तो लौटा देना पड़ा, देखूँ, इनकी फैक्टरी के क्या रंग हैं।"

सेठजी ने फाटक पर उसकी तरफ घूमकर कहा—"नौजवान, यही मेरी फैक्टरी है। बेधड़क चले आओ।"

नौजवान सेठजी के साथ उनके ऑफ़िस में गया। वहाँ सेठजी ने उससे बातचीत कर उसे जाँचा-परखा। फिर उन्होंने लड़कों के विभाग के सुपरिंटेंडेंट के पास उसे भरती कर लेने के लिये भेज दिया। उसे भी नहा-धुलाकर यूनिफ़ॉर्म पहनाई गई। रजिस्टर में उसका नाम लिखा गया, और वह बीड़ी लपेटने के हॉल में चंपा की तरह पहले लड़के के पास बैठा—

"भाई, मुझे भी यह काम सिखा दो।"

"अरे, क्या काम और क्या इसका सीखना ! "हाँ आ फँसे तुम इस जेलखाने में ?"—पहला लड़का बोला ।

नौजवान घबराया—"जेल कैसी ? क्या बढ़िया कपड़े मिले है । सुनता हूँ, खाना भी वैसा ही मिलेगा, रहने के हॉस्टल तो देख ही आया हूँ ।"

"आज़ादी की क्या कोई क़ीमत नहीं ?"

"चौबीसों घंटे बीड़ियाँ लपेटनी पड़ेगी ?"

"ऐसा तो नहीं, लेकिन इस फैक्टरी के बाहर कहीं नहीं जा सकोगे ।"

"सेठजी से वादा कर चुका हूँ । तनख्वाह भी तो मिलेगी ?"

"कुछ नहीं मिलेगी । कहते है, डाकख़ाने में जमा कर दी जाती है ।"

"रोटी, कपड़ा और मकान तो मिला । मैं समाज की जूठन और लताड़ से अपनी साँसें क़ायम रखनेवाला, पार्क की बेंचों पर रात और पुलों के नीचे बरसात काटनेवाला, उसे यह सब मिल गया, क्या यह उसकी तकदीर का जागना नहीं है ?"

लड़का हँसा—"सेठजी हम सब ऐसों ही को ढूँढ़-ढूँढ़कर यहाँ लाए हे । मतलब उनका ईश्वर जाने ।"

नौजवान दूसरे लड़के के पास गया—"मशीन की तरह तुम्हारे हाथ चल रहे हे, मुझे भी सिखा दो भाई ?"

"सीखने की सच्ची इच्छा मन में पैदा हो गई, तो फिर क्या मुश्किल है। ऐसे पत्ता काटो, इतनी तंबाकू भरो, ऐसे लपेटो, और इस तरह बाँध दो।"—लड़के ने सब हरकतें खटाखट कर, बीड़ी बनाकर रख दी।

"है कैसा यहाँ?"

"आप भले, तो जग भला।"

नौजवान तीसरे लड़के के पास गया। उसने फौरन ही काम छोड़ उसके गले में हाथ डाला—"कहो दोस्त, कहाँ घर है तुम्हारा?"

"जहाँ तुम्हारा। दिशाओं की दीवारों पर आसमान की छत!"

नौजवान की पीठ ठोककर वह बोला—"शाबाश! ऐसे ही एक दोस्त की राह बड़े अर्से से देख रहा था मैं। ये तो सब गोबर की बनावट हैं। हाथ मिलाओ।"—दोनों ने बड़ी खुशी से हाथ मिलाए।

धीरे-धीरे नौजवान ने पूछा—"दियासलाई तो नहीं है?"

लड़के ने लड़कियों के डिपार्टमेंट की दिशा में इशारा किया और कहा—"दियासलाई उस कमरे में है, लेकिन वहाँ जाने की इजाजत नहीं है।"

"क्यों नहीं है?"

"धीरे-धीरे जान लोगे।"

"तुम कैसे काम चलाते हो ?"

"छोड़ दी। चाहे, तो आदमी क्या नहीं कर सकता ?"

"ये सब लड़के संत हैं ? कोई नहीं पीता ?"

"कोई नहीं।"

"कैसे छूटेगी ?"

"जैसे हमसे छूट गई।"

"बीड़ियों के बनानेवाले हम, पीने की मनाई ?"

"बनानेवाले ही पी जायँगे, तो कमाई क्या होगी ?"

नौजवान चौथे के पास पहुँचा। जब वह उसका ध्यान न खींच सका, तो उसने खाँसकर गला साफ़ किया—"अकल !"

लड़के ने एक नज़र नौजवान को देखा, और फिर अपने काम में जुट गया। नौजवान ने उसके कंधे पर हाथ रक्खा—"देखो जी, मैं भी इसी चक्कर में आ फँसा हूँ। दो मिनट तुमसे बात करना चाहता हूँ।"

"बातों में लग जाऊँ, तो शाम को आठ हज़ार बीड़ियाँ लपेट-कर मालिक को कैसे दे सकूँगा ?"

नौजवान ने हिसाब लगाया—"एक घंटे के एक हज़ार ! ज़्यादा-से-ज़्यादा या कम-से-कम ?"

"जो मालिक हमारी इतनी फ़िक्र रखते हैं, उन्हें ज़्यादा से-ज़्यादा ही काम करके क्यों न दें ?"

"ऐसी ही तेजी से मैं भी मालिक की सेवा करना चाहता हूँ। देवता हैं, एक ही दिन में मेरा सारा हुलिया बदल दिया।"—कहते हुए वह पाँचवें लड़के के पास जा पहुँचा। कुछ देर उसका काम देखने के बाद बोला—"तुम्हारे पास दियासलाई तो नहीं है?"

उसने उत्तर दिया—"अगर तुमने यहाँ बीड़ी पी, तो यूनिफ़ॉर्म उतारकर बेइज्जती से निकाल दिए जाओगे।"

नौजवान निराश होकर छठे के पास गया और बोला—"बीड़ी पीना गंदी आदत है, तो सारे हिंदुस्तान के लिये करोड़ों बीड़ियाँ क्यों बनाई जा रही हैं यहाँ?"

"वे बूढ़ों के लिये हैं। नौजवानों के लिये नहीं।"

"बाजार में तो जो पैसा फेकता है, उसे बंडल मिल जाता है।"—कहता हुआ नौजवान आखिरी साथी के पास पहुँचा। उसने पूछा—"उस इमारत में क्या दियासलाई का गोदाम है?"

"कौन कहता है? वहाँ भी बीड़ी की ही फ़ैक्टरी है। लड़कियों का डिपार्टमेंट है।"

"वहाँ जाने की इजाजत नहीं है। वे भी यहाँ नहीं आ सकतीं?"

"नहीं।"

नौजवान ने एक ठंडी साँस लेकर कहा—"बीड़ी एक गंदी आदत, मंजूर है। लेकिन औरत और मर्द दुनिया की गाड़ी के

दो पहिए, इन्हे एक दूसरे की ओट में रख देने की बात समझ में नहीं आई !"

"काम सँभालो अपना, सुपरिंटेंडेंट आते ही होंगे।"

"एक कटी हुई पत्ती का नक़शा तो दो।" लड़के से पत्ती लेकर नौजवान अपनी सीट पर चला गया।

[पाँच]

आठ नंबर की सीट थी नौजवान की। वह बड़े ठाट से जाकर कुरसी पर बैठ गया। मेज़ पर पत्ते, तंबाकू, कैंची और धागा, सब यथास्थान रक्खे हुए थे। उसने देखा, वह मेज़ और कुरसी नई ही वहाँ रक्खी गई थी। प्रत्येक बीड़ी लपेटने-वाले के बीच में काफ़ी जगह छूटी हुई थी। हॉल की लंबाई में भी अभी कुछ सीटें लग सकती थीं, और चौड़ाई में पूरी पंक्ति-की-पंक्ति। कमरे के बीचोबीच एक बड़े संदूक में तंबाकू की पत्ती का स्टॉक था, और दूसरे में लपेटनेवाले पत्तों का। हर सीट की दीवार पर एक-एक पाटी लटकती थी, उसमें एक-एक काग़ज़ था, जिसमें नित्य की बीड़ी लपेटनेवालों की कारगुज़ारी लिखी जाती थी।

मैले-कुचैले कपड़ों में गंदे फ़ुटपाथ पर सोने और बैठने का आदी नौजवान मानो किसी पारस पत्थर के संयोग से साफ़-सुथरा और सुसज्जित होकर कुरसी पर शोभायमान हो गया। एक क्षण जीवन के उस स्वप्न का उसे अविश्वास होता, और दूसरे ही क्षण वह पुरुष के भाग्य की सराहना करता। एक नया रक्त उसकी धमनियों में सचारित हो उठा, और एक नई लहर उसके मानस में। अपने काम के प्रति उसके मन में बड़ी प्रतीति उत्पन्न हो गई।

उसने एक नज़र घुमाकर अपने उन सातों साथियों को देखा, चुपचाप बड़ी तन्मयता के साथ वे सब-के-सब अपने काम में विलीन थे। नौजवान ने मन में निश्चय किया—"क्यों नहीं मैं भी इसी तरह काम कर सकता? कुछ लिखने-पढ़ने का काम थोड़े है, जो मेरी गाड़ी अटक जाय?"

वह जमकर कुरसी पर बैठ गया। उसने क़ैंची हाथ में ली, और उस नमूने के पत्ते को एक पत्ते के ऊपर रखकर, सावधानी से उसकी बाहरी रेखा पर क़ैंची चलाकर पत्ता काट लिया, उसने उसमें तंबाकू लपेटकर बाँध दिया। "क्या मुश्किल है! हाथ और आँखों का ही तो काम है।" उसने उस पहली बीड़ी को हथेली पर रखकर परखा—"कौन कहता है, यह बीड़ी के बंडल में से ही निकली हुई नहीं है? मेरे हाथों की बनी हुई यह पहली बीड़ी! जब सड़कों पर से दूसरों की पी हुई बीड़ियाँ उठाता था, तो पीने के लिये आज़ाद था—अब बनानेवाला हुआ हूँ, तो पी नहीं सकता!"

उसके भीतर बीड़ी का अमल ज़ोर करने लगा। उसका हाथ उस बीड़ी को बिना प्रयास ही उसके होंठों तक ले जाने लगा। नौजवान ने उस हाथ को मन की ताक़त से जहाँ-का-तहाँ बाँध लिया—'धिक्कार है तुझे! ऐसे उपकारों के हुक्म को तोड़ेगा तू? कुछ दिन पहले तू नहीं पीता था, तो क्या तू जीता न था? ये तेरे सातों साथी, इनमें से कोई नहीं पीता। नहीं, तू भी नहीं पिएगा।"

उस बीड़ी को लेकर नौजवान उठा, और अपने निकटतम साथी के पास पहुँचा। उसे दिखाकर बोला—"क्यों, ठीक है?"

साथी ने बीड़ी को घुमा-फिराकर देखा—"हाँ, ठीक है। जरा तंबाकू कम लो, और थोड़ा दबाकर लपेटो। जल्दी ही आ जायगा। अभी अच्छा बनाने की कोशिश करो, चाल अपने आप बढ़ जायगी।"

"हाँ, बना लूँगा भाई, लेकिन—" नौजवान रुक गया।

"लेकिन क्या?"

"तुममें से सचमुच क्या कोई नहीं पीता? सिर्फ बनाने के ही ठेकेदार हो?"

"नहीं, कोई नहीं पीता।"

"इस हॉल के बाहर, रात-बिरात, किसी ओने-कोने में, मेरा मतलब है।"

"नहीं, कहीं नहीं, कभी नहीं। आदमी बनने से हिचकिचाते क्यों हो? एक तरफ उजाला है, दूसरी तरफ घनघोर अँधेरा—दोनों में से किसे पसंद करोगे?"

"बीड़ी के मुँह में उजाला है, पीकर काला धुआँ निकलता है इंसान के मुँह से—क्या उजाले ने ही अँधेरा नहीं पैदा किया है?"

इसी समय हॉल का मुख्य द्वार धीरे-धीरे खुला। सेठजी ने द्वार पकड़े हुए सिर्फ अपना सिर भीतर कर कहा—"खबरदार!

जिंदगी की एक-एक साँस की भारी क़ीमत है, उसे बातों में खो देना अपघात है!" सेठजी फौरन् ही द्वार बंद कर चल दिए। उनके थोड़े-से शब्द उस हॉल में गूँज उठे, और नौजवान के मन में गूँजते ही रह गए! वह तेज़ी से अपनी सीट पर आ गया।

"एक तरफ उजाला और एक तरफ अँधेरा! दोनों में से किसे पसंद करेगा?" उसके मन में साथी की आवाज़ ने अपने को दुहराया।

"उजाले में आकर अँधेरे की ओर दौड़ना नादानी है। मैं उजाले को ही पसंद करता हूँ।" वह बैठे-बैठे फिर बीड़ी बनाने लगा।

शैतान फिर उसके कानों में फुसफुसाया—"अपने मुँह में ताला देकर यह जो दूसरों के लिये धुएँ को लपेट रहे हो, यह कहाँ का इंसाफ़ है? अरे, धुआँ नाक और कान की पकड़ से तुम्हारी चोरी जाहिर कर देगा, तो एक चुटकी तंबाकू को मुँह में रख भी नहीं सकते!"

नौजवान ने उस प्रलोभन को ठुकरा दिया, और चुपचाप अपने काम में लगा रहा। नौ बजे से काम शुरू होता था। एक से दो तक छुट्टी रहती थी, दो से पाँच बजे तक फिर काम होता था। नौजवान प्रायः तीन बजे आया था। दो ही घंटे में उसने मेज़ पर सैकड़ों बीड़ियों के ढेर लगा दिए थे।

सुपरिंटेंडेंट ने आकर उसका काम देखा, और संतोष जाहिर

करते हुए कहा—"आज पहले दिन को देखते हुए तुम्हारा यह जो भी काम है, जरूर इसे बहुत अच्छा कहना चाहिए। ऐसे ही मन लगाकर काम करते रहोगे, तो कुछ ही हफ्तों में तुम सबकी बराबरी में आ जाओगे।"

सुपरिंटेंडेंट के इन उत्साह-वर्द्धक शब्दों ने नौजवान को ऊँचा उठा लिया। उसने उतनी ही नम्रता-पूर्वक उन्हें हाथ जोड़ दिए।

पाँच बजे घंटा बजा। सब लड़के काम समेटकर बाहर जाने की तैयारी करने लगे, लेकिन नौजवान अपनी धुन में बीड़ियाँ लपेटता ही जा रहा था। काम बंद कर उसके साथ मिनटों में ही हिल गया हुआ वह तीसरा लड़का उसके पास आकर बोला—"क्यों दोस्त, क्या मंशा है? तुम्हारा बिस्तर यहीं लगा दिया जाय?"

"थोड़ी-सी तंबाकू रह गई है, इसे खत्म कर लूँ।"

"तंबाकू कभी खत्म नहीं होगी। तुम्हारी मेज़ पर खत्म होने के बाद हॉल के बड़े संदूक़ में है, उसके बाद फ़ैक्टरी के गोदामों में अनगिनती बोरे हैं। उसके बाद किसान के घर में जो तंबाकू के बीज हैं, उनमें तंबाकू की पत्तियाँ हैं, और उसके खेत में जो तंबाकू के पेड़ हैं, उनमें उसके बीज हैं। इस चक्कर का आख़िरी सिरा तुम्हें कहीं न मिलेगा। इस बाक़ी तंबाकू को उस बड़े संदूक़ में डाल दो। यह आप-से-आप खत्म हो जायगी।" कहते हुए उसने वह तंबाकू ले जाकर बड़े संदूक़ में उलट दी।

नौजवान ने अपने परिश्रम के ढेर पर संतोष की दृष्टि की। जीवन में आज ही उसका यह प्रथम निर्माण था। उसने लौट-कर अपने पिछले जीवन को देखा, क्या वह सब एक ध्वंस नहीं था? स्वास्थ्य और नवीन आयु पाकर भीख माँगना! दूसरे की दया पर जीवन धारण करना!

साथी बोला—"चलो, हम भी चलें। मुँह-हाथ धो कपड़े बदलेंगे। चाय के साथ कुछ नाश्ता मिलेगा, फिर खेलने की आजादी। चलो, सेठजी पाँच बजे के बाद एक मिनट भी किसी को काम में देखना पसन्द नहीं करते। वह कहते हैं, जो कामदार खेल या मनोरंजन से अपना थकान नहीं मिटा सकता, वह दूसरे दिन काम में जरूर सुस्ती या बीमारी लेकर जायगा। वक़्त की पाबंदी पर भी वह बहुत ज़ोर देते हैं।"

"इन बीड़ियों का क्या होगा?"

"ऐसे ही छोड़कर चल दो। दूसरे लोग आकर, इनकी गिनती कर इन्हें कार्ड और रजिस्टर में दर्ज करेंगे, और ये बीड़ियाँ यहाँ से पैकिंग-डिपार्टमेंट में चली जायँगी।"

बाहर जाते हुए नौजवान ने उससे पूछा—"क्यों दोस्त, उनके खेलने का भी है कुछ इंतजाम?"

"क्यों नहीं! हमारी ही बग़ल में उनकी भी फ़ील्ड है, लेकिन बीच की दीवार काफी ऊँची ही नहीं, उस पर टूटी हुई बोतलों के टुकड़े भी जड़े हुए हैं।"

नौजवान ने कुछ गंभीर होने के बाद पूछा—"खेलने के बाद?"

"पढ़ाई-लिखाई का घंटा।"

"फिर?"

"देवी के मंदिर में आरती, फिर खाने का घंटा। इसके बाद फिर कुछ देर मनोरंजन—रेडियो, अखबार और बातचीत, फिर सोने का घंटा।"

"हर चीज घंटे में बँधी हुई!" नौजवान बोला—"भिखारी के जीवन में किसी चीज का कोई समय ही नहीं। खाना-पीना, भूख-प्यास, सोना-जागना, हँसना-रोना—सबकी एक साथ खिचड़ी। जब भूख लगती है, तब खाना नसीब नहीं, जब पेट भरा, तब झोली भी भरी। दिन-भर खाते रहना और दिन-भर भूखों मरना, दिन-भर सोते-सोते जागते रहना। हे परमेश्वर, यह भी क्या जीवन है! कहीं घर नहीं, और सभी जगह अपना घर!"

"अब तो दूसरी दुनिया में आ पहुँचे हो, अब क्या तरसते हो उसके लिये? नाम क्या है तुम्हारा?"

"नौजवान, और तुम्हारा?"

"बिच्छू!"

"बिच्छू?"—नौजवान चौंक पड़ा।

"क्यों? हाँ, सेठजी ने रजिस्टर में मेरा नाम विजय लिखाया है, लेकिन साथी सब बिच्छू ही कहते हैं। बिच्छू और विजय, दोनो नाम मैंने तुम्हारे आगे रख दिए हैं—तुम्हारी मौज, जिससे भी पुकारो।"

नौजवान हॉस्टल में गया। हाथ-मुँह धोने के बाद कपड़े बदले, नाश्ता कर खेल के मैदान में पहुँचा। यहाँ तक तो बड़ी मौज से कटा, लेकिन जब पढ़ाई-लिखाई का घंटा बजा, तो नौजवान सिटपिटाया।

बिच्छू ने उसे साहस दिलाते हुए कहा—"नौजवान, घबराने की कोई बात नहीं ; मैं भी पढ़ने-लिखने को पहले बड़ा भारी हाऊ समझता था। लेकिन मास्टरजी बड़े भले आदमी हैं। ऐसी सफ़ाई से पढ़ाते हैं कि खेल के मैदान और स्कूल के कमरे में कभी-कभी कोई फ़र्क़ ही नहीं जान पड़ता।"

"किसी तरह उससे छुटकारा नहीं मिल सकता ? मैं उतनी देर फिर बीड़ियाँ लपेटने को तैयार हूँ।"

"क्या बकते हो ? 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के तमाम कायदे-क़ानून पत्थर की लकीर हैं। किसी को एक रत्ती-भर भी छूट नहीं दी जाती। अरे, चलो भी तो। मास्टरजी को देखकर तुम खुश हो जाओगे।"

गया नौजवान—लेकिन पढ़ाई-लिखाई उसे ऐसी भयानक नहीं दिखाई दी, जैसी उसने समझ रक्खी थी। आज पहला दिन था। उसे दवात-क़लम, काग़ज़-किताब, सब कुछ मिले। रजिस्टर में उसका नाम लिखा गया, और उसकी हाज़िरी ली गई।

इसके बाद वह सबसे बढ़िया प्रोग्राम की घड़ी आई। आरती का घंटा बजा, और सब आरती के लिये तैयार हो गए।

ड्रिल-मास्टर ने आज्ञा दी—"फाल इन !"

सब लड़के एक सीध में खड़े हो गए। ड्रिल-मास्टर ने तब एक-एक कर सबकी आँखों में पट्टी बाँध दी। । तब दूसरा हुक्म दिया—"राइट टर्न !" सब दाहने घूम गए। "मार्च !" सब चल पड़े।

उधर ड्रिल-मास्टरनी ने भी लड़कियों की आँखों में पट्टी बाँधकर आज्ञा दी—"लेफ्ट टर्न !"……"मार्च !" तमाम लड़कियाँ भी चल पड़ीं।

दोनो विभागों के सदर फाटकों के बीच में जो रास्ता बाहर से आता था, वही आगे बढ़कर देवी के मंदिर को जाता था। मंदिर के बाहर मधुर स्वरों में नौबत बज रही थी। क्रमशः दोनो दल मार्च करते हुए वहाँ आए। मंदिर का वाद्य वहाँ सुनाई देने लगा था स्पष्ट। ड्रिल-मास्टर और मास्टरनी ने अपने-अपने जत्थे की दिशा बदलने की आज्ञा के साथ कहा—"डांस !"

यहाँ से वे लोग संगीत की ताल में नाचते हुए मंदिर को जाते थे। मंदिर के दो प्रवेश-द्वार थे। लड़के दाहने द्वार से उसके भीतर जाते थे, और लड़कियाँ बाएँ से।

देवी का भव्य मंदिर ! चारों ओर रंग-बिरंगे बिजली के बल्ब जल रहे थे, धूपाधारों में मधुर सुगंधि !

एक ऊँचे मंच पर छत्र के नीचे सुशोभित देवी की प्रतिमा थी। उसके एक हाथ में एक मशाल और दूसरे में तंबाकू के पौधे की शाखा। कहते हैं, इस देवी ने सेठजी को स्वप्न में दर्शन दिए थे,

और उन्होंने इसे योरप के किसी मूर्तिकार से तैयार कराया था। उसके वस्त्रालंकारों में कोई आकर्षण नहीं थी। एक विचित्र जानवर उसका वाहन था—प्रागैतिहासिक पैरोडैक्टिल से मिलता-जुलता।

दोनों दल नाचते हुए आकर देवी के दाहने-बाएँ खड़े हो गए। ड्रिल-मास्टरों ने उन्हें रुक जाने की आज्ञा दी। नौजवान का आज यह पहला दिन था। इस अंधी पूजा में उसे बड़ा आनंद आ रहा था। गिरता-पड़ता, हाथ-पैरों से टटोलता-टटोलता आखिर वह भी पहुँच गया देवी के मंदिर में।

कभी-कभी आरती के समय वहाँ सेठजी भी पहुँच जाते थे। उस दिन एक व्याख्यान जरूर देते आरती के बाद। देवी के एक तरफ पुजारीजी हाथ में आरती लेकर खड़े हुए, और एक तरफ सुशोभित हुए सेठ जयरामजी।

अब बाहर की देसी नौबत हो गई बंद, और भीतर विलायती बाजों में बजने लगी आरती की विलायती ट्यून, मगर उसके बोल हिंदुस्तानी ही थे। पुजारीजी ने आरती करनी शुरू की, और तमाम उपस्थित लोगों ने हाथ जोड़कर आरती गाई।

आरती समाप्त होने पर सबको प्रसाद बाँटा गया। सेठजी ने अपना लेक्चर देना शुरू किया—

"मेरी प्यारी संतानो, इस देवी के मंदिर में तुम रोज आते हो। तुम कहते होगे, देवी कैसी है, हमने तो कभी उसके दर्शन ही नहीं किए, लेकिन तुम्हें विश्वास करना चाहिए। विश्वास हमेशा

ही अंधा होता है। अभ्यास से उसमें प्रकाश पैदा हो जाता है। देवी के सामने यह जो तुम्हें अंधा बनाया जाता है, इसका एक सीधा-सा मतलब है। आँख हमारा सबसे बड़ी धोखा देनेवाली इंद्रिय है। योगी जब आत्मा को ढूंढता है, तो बाहर जगत् की रंगीन चमक में नहीं, मन के अँधेरे में। इसके सिवा ब्रह्मचर्य बहुत बड़ी शक्ति है। फूल खिल जाने पर ही बाग की शोभा बढ़ाता है। कच्ची कलियाँ तोड़ना मूर्खता की निशानी है। मैं तुम्हारा बहुत बड़ा हितचिन्तक हूँ। इसलिये मेरा प्रसाद हुई इस पट्टी को तुम अंधापन न समझो, इससे तुम जीवन की बड़ी ठोकरों से बचोगे—इसके भीतर तुम्हारे लिये बहुत बड़े प्रकाश की लौ जल रही है।"

सबने तालियाँ बजाईं। सेठजी का लेक्चर समाप्त हुआ। फिर संगीत की ताल में सब जैसे आए थे, वैसे ही चले गए।

[छ]

पंडित गजानन अभी तक लिहाफ ओढ़े सो ही रहे हैं। रात दो बजे तक किसी सेठ का वर्ष-फल बनाते ही रह गए थे। उनकी चारपाई के बराबर दीवार पर श्रीकृष्ण भगवान् का बहुत बड़ा चित्र चौखट में जड़ा हुआ लटक रहा है, और वहीं, नीचे—एक टेबुल पर, दीवार के सहारे—पंडितजी की गुड़गुड़ी भी विश्राम पा रही है।

उनकी श्रीमती नहा-धो, [illegible] तुलसी की परिक्रमा कर अब खाना पका रही है। पंडितजी उठें, तो चाय बने। दूध भी बिना उबला रक्खा था। वह जरा अन्यमनस्क हुई थीं कि बिल्ली ने दूध में मुँह डाल दिया। खीझकर उनका हाथ पड़ा चूल्हे की जलती लकड़ी पर, उसे खींचकर भागती हुई बिल्ली पर दे मारा। बिल्ली तो बचकर निकल गई, लकड़ी खुले हुए दरवाज़े से होकर पहुँची पंडितजी के कमरे में।

कोने में स्टूल के ऊपर तश्तरी से ढका हुआ पानी का लोटा रक्खा था। लकड़ी उस लोटे से टकराई, और ज़ोर का ठनाका हुआ।

उस समय पंडितजी की नाक बज रही थी, गहरी नींद में, वह झंकार पाशुपतास्त्र की टंकार सी मालूम दी उन्हें। नींद टूट गई,

घबराकर उठ बैठे। उसी समय श्रीमतीजी दाखिल हुईं, अपनी लकड़ी ले जाने को।

गजानन बोले—"क्या मुझे उठाने को यह कोई नई प्रभाती थी? खूब बची खोपड़ी!"

सावित्री ने लोटे को सीधा कर लकड़ी हाथ में ली—"बात की भी कोई तुक होनी चाहिए। लकड़ी इस कोने में और चारपाई तुम्हारी उस कोने में।"

"लकड़ी छटककर भी तो इधर आ सकती है।"

"सूर्य सिर पर आ गए। सारी दुनिया अपने कारोबार में लग गई, लेकिन आपके सपने अभी तक नहीं टूटे!"

"ओ हो! अब समझा, तो उन्हीं को तोड़ने के लिये आपने यह चाँदमारी की थी?·····रात को चार बजे तक काम करता रहा, तुम्हें क्या मालूम!"

श्रीमतीजी लकड़ी हाथ में तान, आँखें मटकाकर चलती बनीं। गजाननजी ने जँभाई ली। श्रीकृष्ण के पैरों के पास रक्खी हुई गुड़गुड़ी को हाथ जोड़कर कहते हैं—

"त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव;
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव!"

श्रीमती फिर कुछ लेने के लिये वहाँ आती हैं। उन्हें हाथ जोड़े

देख कहती है—"मैं समझती थी, आज क्या हो गया, जो भगवान् की उठते ही स्तुति हो रहा है। यह तो निगोड़ी गुडगुड़ी रक्खी है यहाँ! ऐसी भक्ति अगर भगवान् में होती, तो अब तक साक्षात् हो गया होता उनका।"

गजानन गुड़गुड़ी उठाकर बोले—"तो क्या तुम समझती हो, मेरी इस गुड़गुड़ी में कोई भगवान् ही नहीं है। अरे, इसमें तीनो देवता हैं—तीनो लोक सहित। इस नारियल के पेट में जो जल भरा है, वही क्षीर-सागर है—उसमें विष्णु का निवास है। उनकी नाभि से जो यह नली ऊपर को गई है, यह कमल-नाल है, उसमें यह चिलम रूपी कमल का फूल खिला है, इसी में वेदों के पिता ब्रह्मा पैदा होते हैं। इसकी आग ही रुद्र-संहार का प्रतीक है। इससे जो धुआँ निकलता है, वह उनका सर्प है।"

श्रीमती ऊबकर चली जाती है। उनके पीछे-पीछे चिलम उलट, उसमें नई तंबाकू भर गजानन भी चले जाते हैं रसोई-घर में। श्रीमतीजी चौके में चली गई थीं। गजानन दूर से बोले—"एक कोयला दे दो बहूरानी!"

"ख़बरदार, जो तुम इस गंदी चीज़ को मेरे चौके में ले आए, तो ठीक न होगा।"

"अरे, तुम इसे गंदा कहती हो, तमाम वेद-पुराण, कला-साहित्य तो इसी की दम लगाकर लिखे गए हैं।"

"चुप रहो। वेदों के समय में इसका नाम भी था कहीं? यह तो हाल की ईजाद है, और हिंदोस्तान में तो यह उसकी

घोर दासता के समय में आया है।"—चिमटा बजाकर श्रीमती बोलीं।

"अच्छा इतिहास पढ़ा तुमने! अरे, यह तो जब समुद्र मंथन हुआ था, तभी निकल आया था। [illegible] ने अपने गले में धारण कर रक्खा था, फिर संसार की भलाई के लिये बड़े-बड़े राष्ट्रों को सौंप दिया, और राजाओं के महलों में होता हुआ आज यह ग़रीबों के झोपड़ों में भी उजाला कर रहा है।"

श्रीमती ने चूल्हे में से चिमटे की मदद से कोयले निकाले, और पंडितजी को देती हुई बोलीं—"लो, मैं नहीं सुनना चाहती आपकी बक-बक।"

पंडितजी कोयले फूंकते-फूंकते अपनी चारपाई पर जा पहुंचे, और फिर लिहाफ़ ओढ़कर गुड़गुड़ाने लगे। एक मनसूबे पर दूसरे मनसूबे का कुतुबमीनार उठा रहे थे।

थोड़ी ही देर में फिर श्रीमतीजी आ पहुंचीं—"चाकू भी देखा आपने?"

"नहीं तो।"—धुआँ फेंककर गजाननजी ने होंठों में हरकत पैदा की।

इतने ही में श्रीमती की नजर जो लिहाफ़ पर पड़ी, तो वह कूदती हुई चिल्ला उठीं—"है! यह नया लिहाफ़ भी जलाकर भस्म कर दिया तुमने!"

"नहीं, नहीं! कहाँ, कहाँ?"—लिहाफ़ को उलट पुलट वह चारपाई पर से नीचे कूद गए।

पत्नी ने लिहाफ का जला हुआ हिस्सा सामने दिखाकर कहा—"यह देखिए।"

गुड़गुड़ी में से एक कश और गुड़गुड़ाकर पंडितजी बोले—"ऊँऽहूँऽऽ, हरगिज नहीं। मैंने कब जलाया यह?"

"चौबीसों घंटे तुम्हारी यह गुड़गुड़ी बजती रहती है।"

"अरे, यह तो दिल की धुकधुकी है। यह न बजे, तो फिर जिंदा कैसे रहूँ?"

"शरम आनी चाहिए। तुमने नहीं जलाया, तो क्या मैंने जलाया?"

"अरे, यह भी संभव हो सकता है, अभी तुमने जलती हुई लकड़ी नहीं फेंकी थी। उससे कोई चिनगारी आ गई होगी।"

"आज का जला है यह?"—श्रीमती ने वह जला हुआ भाग ढूँढ़कर उनकी आँखों के सामने रख दिया।

"चूल्हे में से जली लकड़ी खींचकर मारने की तुम्हारी पुरानी आदत है। पहले किसी दिन पड़ गई होगी चिनगारी।"

पत्नी ने स्वर का सप्तक ऊँचा किया—"तुम्हारी चिलम के कोयले से ही जला है यह। तुम्हें मालूम था यह, मुझसे छिपाते चले आए, लेकिन आज मुझ पर खुल ही पड़ी बात!"

"अच्छा, ज्यादा हल्ला न करो, मुहल्लेवाले आ पहुँचेंगे कहीं। लो, कान पकड़ता हूँ।"—कहकर गजानन ने गुड़गुड़ी दूर रख दोनों हाथों से दोनों कान पकड़ लिए।

"सुबह उठ, नहा-धोकर भगवान का स्तुति-कीर्तन होना चाहिए या इस मनहूस अमल की पूजा ?"

"पूजा तो भगवान की ही करता हूँ, यह तो स्वांसों का बहाना है। दिखाए नहीं, अभी मैंने तीनों देखना तुम्हें इस गुड़गुड़ी में।"

"धिक्कार है इस नशे की गुलामी को ! थू !"

पंडितजी अपने ही घर में यह अपमान न सह सके। बड़े जोश में बोले—"कैसी गुलामी ? गजानन पंडित स्वतन्त्र है। मैं किसी भी समय इसे छोड़ सकता हूँ।" उन्होंने गुड़गुड़ी में एक दम और लगाया।

"बहुत देखे ऐसे छोड़ देनेवाले ! न-जाने कितनी बार तुम ऐसी प्रतिज्ञा कर चुके हो।"

गजानन ने फिर चिलम बजाई—"अच्छा, यह बात है। तू मेरे मनोबल का मजाक़ उड़ाती है ? मैं अपने मन की मुट्ठी में नहीं हूँ, मेरा मन मेरी मुट्ठी में है।"

गृहिणी ने सिर पर धोती का पल्ला सँभालते हुए ताना मारा—"हूँऽ, पारसाल होली में क़सम खाते हुए नहीं कहा था तुमने कि लो, होली के साथ मेरा अमल भी जल गया। लेकिन एक सप्ताह भी नहीं निभा सके।"

गजानन का क्रोध भड़क उठा। पत्नी का वह व्यंग्य बड़ा तीखा चुभ गया प्राणों में। वह बोले—"अच्छा, ऐसा कहती है तू ? ले !" उन्होंने चिलम उठाकर फ़र्श पर दे मारी, नारियल भी—"जो आज से तंबाकू पिए, उसका सर्व—"

श्रीमती ने अपना हाथ रखकर उन्हें आगे नहीं बोलने दिया—
"हैं! हैं! यह क्या कहते हो?"

"और क्या कहूँ फिर?"—उसका हाथ हटा दिया इन्होंने झटककर।

"कहो, जो आज से तंबाकू पिए, वह बपुंलस की नाली का पानी पिए।"

पहले वह ऐसी क़सम खाने को तैयार नहीं हुए, अंत में पत्नी ने ऐसा कहलाकर ही छोड़ा उन्हें। गजानन ने क़सम तो खा ली, बड़ी आसान थी! पत्नी दौड़कर झाड़ू ले आई, और उस गंदगी के शेष चिह्नों को समेटकर उसने कूड़े में फेंक दिया। एक टीन के डिब्बे में जो उनकी तंबाकू का संग्रह था, उसे भी बहा आई। उसने भगवान् को हाथ जोड़े—"हे स्वामी, इन्हें शक्ति दो कि यह अपनी प्रतिज्ञा पर अविचल रहें।"

श्रीमती विजय का दर्प लेकर रसोई-घर में चली गईं, और गजानन सोचने लगे—"अचानक क्या कर बैठा यह मैं?"

इंद्रियों के जाल से उन्मुक्त होकर पंडित गजानन की मानसिकता जाग उठी—"मनुष्य के जीवन की यह अति पवित्र साँस इस ज़हरीले धुएँ से अशक्त कर देने के लिये नहीं है। पत्नी की इसमें क्या प्रतिहिंसा और कौन-सा स्वार्थ है? तुम्हारे पिता ने कभी तंबाकू का स्पर्श भी नहीं किया था, वह इसको छूत मानते थे।"

वह उत्साह बटोरकर अपनी मेज़ पर बैठे। रातें का बनाया

वर्ष-फल दुहराने लगे। कुछ देर बाद उन्हें जान पड़ा, जैसे कहीं कुछ भूल हो गई है, कहीं कुछ उनका खो गया। फिर याद आई—"नहीं, भूला नहीं हूँ। तंबाकू छोड़ दी, वही भ्रमित कर रही है।"

उन्होंने बड़े मोह के साथ गुड़गुड़ी रखने के ठौर को देखा। वह शून्य था, उस टीन के डिब्बे पर दृष्टि की, जो रिक्त होने से पहले ही भर दिया जाता था। वह मन-ही-मन बोले—"एकाग्रता तो अवश्य मिलती थी इससे?—नहीं, एकाग्रता एक मानसिक प्रतिक्रिया है। नशे से बुद्धि के द्वार खुलते हैं? झूठी बात। उससे उस पर परदा पड़ जाता है।"

गजाननजी वर्ष-फल दूर रखकर उठ गए। किसी काम में उनका मन नहीं लगा। वह कमरे में टहलने लगे। अंत में अधीर होकर उन्होंने भगवान् के चित्र की शरण ली। उनके चरणों में शीश झुकाकर बोले—"हे प्रभो, रक्षा करो, त्राहि माम्:—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव;
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव!"

इसी समय पत्नी ने रसोई घर से मधु-सिक्त, मृदु गुंजन में कहा—"सुनते हो, रसोई तैयार हो गई, नहा लो। कहो, तो पानी गरम कर दूँ।"

[सात]

धीरे-धीरे शाम होने को आई। खा पीकर पंडितजी लेट गए थे। नींद भी अच्छी तरह नहीं आई। आधे जागते, आधे सोते सपनों में भी कभी प्रतिज्ञा बनाते और कभी तोड़ते रहे।

पत्नी ने आकर पूछा—"क्यों, तबीयत कैसी है?"

"ठीक है।"

"उठो न फिर, कब तक सोते रहोगे?"

पंडितजी ने एक ठंडी साँस ली।

"साहस रखिए, दो-चार दिन तक अगर आपसे छूट गई, तो दो-चार हफ्ते तक छूट जाना कुछ कठिन नहीं। जहाँ दो चार हफ्ते आप इससे बच गए, आपने इसे जीत लिया, तो मार लिया मैदान! आज पहला दिन है। मैं जान रही हूँ, आप बड़ी भयानक लड़ाई लड़ रहे हैं। लेकिन इस विजय का जो पुरस्कार आपको मिलेगा, उससे आपका समस्त जीवन प्रकाश से चमक उठेगा।"

लेकिन गजाननजी को पत्नी के इन शब्दों से कोई स्फूर्ति नहीं मिली। शय्या पर वह जैसे-के-तैसे ही पड़े रहे।

बड़ी अधीरता-पूर्वक गृहिणी ने कहा—"चाय बना ला दूँ?"

"एक कांटे से दूसरा काँटा निकालने के लिये क्या? अभी

तो पिला गई हो। बड़ा फ़र्क़ है इन दोनों र[illegible]यों में श्रीमतीजी !' पत्नी के हाथ के सहारे से पंडितजी बिस्तर पर उठ बैठे।

इसी समय बाहर द्वार खटखटाया किसी ने—"पंडितजी !"

"आया।"—पंडितजी शय्या छोड़कर उठे।

पत्नी ने शय्या ठीक की, और पंडितजी के द्वार खोलने से पहले अंदर चली गई।

पंडितजी ने आगंतुक को बैठने के लिये कुरसी दी। वह बोला—"बैठूँगा नहीं, जल्दी में हूँ। मेरी दी हुई जन्म-कुंडली ?"

"भाई, यहाँ तो अपनी जन्म-कुंडली बन रही है।"

"कुशल तो है ? क्या तबीयत ठीक नहीं है ? कुछ चेहरा उतरा हुआ तो जान पड़ता है। क्या हो गया ?"

"अजी, हुआ तो कुछ नहीं। आज जोश में आकर मैंने तंबाकू न पीने की क़सम खा ली, इसी से ज़रा गड़बड़ा गया हूँ। बड़ी गंदी आदत है। लेकिन बड़ी बेचैनी-सी मालूम कर रहा हूँ।"

"सुरती खा लीजिए, अभी ठीक हो जायगी तबीयत।"

"नहीं भाई, तंबाकू और सुरती में कोई अंतर थोड़े है। इस प्रकार अपने को धोखा देना कोई ठीक बात नहीं है।"

पंडितजी को प्रतिज्ञा में अटल देखकर उसने बात टालकर पूछा—"तो फिर कब आऊँ मैं ?"

"देखो भाई, कुछ बता नहीं सकता। तबीयत ठीक हुई नहीं कि उसी में हाथ लगाऊँगा।"—गजानन ने मुँह ढक लिया।

उस मनुष्य के चले जाने पर सावित्री दिन-भर पति की सेवा में लगी रही। शाम होने को आई। गजानन शय्या छोड़कर उठे—"तुम्हारे भीतर पति की विशेष भक्ति जाग उठी। देखता हूँ, तंबाकू छोड़कर शायद मैं घाटे में नहीं रहूँगा।" वह जूता पहनने लगे—"ज़रा बाहर जाकर लोगों के बीच में घूम-फिर आऊँ। जी बहल जायगा।"

"नहीं।" सावित्री ने उनका हाथ पकड़ लिया—"बाहर न जाओ। दुनिया उठनेवाले का साथ नहीं देती। लोग तुम्हें बहकाकर फिर सिगरेट पिला देंगे।"

"ठीक कहती हो।"—गजानन जूता खोलकर चारपाई पर बैठ गए।

संध्या होते-होते उनके पेट में दर्द हो गया, और पेट फूल गया। सावित्री ने उन्हें अजवायन-सोंठ की चाय पिलाई, उससे कुछ भी नहीं हुआ।

रामधन वकील ने आकर कहा—"जोश में आकर तंबाकू छोड़ दी, उसी का फल है यह। तीस-चालीस बरस का पाला हुआ अमल क्या इस तरह एकाएक छोड़ दिया जाता है? अभी एक दम लगाओ, सारी बीमारी मिनटों में उड़ जायगी।"

"वकील साहब, आपको मेरा साहस बढ़ाना चाहिए कि इस तरह हिम्मत तोड़ देनी उचित है?"

हँसकर रामधन ने कहा—"अच्छी बात है, पंडितजी, अगर

आपसे यह छूट गई, तो मैं भी आपका साथ दूँगा। मैं भी इसे छोड़कर ही रहूँगा।"

ज्यों-ज्यों रात होती गई, त्यों-त्यों गजाननजी की बेचैनी बढ़ती गई। सावित्री पड़ोस के एक वैद्यजी को बुला लाई। वैद्यजी ने नाड़ी को जाँचकर कहा—"फ़िक्र की कोई बात नहीं है। अचानक जो इन्होंने तंबाकू छोड़ दी, इसी की खराबी है। दवा भेज दूँगा अभी, चिलम में भरकर पिलानी पड़ेगी।"

सावित्री ने कहा—"चिलम भी तोड़ दी इन्होंने।"

वैद्यजी ने कहा—"मैं अपने नौकर के हाथ भेज दूँगा, दवा के साथ।"

वैद्यजी के जाने पर गजानन बोले—"सावित्री, तुम देवी हो। तुमने मेरी गंदी आदत छुड़ा दी, फिर यह क्या कर रही हो? खबरदार, विश्वासघात मत करना।"

सावित्री ने चिंता के साथ पूछा—"यह आप क्या कह रहे हैं?"

"बिलकुल होश में हूँ। यह वैद्यजी तुम्हें धोखा देना चाहते हैं, और मुझे बंगुलस की नाली का पानी पिला देने की मंशा है इनकी।"

वैद्यजी का नौकर जब चिलम और दवा दे गया, तो सावित्री ने दोनों चीज़ें सँभालकर रख दीं। कुछ देर शांति रही। फिर गजानन ने शोर करना शुरू किया—"मरा, मरा, ओह, बड़ा दर्द हो गया! दवा नहीं भेजी वैद्यजी ने?"

"भेजी है, अभी बनाकर लाती हूँ।"—सावित्री चिलम लेकर चली गई।

गजानन फिर चिल्लाने लगे—"लाओ सावित्री" लाओ; जो भी दवा मिलती है, लाओ। किसी तरह प्राण बचाओ।"

सावित्री चिलम में दवा भरकर उसे फूकती हुई चली आई तुरंत ही—"ले आई।"

गजानन ने पड़े-पड़े मुँह खोल दिया।

"नहीं, ऐसे नहीं; उठ जाइए।"

गजानन उठ बैठे। सावित्री ने उनके हाथों में चिलम दे दी।

"यह क्या ? तुम तो फिर मेरे हाथों में वही चिलम दे रही हो, जिसे थूक चुका हूँ।"

"चिलम है, तो क्या हुआ ? इसमें तो दवा भर लाई हूँ, दवा।"

गजानन ने एक दम लगाया। कुछ ज्ञान हुआ उन्हें। उन्होंने भूमि पर थूक दिया। चिलम लौटा दी। वह फिर बिस्तर पर लेट गए—"सावित्री, तुम बहुत सीधी—सरला नारी हो। संसार के छल-प्रपंच से तुम्हारी बिलकुल पहचान नहीं। मुझे मर जाना पसंद है, लेकिन मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ूँगा—नहीं तोड़ूँगा।"

सावित्री रोने लगी—"तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, पी लो। तंबाकू नहीं, यह दवा है। चिलम पुरानी है, उसी की गंध आई होगी। वैद्यजी को आपको धोखा देने से मतलब ? एक ही दम लगाइए अभी आपकी तबीयत ठीक हो जायगी।"

"नहीं, यह दवा नहीं, वही जहर की पर्ची है। प्रतिज्ञा कर ली, तो फिर इसे पीकर जीना धिक्कार है!"

सावित्री ने फिर आग्रह किया। गजानन को गुस्सा चढ़ गया, और इन्होंने पत्नी के हाथ से चिलम छीनकर फ़र्श पर पटक दी। सावित्री फिर रोने लगी।

"रोओ नहीं सावित्री, साहस रक्खो। मैं ऐसे ही ठीक हो जाऊँगा। भगवान से प्रार्थना करो।"

सावित्री पतिदेवता के पैरों पर गिरकर बोली—"आप धन्य हैं; अब मुझे पक्का विश्वास हो गया, आप तंबाकू ज़रूर छोड़ देंगे, इस बार। मैं आपकी दृढ़ता पर सिर झुकाती हूँ, और अपनी निर्बलता की क्षमा माँगती हूँ। भगवान् आपकी सहायता करें।"

गजानन ने आधी हँसी के साथ कहा—"हँ-हँ-हँ! किस तरह यह चोर फिर हमारे घर में घुस आना चाहता था!"

सावित्री बड़े मनोयोग से पति के पैर दबाने लगी। गजानन ने कहा—"सो जाओ सावित्री, रात बहुत बीत गई। मैं अब ठीक हूँ।"

धीरे-धीरे कई दिन बीत गए, और गजानन अपनी दृढ़ इच्छा-शक्ति के बल से बराबर अग्नि-परीक्षा में सफल होते गए।

एक दिन वकील साहब ने आकर कहा—"कैसी तबीयत है?"

"लड़ रहा हूँ, वकील साहब, शरीर के कष्टों से और मान-

सिक वेदना से भी। आज सात दिन हो गए तंबाकू छोड़े—ऐसा जान पड़ता है, जैसे सात युग बीत गए।"

"पेट का दर्द कैसा है?"

"ठीक है। मैं दबनेवाला नहीं हूँ उससे। एक मित्र ने दंड पेलने की राय दी है।"

"उसके लिये अब आपकी अवस्था है क्या? मैं आपको बताता हूँ, यहाँ एक डॉक्टर जोश हैं। वह तंबाकू के तत्त्वज्ञ हैं। तंबाकू छुड़ाने के लिये वह लोगों को मदद करते हैं, और उसके जहर से उपजी बुराइयों का इलाज भी।"

"कहाँ है उनका दवाखाना?"

"स्टेशन-रोड पर 'भूधर-वाच-कंपनी' के पास ही तो, 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की दूसरी बगल में।"

"ठीक है। यह घड़ी कुछ सुस्त हो गई है, इसे भी ठीक करा लाऊँगा, और प्रोफेसर जोश से भी बातें कर आऊँगा। देखें, वह क्या कहते हैं।"

शाम को गजानन भूधर घड़ीसाज़ की दूकान पर पहुँचे, तो देखा, दूकान भीतर से बंद! भूधर भीतरी कमरे में किसी मशीन के जोड़-तोड़ लगाने में व्यस्त था। गजानन ने दरवाजा भड़-भड़ाया—"अजी, दरवाजा खोलो। भीतर क्या कर रहे हो? जरूरी काम है।"

भूधर ने आकर दरवाजा खोला, और असंयत स्वर में कहा—"क्या काम है?"

गजानन दूकान के भीतर घुस गए—"दूकान की यह क्या हालत बना रक्खी है आपने ? अभी थोड़े ही दिन की बात है, जब मैं आपके यहाँ से यह घड़ी बनवा ले गया था, तब यहाँ कुछ और रौनक़ थी। यह घड़ी बहुत सुस्त जा रही है।"

"मैंने घड़ीसाजी छोड़ दी है।"

"क्यों ? क्यों ?"—गजानन भीतरी कमरे में चले गए। यह देखने को कि द्वार बंद कर भूधर कौन-सा नया धंदा करने लगा !"

"मेरा शौक़ ! मेरी इच्छा !"

"लेकिन घड़ीसाजी छोड़ दी है आपने, उसे भूले तो नहीं हैं न ? यह पुरानी कसर है आपकी, इसे तो ठीक ही करना पड़ेगा आपको। क्या देर लगेगी, जरा खोलकर सुई सरका देनी ही तो है न ?"

बड़ी विवशता से भूधर ने घड़ी हाथ में ली—"कितने मिनट सुस्त हो जाती है ?"

"दस।"—कहते-कहते गजानन पेट पकड़कर भूमि पर बैठ गए।

"क्यों ? क्यों ? क्या हो गया ?"

"पेट में दर्द ! बोलो मत, घड़ी ठीक कर दो। यह दर्द भी ठीक हो जायगा अभी।"

भूधर ने घड़ी खोलकर सुई खिसका दी। उतनी ही देर में गजाननजी ने भूमि पर कई तरह के आसन कर अपना दर्द

भी ठीक कर लिया। घड़ी मिरज़ई की जेब में रखकर उन्होंने कहा—"बात ऐसी है, मैं तीस साल से तंबाकू पीता था, एक दम छोड़ दी। लोग कहते हैं, इसी से मेरी तबीयत खराब हो गई।"

भूधर अपनी मशीन का फ़्लाइह्वील उठाकर बोला—"उस बग़ल में हैं एक डॉक्टर साहब, आप उनसे बातें करें। लेकिन ज़रा ठहरिएं। भगवान् ने आपको मेरे मतलब से भी मेरे पास भेजा है। कृपा कर आप इस डंडे को पकड़ लीजिए। मैं बड़ी देर से अकेले इस पहिए को इसमें चढ़ा रहा था, डंडा खिसककर बार-बार मुझे नाकामयाब कर रहा था।"

गजानन ने डंडा पकड़ा, और भूधर ने दोनो हाथों से उठाया फ़्लाइह्वील। बाहर से आवाज़ आई—"अजी, भूधरजी!"

पहिया फ़िट करते-करते भूधर ने जवाब दिया—"क्या है?"

भीतर घुसते हुए वह मनुष्य कहता हुआ आया—"दूकान में न-जाने कितने दिन से झाड़ू भी नहीं दी। यह कैसी मशीन ठीक कर रहे हो? बन गई मेरी घड़ी?"

"दो-चार दिन में ले जाना।"

"यही सुनते-सुनते साल-भर हो गया पूरा। क्या हो गया तुम्हें? सभी की यही शिकायत है।"

"फ़ुरसत होगी, तभी तो दूँगा न? जल्दी है, तो ले जाओ घड़ी, किसी दूसरे से बनवा लेना।"

"क्या हो गया तुम्हारे दिमाग़ को? खाने को तो हरएक को चाहिए।"

"तो क्या तुम्हारे यहाँ भीख माँगने आता हूँ ?"

"भाई, तुम तो नाराज़ हो गए ! भलाई की ही बात कही मैंने ।"

"तो क्या मैं दिन-भर सोता हूँ ? चोरी करता या जुआ खेलता हूँ ? सातों दिन मजूरी करता हूँ । दूकान की सजावट पर ध्यान नहीं देता हूँ, तो क्या ? समय ही कहाँ है मेरे पास ? जो गाहक नहीं आना चाहता मेरे पास, न आए ।"

"अच्छा, चौथे दिन आऊँगा ।" कहकर ग्राहक चल दिया ।

बड़े मनोयोग से गजानन अभी तक मशीन का निरीक्षण कर रहे थे । भूधर ने कहा—"यह बीड़ी बनाने की मशीन है, पंडितजी !"

घृणा से उससे दूर हटते हुए गजानन ने कहा—"'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की होगी ।"

बिगड़कर भूधर बोला—"धरी है उनकी ! मैं ख़ुद ईजाद कर रहा हूँ ।"

पंडितजी ने मन के भावों में अपनी गलती का सुधार अंकित किया ।

भूधर ने एक-एक पुरजा दिखाकर बताया—"यहाँ तंबाकू भर दी जायगी, इधर पत्ते, यहाँ तागा—इस तरह पैर से चलाई जायगी ।"

"वाह ! तुम तो बहुत अच्छा दिमाग़ रखते हो । किसी और चीज़ की ईजाद करते । हाथ तो दिखाओ अपना ।"

भूधर ने हथेली फैला दी। गजानन ने अपने हाथ में लेकर उसे कुछ देर तक जाँचा। कुछ गिनती की, कुछ सोचा-विचारा। फिर कहा—"तुम्हारे पास तो खूब रुपया होना चाहिए था।"

"रुपया कोई चीज नहीं है, पंडितजी! मनुष्य के पास मनुष्यता होनी चाहिए। मेरे पड़ोसी यह जयराम सेठ, इनके पास रुपया है, लेकिन मनुष्यता—कोसों दूर है इनसे।"

गजानन बोले, हाथ की रेखाओं पर अपनी उँगली दौड़ाकर—"पैसा हो भी, तो कहाँ से? लक्ष्मी का घर खुला है, चारों तरफ से।"

"पैसे की बात छोड़िए, कब बन जायगी यह मशीन?"

"भूधर तुम्हारा नाम, धन राशि, दशा ठीक है। शनिश्चर ग्यारहवें घर में है। बृहस्पति और बुध ऐसी जगह पर हैं, जिनसे तुम्हें जरूर लाभ होगा। मंगल व्यापार के लिये बहुत अच्छा है।"

"मशीन कब पूरी होगी?"

"बहुत जल्दी तो कह रहा हूँ। जन्म-कुंडली भेज देना मेरे यहाँ, तो तारीख बता दूँगा, तारीख।"—कहकर गजाननजी प्रोफ़ेसर जोश के यहाँ चल दिए।

[आठ]

एंटी-निकोटीन-सोसाइटी के सभा-भवन में प्रोफेसर एक सज्जन पर अपनी सभा के उद्देश्यों और उपयोगों की लकड़ी घुमा रहे हैं। कई अलमारियाँ दीवारों के सहारे लगी हुई है। किसी मे दवा की शीशियाँ, प्रयोग के यंत्र है। किसी मे निकोटीन के जहर से मरे हुए कीड़े-मकोड़े तथा छोटे छोटे जीव-जंतु है, काच की बोतलों और बरणियों में बंद—स्पिरिट से सुरक्षित। सबके बाहर लेबुल लगे हुए है। उनमे लिखा है—निकोटीन के कितने प्रतिशत में किस प्राणी ने कितनी देर में प्राण गँवाए।

एक अलमारी मे तंबाकू से संबंध रखनेवाली कई भाषाओं की पुस्तकों के सिवा कुछ संदर्भ-ग्रंथ भी है, और एक प्रोफेसर जोश के प्रचारात्मक पुस्तिकाओं, हैंडबिलों और पोस्टरों से भरी पड़ी है। एक में सभा के लेख और हिसाब-किताब की फाइल है।

मेज़ पर लिखने-पढ़ने का सामान और टेलीफोन है। एक ट्रे में चिट्ठी-पत्रियाँ है। आने-जानेवालों के लिये कमरे मे कुरसियाँ और सोफ़े पड़े हैं।

प्रोफेसर जोश साहब के हाथ में उनकी लिखी और प्रकाशित की हुई एक पुस्तिका है। साथ में बैठे हुए सज्जन बड़े मनायोग से उनका भाषण सुन रहे हैं।

"तंबाकू का यह मनहूस जहर नई दुनिया की खोज के साथ ही पुरानी दुनिया को मिला है। इन चार सौ सालों मे ही इसने सारे संसार को जकड़ लिया है। कोई देश छूटा नहीं, जहाँ इसकी खेती न होती हो, और कोई घर ऐसा नहीं, जहाँ किसी-न-किसी रूप मे इसका इस्तेमाल न होता हो। अगर इसी चाल से यह बढ़ता गया, तो अगले चार सौ सालों में यह हमारे दूध-पीते बच्चों और पालतू जानवरों के लिये भी जरूरी हो जायगा। क्यों साहब ?"—जोश ने उस व्यक्ति की ओर देखकर पूछा।

व्यक्ति के मन में कुछ संशय था जरूर, पर उसने प्रभावित होकर सिर हिलाया—"बेशक, डॉक्टर साहब !"

"बहुत जल्दी—" चुटकी बजाकर डॉक्टर जोश ने कहा—"दुनिया को इस जानी दुश्मन के खिलाफ मोरचा बनाना होगा। यह स्कीम बनाई है मैंने, इसमें ऐसे संगठन की रूप-रेखा है, जिससे हर शहर-गाँव के महलों-झोपड़ियों में रहनेवाले स्त्री-पुरुषों मे फैले हुए इस जहर की जड़ खोदकर नष्ट कर दी जा सके। घर ले जाकर इसे पढ़िए नहीं, इसका मनन कीजिए।" प्रोफेसर जोश ने वह पैंफलेट उस सज्जन को दे दिया।

सज्जन उसके पेज उलटने-पलटने लगे।

जोश बोले—"मेरे कोई संतान नहीं, न मेरा आजन्म शादी करने का ही कोई विचार है। चचा से विरासत में पाई हुई मैंने अपनी तमाम संपत्ति इस सोसाइटी के नाम कर दी है।

आपको ज्ञात ही है, कॉलेज की प्रोफ़ेसरी छोड़कर अपना दिमाग और शरीर भी इसी को भेंट चढ़ा दिया है। यह सोसाइटी एक विशाल देशव्यापी संस्था में बदल जाय, हर जिले और गाँव में लोग इसके मेंबर हो जायँ—यही मेरे जीवन का उद्देश्य है।"

"होगा, डॉक्टर साहब, भलाई सूर्य के प्रकाश की तरह फैलती है।"

"इस पैंफ़लेट का आखिरी पेज परफ़ोरेटेड है, उसमें दस्तखत कर फाड़िए, और मुझे दीजिए।"

कुछ घबराकर सज्जन बोले—"क्यों?"

"आपको मेंबर बनाकर यह पेज यहाँ फ़ाइल कर दिया जायगा। मेंबरी की कोई फ़ीस नहीं है, सिर्फ़ आपको किसी भी रूप में तंबाकू का सेवन करना न होगा, और महीने में कम-से-कम एक आदमी की तंबाकू छुड़ाकर सोसाइटी में उसका नाम और पता लिखा देना होगा।"

"पहले इसे घर ले जाकर पढ़ लेता हूँ। फिर दस्तखत कर आपको दे जाऊँगा, डॉक्टर साहब। आप जानते ही हैं, मैं तंबाकू खाता-पीता नहीं हूँ। रह गई महीने में एक आदमी को चेला बना लेने की बात—" वह व्यक्ति कुछ ढीला होकर बोला।

"साहस रखने से सब कुछ हो जायगा।"—प्रोफ़ेसर जोश ने कुरसी से उठकर जानेवाले को बिदा दी।

उसी समय पंडित गजानन ने प्रवेश किया—"प्रोफ़ेसर जोश साहब?"

"हाँ, इसी सेवक का नाम है। आइए।"—जोश ने उन्हें कुरसी दी।

कमरे में चारों ओर चित्र, नक़शे, अंक, शीशियाँ और किताबों को देखकर पंडित गजाननजी बहुत प्रभावित हो गए, और प्रोफ़ेसर साहब को हाथ जोड़ बड़ी नम्रता से बोले—"डॉक्टर साहब, मैं आपकी शरण में हूँ, मेरी रक्षा कीजिए।"

"क्या, क्या, बात तो कहो।"

"मैं पिछले तीस साल से तंबाकू पीता था। दिन की तो बात ही क्या, रात को भी उठ-उठकर दम लगाता था। अचानक, आज आठ दिन हो गए, मैंने उसे छोड़ दिया।"

डॉक्टर जोश ने गजानन की पीठ ठोककर कहा—"शाबाश! आपने मेरी किताब पढ़ी होगी।"

"नहीं डॉक्टर साहब, ख़ुद ही चोर को पहचानकर फ़ैसला किया।"

"तब तो तुम और भी प्रशंसा के योग्य हो। दुनिया को असल में ऐसे ही वीरों की जरूरत है। इस निकोटीन के जबड़े से निकला हुआ बहुत बड़ा बहादुर है।"

गजानन ने पूछा—"निकोटीन क्या है?"

"तंबाकू की पत्ती में जो जहर रहता है, उसी का नाम निकोटीन है। निकोट फ़्रांस का राजदूत था पुर्तगाल में। वहाँ से इस जहर की पत्ती को ले जाकर इसने फ़्रांस में फैलाया, फिर और देशों में। पुर्तगाल में इसे कोलंबस अमेरिका से लाए थे। सारा

संसार इस अमल के पीछे गारत होता जा रहा है। उसे पता ही नहीं है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक कोई इसे खाता-पीता है, और कोई सूँघता है। किसी को होश नहीं है—यह राक्षसी हमारे बल-बुद्धि, तेज-तंदुरुस्ती, रुपया-पैसा, सबको चौपट कर रही है।"

"ओ हो हो!"—गजानन ने मुँह पर वेदना की रेखाएँ खींच-कर कहा—"कोई खतरा तो नहीं है, डॉक्टर साहब, मैंने अचानक छोड़ दी।" वह अपना पेट दबाने लगे।

"खतरा कैसा? जहर को जिस घड़ी से छोड़ दोगे, फ़ायदा-ही-फ़ायदा है!"

"बहुत दिन की पुरानी आदत—"

"गंदी आदत नई और स्वच्छ आदत से बदल जायगी। मन हमारे शरीर का राजा है, उसे क़ाबू में रक्खो। इस दुश्मन द्वारा तीस बरस से पराजित होकर तुम अब छूटे हो। इसकी मुक्ति के ये आठ दिन क्या तुम्हें आठ जन्म-से नहीं जान पड़ते?"

"हाँ, डॉक्टर साहब, एक पागल-सा हो गया हूँ। क्या भूला? क्या भूला? निरंतर यही चेतना बनी रहती है।"

"लड़ाई जारी रक्खो वीर! कुछ ही दिन और, फिर यह दुश्मन परास्त हो जायगा, और तुम्हें यह भी याद न रहेगी कि तंबाकू नाम की कोई पत्ती धरती पर है भी या नहीं। उस दिन तुम्हारा सारा जगत् बदल जायगा। तुम्हारे मुख पर नई ज्योति छा जायगी, और मन में नवीन शक्ति!"

सुनते-सुनते अचानक गजानन पेट पकड़ फ़र्श पर बैठ

गए—"ओ हो हो! डॉक्टर साहब, फिर दर्द हो गया पेट में।"

डॉक्टर जोश ने उनको हाथ का सहारा देकर ऊपर उठा लिया—"कुछ नहीं, सिर्फ एक ख़याल है तुम्हारा, एक वहम जमा लिया है तुमने अपने मन में।"

"वहम? वहम कैसा डॉक्टर साहब?" तोंद नंगा कर गजानन ने उसे हाथ से बजाया—"पेट फूल गया। खाना हजम नहीं हो रहा है, डॉक्टर साहब! यह वहम है! आप इसे ख़याल कहते हैं?"

"ख़याल ही से तो साँची का स्तूप, ताजमहल का गुंबद, मिस्र के पिरामिड धरती पर फुला दिए गए, आपके पेट का फूलना तो सिर्फ एक-दो सूत की बात होगी। प्रतिज्ञा को याद रक्खो, अगर वह टूट गई, तो फिर दूसरी बार मौक़ा न मिलेगा इस जन्म में।"

"प्रतिज्ञा पर तो जमा ही हूँ, डॉक्टर साहब। कुछ इलाज भी तो कीजिए न। दवा दीजिए, कुछ दवा। बता दीजिए, मैं बाजार से ख़रीद लूँगा।"

हँसते हुए डॉक्टर साहब बोले—"सब कुछ हो जायगा पंडितजी, आप धीरज से इस कुरसी पर बैठिए तो सही। मैं अभी एक इंजेक्शन दूँगा। सिर्फ आप अपनी प्रतिज्ञा को सँभाले रखिए। यह दर्द मैं भगा दूँगा, यह मेरे ज़िम्मे रहा।"

गजानन ख़ुश होकर कुरसी पर बैठ गए। जोश बोले—"आपको जरा भी नहीं घबराना चाहिए। अब आप एक ऐसे

व्यक्ति के संसर्ग में आ गए हैं, जो इस ज़हर की नस नस से वाकिफ़ है। जिसने अपनी बीसी ज़िंदगी इस निकोटीन की रिसर्च में बिताई है, और जो अपना बाकी जीवन भी इसी को भेंट देने के लिये कटिबद्ध है।" डॉक्टर जोश इंजेक्शन के लिये पिचकारी और सुई के जोड़ मिलाने लगे।

"किस किस बीमारी का इलाज करते हैं आप?"

"सिर्फ़ तम्बाकू से उपजी हुई खराबियों का इलाज करता हूँ, लेकिन मेरे समय का अधिकांश खर्च होता है उसके विरुद्ध प्रचार में। मैं तम्बाकू का गंदी आदत छुड़ाने के लिए सभाएँ करता हूँ, लेक्चर देता हूँ—साहित्य मुफ्त बाँटता हूँ।"

"गुज़र के लिये आमदनी हो जाती है?"

जोश हँसे—"आमदनी नहीं है मेरा लक्ष्य! मुझे खर्च करने के लिये सम्पत्ति प्राप्त है, और मैं खर्च करता हूँ। भूली हुई जनता को राह पर लाना ही मेरा धर्म है।" जोश ने पिचकारी में दवा भर ली थी।

"कोई लालच नहीं! बहुत बड़े आदमी होंगे आप। एक दिन मैं आपका हाथ देखूँगा।"

जोश बोले—"मेरे हाथ की यह सुई देखिए अभी तो। आइए, इंजेक्शन तैयार है।"

डॉक्टर साहब ने इंजेक्शन लगाया, और पाँच-सात मिनट चुपचाप पड़े रहने को कहा। गजानन ने आज्ञा पालन की। धीरे-धीरे उनके शरीर में एक दूसरी ही लहर प्रवाहित हो गई।

पेट का तनाव और भारीपन कुछ गिरता-सा प्रतीत हुआ। पाँच मिनट बाद वह उठ खड़े हुए, और पेट पर हाथ फेरते हुए बोले—"विश्वास तो था, तभी आया भी था। जरूर आप मुझे अच्छा कर देंगे, डॉक्टर साहब। बहुत कुछ अच्छा तो मैं अभी हो गया हूँ। भगवान् आपका भला करें।"

"अब आप घर जाइए, पाँच सात दिन देखिए। अगर फिर कुछ बीमारी उभर आई, तो फिर इंजेक्शन लगा दूँगा। विश्वास बढ़ाते रहिए कि अब कुछ होगा नहीं।"

"परहेज ?"

"सिर्फ एक, वही, अब भूलकर भी उस जहर को मुँह न लगाना।"

"वह तो मानी हुई बात है।" गजानन ने मिरजई के भीतर हाथ डालकर कहा—"दवा के दाम ?"

"अभी कुछ नहीं, जब बीमारी जड़ से चली जायगी, तब लूँगा।"

"बता तो दीजिए, कितने होंगे ?"

"सिक्के में नहीं, सेवा की भावना में लूँगा। आपको पास-पड़ोस में घर घर अपना नमूना दिखाकर कहना होगा कि तंबाकू एक भयानक जहर है, उसके पंजे से छूटकर मैंने आर्थिक, शारीरिक और मानसिक लाभ उठाया है। हर तंबाकू के व्यवहार करनेवाले से आपको कहना पड़ेगा कि यह भयानक अभिशाप है—इसे जितनी जल्दी हो सके, छोड़ दें।"

"ज़रूर डॉक्टर साहब, आपने मुझे नया जीवन दिया; इसके बदले में यह तो बड़े पुण्य का काम है—मैं आज ही से इसका आरंभ करता हूँ।"

जोश ने अलमारी में से अपनी एक पुस्तिका निकालकर गजानन को देते हुए कहा—"इसे घर ले जाकर पढ़िए, और याद कीजिए। किस तरह हमारे घर, समाज और राष्ट्र की जड़ पर तंबाकू की दीमक लगी है—इसमें खूब अच्छी तरह समझाया गया है। वह किस तरह छोड़ी जा सकती है, इसके उपाय भी बताए गए हैं।"

हाथ जोड़कर गजानन ने वह पुस्तिका ली, और जाने लगे। डॉक्टर जोश उन्हें बाहर तक पहुँचाते हुए बोले—"आपने यह ज़हर छोड़ दिया, आप एक नए जगत् में दाखिल हुए हैं, उसमें अधिक-से-अधिक लोगों को प्रवेश कराना आपका पवित्र कर्तव्य है। पंडितजी, मानवता की सेवा से बढ़कर और कोई पूजा-पाठ नहीं है। अगर आपने घर के आस-पास इसके ख़िलाफ़ आंदोलन की लहर उठा दी, तो मेरी दवा के दाम मुझे पूरे-पूरे मिल जायँगे।"

"धन्य हैं आप डॉक्टर साहब! यह कहने की बात है क्या? मेरी आत्मा मुझे प्रेरणा देती है इसके लिये।"—गजानन फिर हाथ जोड़कर बिदा हो गए।

जीत हो गई ! देखो, मैं फिर जवान हो जाऊँगा। तुम भी अगर जल्दी बुड्ढे हो जाना नहीं चाहते, तो निश्चय करो, और फेंक दो इसे। मेरा उदाहरण लो, मैं जन्म-भर का तंबाकू पीने वाला; मैंने छोड़ दिया इसे, बिलकुल छोड़ दिया। विश्वास करो मेरी बातों का।"

मित्र हँसी रोकता हुआ बोला—"कितने दिन हो गए ?"

"पूरा एक सप्ताह !"

"देखिए, यह छूटती नहीं है। कई बार छोड़ चुका हूँ मैं। जब बार-बार शुरू करनी पड़ती है, तो फिर झूठी प्रतिज्ञा से क्यों मन को दुर्बल करूँ मैं ?"

"हिम्मत रक्खो, छूट जायगी। मुझे देखो।"

"क्या देखूँ आपको ? राग-द्वेष तो छूटता नहीं, सिगरेट से क्या बिगड़ता है ? भगवान् की उपजाई हुई एक पत्ती, क्यों आप इसके शत्रु हो गए ?"

"भगवान् ने और भी तो अनेक जहर उपजाए हैं।"

मित्र की सिगरेट का आखिरी हिस्सा रह गया था। उन्होंने उसमें एक दम और लगाया। उसे फेंकते हुए बोले—"लीजिए, मैंने यह छोड़ दी।"

"प्रतिज्ञा करो—शाबाश !"

"प्रतिज्ञा करता हूँ, आज से हर सिगरेट में मैं इतना हिस्सा हर बार छोड़ दूँगा।"—मित्र हँसता हुआ चला गया।

पंडितजी ने उसे तर्जनी दिखाकर कहा—"अच्छा, अभी तो

मुझे इसे छोड़े सात ही दिन हुए हैं, जब सात महीने हो जायँगे, तो फिर तुम्हारा गला दबाऊँगा।"

गजाननजी आगे बढ़े। कुछ दूर पर एक और परिचित मिले। उन्होंने पूछा—"क्यों पंडितजी, कैसी है तबीयत ?"

"ठीक है।"

"मेरी समझ में तंबाकू छोड़ने ही से आप बीमार पड़े हैं, छोड़िए मत उसे।"

गजानन हँसे—"मैं बिलकुल चंगा हो गया। डॉक्टर जोश के यहाँ से आ रहा हूँ। बड़ा नेक आदमी है। फ़ीस का एक पैसा भी तो नहीं लिया। तुम भी छोड़ दो। न कुछ मेहनत करनी पड़ेगी, न कुछ कष्ट ही होगा। यह किताब है, देखो।"

परिचित ने किताब की ओर बिना देखे ही पैर खिसकाते हुए कहा—"पहले आप तो छोड़ दीजिए, फिर मैं भी छोड़ दूँगा।"

गजानन ने परिचित की पीठ पर कहा—"मैं तो छोड़ ही चुका हूँ।" उन्होंने कुछ सुना भी या नहीं, भगवान् जानें।

कुछ दूर जाने पर पंडितजी को एक चौदह-पंद्रह वर्ष का लड़का बीड़ी पीता हुआ मिला। उन्होंने उसके हाथ से बीड़ी छीन ली। लड़का भौचक्का होकर उन्हें देखता रह गया !

गजानन उसे लताड़कर बोले—"तुम्हें लज्जा आनी चाहिए। यह कच्ची उमर तुम्हारी, और मुँह से धुआँ निकालते हो ? तंदुरुस्ती और पैसा, दोनों फुँक जायँगे इस धुएँ में !"

लड़के ने उनके हाथ से बीड़ी छीन ली, और तमककर

बोला—"तंदुरुस्ती मेरी, और पैसा मेरे बाप का—तुम कौन होते हो बीच में बोलनेवाले ? तुम्हें पीने की जरूरत हो, तो सीधे मुँह से माँगो। जूठा क्या पाते हो, अच्छी दूँगा।"

गजानन उसका मुँह देखते रह गए, और वह लड़का विजय का दर्प लेकर चलता बना। 'संसार अपने हितकारियों को नहीं पहचान सकता। लेकिन डॉक्टर साहब का क़र्ज़ तो अदा करना ही पड़ेगा।' यही सोचते सोचते पंडितजी अपने घर को लौट रहे थे। फिर उनकी किसी से उस समय कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई।

वह घर के नज़दीक पहुँच गए। तंबाकूवाले की दूकान मार्ग में दिखाई दी। गजानन उधर से दृष्टि फिराकर जाना चाहते थे कि दूर ही से उसने पुकारा—"नमस्ते पंडितजी, क्या बात है ? आज बहुत दिनों में दिखाई दिए ? कहीं बाहर गए थे, क्या ?"

"अजी, कहाँ गया ? बीमार पड़ गया था। अभी डाक्टर साहब के यहाँ से आ रहा हूँ।"

"क्या हो गया था ?"

"पेट फूल गया था।"

"तंबाकू कहाँ से खरीद रहे हैं आजकल ?"

"वह छोड़ दी।"

"है ! तंबाकू पीने की उमर है आपकी। तभी आपकी तबीयत ख़राब हो गई। यह ग़लती मत करना। वायु भर जायगी पेट में, तो फिर मुश्किल में पड़ जायँगे। लो, चिलम उठाकर पीजिए

तो सही, क्या बढ़िया नमूना है। अभी तबीयत ठीक न हो जाय, तो तुम्हारे पैरों के नीचे से निकल जाऊँगा।"

"नहीं भाई, डॉक्टर साहब कहते हैं, तंबाकू पीने ही से यह बीमारी हुई है।"

"कौन है वह डॉक्टर, कोई लौंडा होगा।"

"हिश्, डाक्टर जोश, उन्हें तुम लौंडा कहते हो ? अरे, उन्होंने प्रोफेसरी को लात मार दी, और अब दुनिया का भला करने पर कमर बाँधी है।" गजानन ने उनकी लिखी किताब तंबाकूवाले को दिखाकर कहा—"यह किताब लिखी है उन्होंने।"

"दे जाओ मुझे। तंबाकू लपेटकर घर-घर पहुँचा दूँगा।"

"'बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद ?' जानते हो, क्या है इस किताब में ? इस किताब में तमाम सिगरेट तंबाकू की दूकानों में ताला लगा देने की बात है।"

तंबाकूवाला गजानन का मुँह ताककर बोला—"नहीं समझा।"

"इसमें तंबाकू से उपजनेवाली बुराइयों का वर्णन है, और उसे छुड़ाने के उपाय हैं।"—जाते-जाते गजानन बोले।

"इसे न कोई छोड़नेवाला है, न कोई छुड़ानेवाला। झख मारकर फिर इसी दूकान पर आना पड़ेगा, आओगे कैसे नहीं ?"

गजानन का अहंकार सशक्त होकर उनके कानों में गूँजा—"नहीं, गजानन अब कदापि न आएगा।"

पत्नी बड़ी घबराहट से द्वार पर उनकी प्रतीक्षा कर रही थी।

पति की गति में उत्साह और चेहरे पर चमक पाकर वह फूली न समाई, बोली—"मिले डॉक्टर साहब ?"

"साक्षात् देवता हैं। जैसे ताली बजाकर चिड़िया उड़ा दी जाती है, ऐसे ही उन्होंने मेरी बीमारी भगा दी !"

"अच्छे हो गए आप ?"—सावित्री की प्रसन्नता असीम हो उठी।

"हाँ। और, एक पैसा भी नहीं लिया उन्होंने। यह देखो, यह किताब उन्हीं की लिखी हुई है।"—गजानन आराम-कुरसी पर बैठ गए, और पुस्तक के पेज उलटने लगे।

"दवा क्या दी ?"

गजानन जोर-जोर से पुस्तक पढ़ने लगे—"यह हलाहल जहर की पत्ती—एक चम्मच में इसके साठ हजार बीज आते हैं। अगर ये बो दिए जायँ, तो उन पौधों से निकाला गया निकोटीन उतने ही लाख आदमियों को बड़ी आसानी से, कुछ ही देर में, जान से मार डाले। भारत में इसे आए अभी तीन ही सौ वर्ष हुए हैं। इतने थोड़े समय में इसका इतना प्रचार हो गया है कि अगर सारे भारत में एक दिन के पीकर फेंके हुए सिगरेट बीड़ी के टुकड़े जमा कर उनकी नोक से नोक मिला दी जाय, तो वे एक बार भूमध्य-रेखा पर सारी दुनिया को लपेट लें !"

गजानन आश्चर्य की मुद्रा में कुरसी छोड़कर उठ गए—"और, इसमें सुरती, सुँघनी और तंबाकू की कोई गिनती ही नहीं है ! है न सावित्री, बड़ी बढ़िया किताब ! अभी फिर पढ़ेंगे इसे।

बड़े जोर की भूख लगी है मुझे, जल्दी से पहले कुछ खाना बनाओ।"

सावित्री भोजन बनाने में लगी। गजानन उसका उत्साह बढ़ाते हुए बोले—"अपनी तम्बाकू तो छूट ही चुकी है, अब सारे मुहल्ले से इस धुएँ की जड़ उखाड़नी बाकी रही। भगवान् का धन्यवाद है; जिसने मुझे डॉक्टर जोश-जैसे सहायक और तुम-जैसी धर्मपत्नी दी।"

खा-पीकर गजानन ने सारी पुस्तिका पत्नी को सुनाकर ही दम लिया। शाम को वह रामधन वकील की बैठक में जा पहुँचे।

जाते ही उन्होंने पूछा—"क्यों पंडितजी, क्या हाल है?"

"ठीक हूँ।"

रामधन को विश्वास नहीं हुआ—"आपने तंबाकू तो छोड़ दी, तंबाकू ने आपको छोड़ा था नहीं?"

"उसने भी छोड़ दिया वकील साहब, और अब मेरा विश्वास यहाँ तक बढ़ गया है कि मैं आपके पान में से तंबाकू की पत्ती और आपके होठों पर से यह सिगरेट की बत्ती—इन दोनों को उड़ाकर ही चैन लूँगा।"

"लेकिन पंडितजी, मुझे क्या जरूरत है इसे छोड़ने की। न यह मुझे भारी लगती है, न मैं इसे बुरा ही समझता हूँ।"

"नहीं, नहीं, ऐसा न कहिए वकील साहब। आप पढ़े लिखे आदमी, हमारे देश का करोड़ों रुपया इसके बहाने समुद्र-पार विदेश चला जाता है।"

"आप ही तो वह एक श्लोक सुनाते थे—'स्वदेशो भुवनत्रयम्।' क्या देश और क्या विदेश, पंडितजी, दृष्टि को ऊँचा उठाइए। रेल, तार, रेडियो तथा जलीय और हवाई जहाजों से सारी दुनिया सिमटकर एक होती जा रही है। सारी मानवता—एक होना चाहिए।"

"लक्ष्य वही है—निकोटीन एक ऐसा ज़हर है, जिसने तमाम जातियों का स्वास्थ्य चौपट कर दिया है। प्रत्येक राष्ट्रवादी का यह पवित्र कर्तव्य होना चाहिए कि इस भयानक राक्षस को सबसे पहले अपने देश से निकाल बाहर करे।" गजानन ने वह पुस्तिका वकील साहब के हाथ में रख दी।

वकील साहब ने हँसते हुए उस पुस्तक के आवरण में पढ़ा—'ज़हर की पत्ती'—"हाँ, मैंने देखी है यह किताब।"

"बड़े भयानक अंक इसमें दिए गए हैं, वकील साहब।"

"अंकों का क्या भरोसा?"

"अंकों का भरोसा कैसे नहीं? वकील होकर आप क्या बात करते हैं? अंकों पर तमाम बिज़िनेस, बैंक और सरकारें चल रही हैं।"

"मेरा दूसरा मतलब है।"

"डॉक्टर साहब कहते हैं, अगर मेरी स्कीम के हिसाब से सारे देश में तंबाकू के ख़िलाफ़ संगठन हो जाय, और सब सच्चाई से काम करें, तथा अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहें, तो सिर्फ़ दस ही साल में भारत में एक भी प्राणी तंबाकू का व्यवहार करनेवाला

न रहेगा। अगर हमने इस जहर का परित्याग कर दिया, तो संसार का प्रत्येक राष्ट्र भारत से प्रेरणा लेकर इसी मार्ग का अनुसरण करेगा।"

"असंभव है, असंभव है।"

"आप ही ने एक दिन कहा था, 'असंभव' शब्द मूर्खों के शब्द-कोष में मिलता है।"

"वह कहने की बात है, पंडितजी, 'असंभव' से विहीन शब्द-कोष अभी तक किसी राष्ट्र की भाषा में नहीं छपा है। बात व्यावहारिक होने से महत्त्व रखती है।"

"आश्चर्य है, इतने गंदे और भयानक अमल के विरुद्ध आपके हृदय में कुछ भी समवेदना नहीं!"

"तुम्हारे डॉक्टर साहब का यह अमल नहीं है क्या?"

"उनका कैसा अमल?"—चौंककर गजानन ने कहा।

"भारत-भर में प्रसिद्ध हो जाने की इच्छा, तमाम अखबारों की हेड लाइनों में अपना नाम चमकता हुआ देखने की कामना—क्या यह एक अमल नहीं है? किसी को पैसा कमाने की धुन, तो किसी को नाम कमाने का चस्का। लेकिन एक बात पक्की है, दुनिया जैसी जिधर बढ़ चुकी है—उसे लौटाकर दूसरी लीक पर लाना यह महाकाल का काम हो सकता है, सुधारक की ताक़त नहीं।"

[दस]

'दि जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के बीड़ी लपेटनेवालों के हॉस्टलों के बीच में एक ऊँची टावर घड़ी थी। चारों दिशाओं में ब्रह्मा-जी की भाँति उसके चार मुख थे, जिनकी सुइयाँ एक ही बिजली की मशीन से चक्कर काटती थीं। घड़ियों के समीप ही एक घंटा था—जो पूरे और आधे घंटे बजाने के सिवा, एक गुप्त की युक्ति द्वारा समय समय पर हॉस्टल के अधिवासियों के लिये अविराम रूप से भी बजता था।

"टन् टन् टन्-टन् . . . . ." हॉस्टल की पहली घंटी, सुबह पाँच बजे की, बजनी शुरू हुई। इसमें सबको शय्या का त्याग कर देना पड़ता था। सोने के लिये सबके लकड़ी के तख्त थे। भिन्न-भिन्न सुपरिंटेंडेंट और दरबान, ये तीनों भी दोनों विभागों के कमरों में ही सोते थे।

जीवन में एक सहसा परिवर्तन प्राप्त हो जाने पर नौजवान को रात के तीन बजे तक नींद नहीं आई। टॉवर की घड़ी में वह बराबर तीन बजे तक पूरे और आधे घंटे सुनता रहा। भाँति-भाँति के संशय, भय और उमंगों के ताने-बाने उसके मन में बुनते और टूटते जा रहे थे। तीन बजे के बाद जब उसका मन कल्पना करते-करते थक गया, तो उसकी आँख लग गई। वह

गहरी नींद में अचेत हो गया। सुबह उठने का घंटा नहीं सुना उसने। वैसे भी बड़ी देर में स्नान और उठने की आदत थी उसे। मोटरों और ट्रामों की घड़घड़ाहट में भी वह अपनी पूरी नींद मय सूद के वसूल कर लेनेवाला, सूर्य की किरणें फ़ुटपाथ पर चमक उठीं, तो गूदड़ के सहारे रात का कोना खींच लेने-वाला नौजवान कैसे उठ जाता उस नए और पहले बंधन ही में। वह बेख़बर सोता ही रह गया।

सभी उठकर मुँह-हाथ धोने को जाने लगे। बिच्छू और नौजवान के हृदयों में मित्रता हो चुकी थी। बिच्छू ने उसके तख़्त की ओर देखा, उसे सोता हुआ पाकर वह उसके पास गया। उसने नौजवान को झकझोरकर उठाया—"उठो, घंटी बज गई।"

"कैसी घंटी?" चौंककर नौजवान ने मुँह खोला, और एक समस्या-भरी नज़र चारों ओर दौड़ाई। सारा वातावरण बदल गया था। सड़क पर झाड़ू देनेवाले जमादार ही कभी-कभी उसे उठाते थे, वह भी जब उसके बिस्तर के नीचे कूड़ा-कचरा बहुत भरा रहता था। नौजवान ने फिर आँखें बंद कर लीं, और फिर कंबल से मुँह ढककर सो गया। प्रत्यक्ष को स्वप्न समझकर फिर नींद के अँधेरे में यथार्थता ढूँढ़ने लगा।

बिच्छू ने फिर उसे झकझोरा—"सब उठ गए नौजवान, उठो।"

"जिधर से तुम्हारी मौज हो, झाड़ू चला दो दोस्त। मैं तो अपनी नींद पूरी कर ही उठूँगा।"

"अगर सुबह की हाजिरी में एक मिनट की भी देर हो गई, तो सेठजी के सामने खड़े कर दिए जाओगे।" बिच्छू ने उसका कंबल खींच लिया।

नौजवान उठ बैठा—"हां भाई, इतने साफ़, नरम और गरम बिछौने की यही पहली रात थी—लेकिन सपने वहीं कूड़े, चीथड़े और टुकड़ों के ही मन में भरे हुए हैं। लो, मैं उठ गया।"

नौजवान बिस्तर पर से भूमि पर कूद गया।

बिच्छू बोला—"चलो, जल्दी करो। दिसा-मैदान जाकर हर-एक को रोज़ नहाना पड़ता है।"

"रोज़ नहाना पड़ता है?"—बड़ी मुश्किल की सांस खींचकर नौजवान ने पूछा।

"हाँ, जाड़ा हो या गरमी, हमेशा ठंडे पानी ही से।"

नौजवान ने तकिए के नीचे हाथ डालकर कुछ निकाला मुट्ठी में—"तुम जानते ही हो, आसमान के पानी से ही कभी भीग गए, तो नहा लिया, धरती के पानी से नहाना तो कभी सीखा ही नहीं।"

"यहाँ तो नहाना ही पड़ेगा। नई आदत बनते क्या देर लगती है?"

"और पुरानी आदत छोड़ते?"—नौजवान ने मुट्ठी बिच्छू की तरफ बढ़ाते हुए बहुत धीरे-धीरे कहा—"एक कोयला मिल जायगा?"

"नहीं, ग़ुसलख़ाने में बहुत बढ़िया दंत-मंजन रक्खा है। सेठजी कोयले से दाँत साफ करने के ख़िलाफ है।"

"बिच्छू, दोस्त, तुम्हारा डंक काट दिया गया यहाँ। लेकिन मैंने सुना था, गिरगिट की पूँछ की तरह वह फिर पैदा हो जाता है। क्यों तुम इतने बुद्धू हो गए, अपना ज़हर गवाँकर ?"—नौजवान ने अपनी मुट्ठी खोलकर उसे दिखाई।

बिच्छू ने उसकी हथेली पर दो बीड़ियाँ देखीं। उसने घबराकर इधर-उधर देखा, और अपने हाथों से उसकी मुट्ठी बंद कर दी—"हैं! है! यह क्या कर दिया तुमने ? बीड़ी लपेटने के कमरे से कोई बीड़ी अपने साथ बाहर लाना बड़ा भारी जुर्म है। फेक दो इन्हें, नहीं तो तुम मुझे भी लपेट ले जाओगे अपने साथ। तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ।"

नौजवान ने उसकी पीठ थपथपाकर कहा—"बरसों की आदत एक ही दिन मे मिटा देने की जो हमसे आशा करते हैं, उन्हीं के लिये—ठंडे पानी से सुबह-सुबह किसी सहारे ही से तो नहाया जायगा। दो-चार दिन किसी तरह दिन में सिर्फ एक ही चुसकी मित्र !"

बिच्छू मुँह बनाकर कहने लगा—"तो तुम करो, जो तुम्हें भाता है। मैं यह चला।"

नौजवान ने उसका हाथ पकड़ लिया—"तुम्हें दोस्त बनाया है, जो कहोगे, वही करूँगा।"

"कहता यही हूँ, इन्हें तोड़कर नाली में बहा दो।"

"कैसे ?"

"जैसे मैंने किया। गंदी आदत को धीरे-धीरे छोड़ने का कोई रास्ता नहीं है। एक बार दिल मजबूत करो—और छोड़ दो, वह छूट जायगी। फिर कभी उसे सोचो ही मत, वह छूट जायगी। जल्दी करो, नहा-धोकर। ड्रिल के मैदान में हाजिरी के लिये देर हो रही है।"

"अच्छा, फेंक दूँगा इन्हें।"

"मुझे दो।"

नौजवान ने सारा मोह त्यागकर बिच्छू के हाथ में दोनों बीड़ियाँ दे दीं। बिच्छू ने उन्हें तोड़कर नाली में बहा दिया।

साथियों के उत्साह और सेठजी के दंड के भय से नौजवान मशीन की तरह कार्य-क्रम की धारा में प्रवाहित हुआ। उसने गुसलखाने के द्वार बंद कर नहाया या नहीं, ईश्वर ही जानें। बाहर पूरे पेचों में खुले हुए शॉवर की आवाज में मिला हुआ उसका गाना बड़े ज़ोर से सुनाई दे रहा था।

नहा-धो ड्रिल की हाजिरी में वह किसी से देर में नहीं पहुँचा। ड्रिल के बाद सबके साथ उसने नाश्ता किया। इस वक़्त चाय के बदले सबको एक-एक पात्र दूध मिलता था। चाय का अभाव दूध से मिट गया था, लेकिन यह जो बीड़ी के धुएँ की चिमनी उसकी बंद हो गई थी—उसका क्या होगा ? नौजवान चिंता में पड़ा सोचने लगा—"यह दिल का घाव कैसे भरेगा ?"

नाश्ते के बाद स्कूल का घंटा बजा। सात से नौ तक स्कूल

लगता था। एक तरफ लड़कों का, दूसरी तरफ लड़कियों का। इतवार छुट्टी का दिन था। उस दिन ये लोग अपने अपने कपड़े धोते और हॉस्टल की सफाई करते थे। भिन्न भिन्न विभागों के सुपरिंटेंडेंट ही मास्टर और मास्टरानी के कर्तव्य पूरे करते थे।

बीड़ी का छूटना नौजवान की एक आफत थी। उम्र की प्रौढ़ता पर यह स्कूल का मिलना दूसरा संकट था। पहले वह सोचता था, स्कूल जेलखाने से ज्यादा कष्टकर होगा। पढ़ने लिखने की ओर उसकी बड़ी अरुचि थी। अक्षर और अंकों के लेख को वह राक्षसों की पलटन-सा देखता था। 'दि जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' में आकर उन्हीं से पाला पड़ जायगा—इसका आभास नहीं था उसे। एक मुश्किल और थी उसे—जब उसके न पढ़ सकने पर मास्टर उसके कान गरम करेंगे, तो तमाम साथियों के बीच में फिर उसकी क्या इज्जत रह जायगी?

घबराता हुआ जब वह बिच्छू के सहारे स्कूल की ओर जा रहा था, तो बिच्छू ने कहा—"चलो तो सही, हमारा स्कूल ऐसा नहीं है, जैसा तुम समझते हो। तबीयत खुश हो जायगी तुम्हारी।"

"आज पहला दिन है। लिखने-पढ़ने के नाम पर फिकर है।"

"सिखा दिया जायगा। सभी ने सीखा है। बीड़ी कपैटेन के हॉल में जो सुपरिंटेंडेंट साहब तुमने देखे, स्कूल में वह दूसरी ही शकल में दिखाई देंगे, मिट्टी के तेल से भी बहुत पतले।"

"कभी गुस्से की चिनगारी से भभक तो नहीं पड़ते ?"

बिच्छू ने आँखों से इशारा किया, मास्टर साहब सामने से आ रहे थे। सब लड़के दरजे में बैठ गए थे—भूमि में दरी पर। सबके आगे एक एक डेस्क रक्खा हुआ था। मास्टर साहब के दरजे में आने पर सबने उठकर उनका अभिवादन किया। उन्होंने सबसे बैठ जाने का इशारा किया। सब बैठ गए।

बड़ी प्रीति और मुसकान के साथ उन्होंने नौजवान की तरफ़ देखा—"क्यों जी, क्या नाम है तुम्हारा ?"

"नौजवान।"

"पढ़ने-लिखने को जी चाहता है ?"

"सबके पास कॉपी-किताबें हैं, मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

"वह सब तुम्हें मिल जायगा—पढ़ोगे ?"

"आ जायगा ?"

"कोई भी मनुष्य वह सब कुछ कर सकता है, जो कुछ कोई कर सका है। सिर्फ़ सच्ची प्यास चाहिए। तुम्हारे सभी साथी एक दिन ऐसे ही थे, जैसे तुम अब हो।"

नौजवान बड़ी दीनता के साथ हाथ जोड़कर बोला—"लेकिन अगर आप मुझे माफ़ करें, तो स्कूल के टाइम में बीड़ियाँ लपेटने को तैयार हूँ। इससे मालिक को फ़ायदा होगा।"

"तुम्हारे मालिक तुम्हें इस तरह सोख लेना नहीं चाहते। वह तुम्हें यहाँ जितना अपने लाभ के लिये लाए हैं—उतना ही तुम्हारा फ़ायदा भी उनकी नजर में है। सुनो, विद्या मनुष्य

का भूषण है। बोली और विचार के कारण मनुष्य तमाम प्राणियों में श्रेष्ठ है—ऐसे ही पढ़ने-लिखनेवाला मूर्ख आदमियों से बढ़कर है। नौजवान, हम तुम्हें खेल-ही-खेल में शिक्षा देंगे।" —मास्टर साहब ने उसे उत्साहित करते हुए कहा।

"लेकिन कैसे मास्टर साहब ?" घोर निराशा व्यक्त कर नौजवान ने कहा—"बीड़ी लपेटना तो मैं सीख ही गया हूँ—वह हाथ-पैरों का काम है, यह दिमाग़ का ?"

"दिमाग़ सभी जगह काम आता है। पढ़ना-लिखना अब पहले की तरह मुश्किल नहीं रहा। पहले सोलह स्वर थे। हमने फ़ालतू चार निकालकर अब बारह कर दिए हैं।"

"समझ गया! यह तो बड़ा आसान है। यानी सोलह आने के रुपए को आपने बारह आने का कर दिया। लेकिन वे चार बेचारे कहाँ गए ?"

"वे वेदों के थे, वेदों में ही चले गए। कोई उनसे काम नहीं लेता था। हमारे सेठजी व्यवहार को ही इज्ज़त देते हैं। वे बारह भी पहले अलग-अलग शक्ल रखते थे, अब हमने उनकी एक ही सी सूरत बना दी।"

"तब तो बड़ा घोटाला कर दिया आपने। कैसे पहचाने जायँगे वे ? बड़ी मुश्किल हो गई!" सिर खुजाकर नौजवान ने कहा।

"मुश्किल कैसी, वह तो आसानी के लिये किया गया है।" मास्टर साहब कुरसी पर से उठकर ब्लैक बोर्ड के सामने खड़े हुए।

और लड़के नौजवान के तर्क वितर्क पर हँसने बोलने लगे थे। मास्टर साहब ने उन्हें हल करने को सवाल दे दिए, और चुपचाप अपना अपना काम करने को कहा।

इसके बाद मास्टर साहब ने ब्लैक बोर्ड पर एक वर्गाकार आकृति बनाकर नौजवान से कहा—"नौजवान, देखो, इस चौखट को देखो।"

"देख लिया मास्टर साहब।"

"यह याद हो गया न? इसे तुम भी लिख सकते हो न?"

"जरूर, यह तो बड़ा आसान है।"

"बस, इसी चौखट में से एक-एक कर हिंदी के पूरे बारहों स्वर निकल आवेंगे।"

नौजवान कुछ सहमकर बोला—"जनाब, आप चार घटाने की बात कहते थे, आपने तो पाँच बढ़ा दिए—लेकिन आपकी सरंगी कहाँ है?"

सब लड़के अपना-अपना सवाल छोड़कर नौजवान की ओर देखने लगे, और मास्टर साहब ने भी उसी पर अपनी तीखी आँखें गड़ाईं—"क्या मतलब है तुम्हारा?"

"स्वर तो सात होते हैं, आप कहते है बारह!"

"संगीत के स्वर होते हैं सात, यहाँ तो पढ़ाई-लिखाई की बात चल रही है।"

"इस एक ही चौखट में से आप बारहों स्वर निकाल देंगे, है यह जरूर ताज्जुब की बात।"

"इस चौखट के चारों कोनों में से एक-एक रेखा खींची गई इस तरह—" मास्टर साहब ने ब्लैक बोर्ड की आकृति में रेखाएँ खींचकर उसकी यह शकल बनाई—
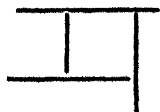
"इसका नाम क्या है ?"—नौजवान ने पूछा।

"अभी दो रेखाएँ और जोड़नी हैं इसमें।" मास्टर साहब ने अक्षर को पूर्णता दी—
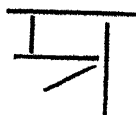
नौजवान ने उसे देखकर मूँड़ हिलाया, और वह प्रसन्न दिखाई दिया।

मास्टर साहब बोले—"यही वर्णमाला का पहला हरफ़ है। इसका नाम है अ, अ माने अनार। इसके आगे एक लकड़ी और लगा देने से हो गया आ, आ माने आदमी।"

मास्टर साहब ने इसी तरह नौ अक्षर बनाए—अ, आ, अि, अी, अु, अू, अे, अै, ओ। जब वह दसवें अक्षर पर आए, उन्होंने उसे औ नाम देकर उसके माने बताए औघड़, तो नौजवान ने विरोध कर कहा—"मास्टर साहब, यह तो बड़ी गंदी बात है—औ माने औरत क्यों नहीं हो सकता ?"

"चुपो, चुपो, औ माने औरत नहीं हो सकता। सेठजी का हुक्म नहीं है।"

"क्यों नहीं है ?"

"यह मर्दों का डिपार्टमेंट है, यहाँ औरत नहीं आ सकती।"

"क्या वह औघड़ से भी भयानक है ?"—नौजवान ने पूछा।

मास्टर साहब बोले—"नौजवान, तुम यहाँ नए-ही-नए आए हो, वहम छोड़कर तुम्हें पढ़ने-लिखने पर ध्यान देना चाहिए। नहीं तो सेठजी के पास रिपोर्ट कर दी गई, तो तुम्हारे हक में बुराई हो जायगी।"

नौजवान वहम छोड़कर जैसा कहा गया, उसी पर अमल करने लगा।

उधर लड़कियों के डिपार्टमेंट में चंपा को आ माने बताया गया आग और औ माने औरत। चंपा ने दोनो माने बिना किसी उज्र के याद कर लिए।

[ग्यारह]

भूधर की घड़ीसाज़ी का काम बहुत अच्छा चलता था। वह ईमानदार था, इसी से मेहनत से काम करता। ऊपरी पॉलिश को छोड़कर वह घड़ी की भीतरी सचाई पर अधिक ध्यान देता था। कीमतें उसकी ज़रूर महँगी थीं, लेकिन जो उसे जानते थे, वे कभी उसके साथ हुज्जत नहीं करते थे। वह गारंटी से काम करता था, और चूक जाने पर फिर दुबारा दाम लेने का नाम न लेता। वह वादे बड़ी दूर के करता था, और ठीक-ठीक उन वादों की रक्षा करता था।

लेकिन वह बीड़ी की मशीन का विचार बड़ी बुरी घड़ी में उसके दिमाग़ में उपजा। उसने उसके जमे हुए धंदे की जड़ हिला दी, और उसके सुख-चैन पर तुषार-पात कर दिया। विचार कुछ बुरा नहीं था वह, पर उसका आरंभ था प्रतिहिंसा की भावना से, शायद इसीलिये भूधर कठिनाई में पड़ गया।

रात दिन वह प्रतिहिंसा एक नशे की तरह उस पर सवार रहती। घड़ीसाज़ी की उपेक्षा कर वह उसी मशीन के पीछे अपना समय खर्च करता। वह धीरे-धीरे गाहकों के वादे न सँभाल सका, न उनका काम ही पहले-जैसा करके देता। बद-

नामी यश से अधिक फैल जाती है। उसके गाहक एक-एक कर टूट चले।

उसने गाहकों की कोई परवा नहीं की। वह बड़े हठी स्वभाव का था। उसने यह निश्चय कर लिया था कि उस मशीन को बिना मूर्त रूप दिए वह चैन नहीं लेगा। उसके पीछे उसका सर्वस्व भी लग जाय, तो उसे परवा नहीं थी। दूकान में जो कुछ साज सामान था—दरी, फरनीचर, घड़ियाँ, उनके अतिरिक्त भाग, सब बेच-बाचकर उसने उसी मशीन के कल-पुर्जे बनवाने में लगा दिया।

आज एक टुकड़ा बनवाया, दूसरे दिन वह बेकार हो गया, तीसरे दिन कोई नया डिज़ाइन सूझा, फिर कोई दूसरी ही अड़चन पैदा हो गई। नए मार्ग से चलनेवाले की हँसी उड़ानेवाले अधिक होते हैं, उसकी कठिनाइयों को समझकर सहारा देनेवाले बहुत कम। मस्तिष्क में उसे मशीन की रूप-रेखा समझनी पड़ती थी, फिर उसको लोहे के पुर्जों में बदलना पड़ता था। समय, पैसा और परिश्रम का काम था। खाने-पहनने को चाहिए ही। उधर गाहकों ने उसकी तरफ पीठ कर दी थी।

कुछ कमाई न होने से उसका बोझ दिन दिन भारी होता गया। क्या करता? परिश्रम पहले से दूना करता, पर वह बीड़ी की मशीन एक मृग-मरीचिका थी, जो उसकी प्रत्येक दौड़ पर दूर-ही-दूर भागती चली जा रही थी।

धीरे-धीरे जो कुछ भूधर के पास था, सब बराबर हो गया।

गाहक चल ही दिए थे। दोस्तों और संबंधियों ने भी रास्ते बदल दिए। कोई बोला—"मूर्ख है।" किसी ने कहा—"दिमाग़ ख़राब हो गया।" उसने किसी की एक न सुनी। एक साहस और एक आशा के साथ वह अपने कंटकाकीर्ण और अंधकार-भरे मार्ग पर अग्रसर होता ही गया।

दूकान का बाहरी भाग पहले उसका सुसज्जित शो-रूम था। एक-दो सहायक भी उसके नौकर थे। उसी में बैठकर वे घड़ी-साज़ी करते। भीतर के कमरे में वह सोता था। एक तरफ़ गोदाम और एक तरफ़ रसोई का सामान भी था। खाने-पीने का क्रम पहले ठीक था उसका, अब टूट गया था। कभी हाथ से बनाता, कभी होटलों में जाता। कभी खाता और कभी नहीं भी।

दे-लेकर दोनो सहायक कभी के विदा कर दिए गए थे, क्योंकि उनके लिये काम नही रह गया था, और वह समय पर उनका वेतन भी नहीं दे सका था। कुछ दिन तक वह अकेला हो नाममात्र के लिये दूकान में बैठता। जब बीड़ी की मशीन ने उसकी तमाम कल्पना खीच ली, और उसके लिये घड़ीसाज़ी का काम भी न रहा, तो वह भीतर ही के कमरे में अपने समय का अधिकांश बिताता। दूकान आधी खुली और आधी बंद रहने लगी।

शनैः-शनैः दूकान की आभा उड़ गई, चीजें तितर-बितर हो गई, और उनके स्थान मे रद्दी और कूड़ा भर गया। गाहकों के

बदले उधार देनेवालों के तक़ाजे बढ़ चले। अब तो जो दूकान बाहर से सिर्फ दिखाने के लिये खुली रहती थी, बिलकुल बंद रहने लगी। उसी दूकान को जेल बनाकर बंद रहता भूधर, रात दिन उसी मशीन की उधेड़-बुन में लगा रहता। उसके खाने-पीने का पूछनेवाला कोई न था। वह क्या करता-धरता है, इससे किसी को कोई मतलब नहीं था। उसके कपड़े मैले और फटे हो गए थे। उसके सिर और दाढ़ी के बाल बढ़ चले थे, मुख की ज्योति उड़ गई थी, उसे कुछ परवा न थी। एक ही उद्देश्य, चिंता और साधना रह गई थी उसके, और वह थी उसकी बीड़ी की मशीन।

जनता की सेवा और अपने एक पनपते हुए धंधे के बीच में कहाँ से कूद पड़ी वह! 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की पूँजीभूत उस इमारत को देख-देखकर पूँजीपतियों की ज्यादती उसके गड़ने लग जाती। बहुत समय से उसके भाव शुद्ध नहीं थे सेठजी के प्रति। उस दिन वह भिखारी की छोकरी चंपा तो सिर्फ एक बहाना बनकर आ गई थी। कारण न-जाने कब से जमा होते जा रहे थे।

बीड़ी की मशीन! सेठ जयराम की 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' को भूमिसात् कर देने के लिये एक बम का गोला! कल्पना में बड़ी आसान चीज थी यह, पर उसको व्यावहारिक रूप देना स्वप्न और जागृति का संबंध जोड़ना था।

रात-दिन उसी के पीछे लगा रह गया भूधर। कभी मशीन

का एक पुरज़ा बनाता, कभी दूसरा; कभी एक बिगड़ जाता, कभी दूसरा काम न देता। कभी सब कुछ तोड़-फोड़कर उसकी इच्छा होती, योगी होकर वह परदेस में खो जाय। कभी अपनी इस कायरता पर अपने को धिक्कार देता, और कठिनाइयों के बीच में सफलता पानेवाले अनगिनती महापुरुषों के चित्र अपने मन में उभारता। और, तब वह अपनी बीड़ी की मशीन के बन जाने के स्वप्न देखता!

'भूधर एंड कंपनी' का साइनबोर्ड फीका पड़ गया, भूधर को उसकी कोई चिंता न थी। एक कील के उखड़ जाने से वह लटक गया था। भूधर ने उसे पूरा ही उखाड़कर मकान के पिछवाड़े फेंक दिया।

सेठ जयराम की तीखी नजर भूधर के इस परिवर्तन को बहुत दिनों से देखती आ रही थी। पड़ोसी होने का नाता था ही, पर सेठजी के स्वभाव की उदारता भी थी। इधर सेठजी को भूधर के व्यवहार में कुछ विचित्र परिवर्तन जान पड़ा। पहले भूधर की जब सेठजी से भेंट होती, तब तुरंत ही उनसे नमस्ते कहता था। अब कभी सेठजी को वह दिखाई ही नहीं देता। अचानक कभी दिखाई पड़ गया, तो दूर ही से उनकी परछाईं बचाकर मार्ग बदल देता है। सेठजी ने मन में सोचा, जरूर कोई बात है।

एक दिन उन्होंने अपने मुंशी से कहा—"मुंशीजी, भूधर की इस दूकान को क्या हो गया। मैंने कई बार उससे बातें

करने का निश्चय किया, पर वह. जान पड़ता है, मुझसे मिलना नहीं चाहता। दूर ही से भाग जाता है। एक दिन मैं उसकी दूकान में भी गया था। भीतर से बंद थी। मैंने खटखटाया, पर उसने कोई उत्तर नहीं दिया। वह अच्छा मेहनती और ईमानदार था, फिर क्या कारण है उसकी दुर्दशा का?"

"कुछ समझ नहीं पड़ता। उसने अपना धंदा खुद बरबाद कर दिया।"

"क्या किसी बुरी संगति में पड़ गया?"

"ऐसा भी नहीं कहा जा सकता।"

"परिश्रम करने का जिसका स्वभाव होता है, वह एकाएक इस तरह आलसी नहीं हो जाता।"

"सुनता तो हूँ, वह दिन भर परिश्रम करता है।"

"क्या परिश्रम करता है?"

"सुना है, कोई मशीन ईजाद कर रहा है।"

"मशीन कैसी?"

"पूछनेवालों से कहता है—सोना बनाने की मशीन बना रहा हूँ।"

"सोना बनाने की कैसी मशीन?"

"जाली सिक्के तो नहीं ढालता—दिन-रात दूकान के दरवाजे बंद कर?"

"उसके रहन सहन और वेश-भूषा से तो यह नहीं जाहिर होता।"

"कुछ लोगों का विचार है, उसके दिमाग़ में कोई ख़राबी पैदा हो गई। डाँट-डपट करनेवाला उसके आगे-पीछे कोई हुआ नहीं। बाल-बच्चे होते, तो झख मारकर उसे उनके लिये मेहनत करनी पड़ती।"

"लेकिन तुम कहते हो, वह दिन-भर मेहनत करता है।"

"जिस मेहनत से पैसा पैदा न हो, उसे मेहनत नाम देना बेकार है। जिस मेहनत से गुज़र के लिये पाव-भर आटा न पैदा हो सके, वह मेहनत कैसी ?"

"नहीं मुंशीजी, ऐसी बात भी नहीं है। संसार में बहुत-से बड़े-बड़े ज्ञानी और विज्ञानियों ने बहुधा दरिद्रता और कठिनाइयों पर ही स्थिर रहकर ससार का उपकार किया है। तुम कहते हो, वह कोई मशीन बना रहा है।"

"आप जाकर कभी देखें, तो भेद खुले।"

"लेकिन वह मुझसे चिढ़ने लगा है। न-जाने क्यों ? हमने कभी उसका कोई बिगाड़ तो किया नहीं। कई बार सोचता हूँ, उसे बुलाकर उससे बातचीत करूँ।"

"उसके रहन-सहन और शक्ल-सूरत में अजीब बदलाव हो गया है। दया तो आती है उस पर, लेकिन वह मुझे भी बड़े संशय और उससे भी अधिक घृणा से देखकर मुँह फिरा लेता है।"

"कुछ भी हो, मुंशीजी, तुम्हे एक दिन उसके यहाँ जाकर उसके कष्ट और उसके रहस्य को समझना चाहिए—यह पड़ोसी का धर्म है।"

मुंशीजी ने सेठजी की आज्ञा मान ली।

उसी रात को सेठजी ने दस-दस रुपए के दो नोट एक सादे लिफाफे में रक्खे, और उस पर उन्होंने भूधर का नाम टाइप-राइटर में टाइप किया। सेठजी उस लिफाफे को लेकर चुपचाप बाहर आए। इधर-उधर देखा, कोई न था। भूधर की दूकान की तरफ बढ़े। बाहर से बंद दरवाजे के काच में भीतर झाँका। बिजली का बिल न दे सकने के कारण बिजलीवाले उसका कनेक्शन काट गए थे। भीतर के कमरे में धुँधली रोशनी हो रही थी, और लोहे पर रेती के चलने की आवाज आ रही थी। सेठजी ने ज्यादा देर नहीं लगाई। चुपचाप दरवाजे की दराज से वह लिफाफा उसकी दूकान के भीतर डाल दिया, और तेजी से अपनी फ़ैक्टरी को लौट गए।

दूसरे दिन सुबह भूख से परेशान भूधर सोच रहा था, आज कौन देगा खाने को? पहले दिन होटलवाले का नौकर उसे एक बिल और दे गया था। साथ ही कह गया था, जब तक तमाम पिछला पैसा न चुका दे, उसे अब भोजन नहीं मिलेगा वहाँ।

भूधर की दूकान में बची हुई एक टूटी मेज की दराज में एक गाहक की घड़ी पड़ी थी। और तो सब अपनी-अपनी घड़ियाँ ले गए थे, एक वही न-जाने वहाँ कैसे रह गई थी।

भूधर ने मन में कहा—"गाहक भूल नहीं सकता। मुमकिन है, कहीं चला गया हो।"

भूधर उसमें ज पर आया। उसने एक मैले और फटे झाड़न

से कुरसी और मेज़ पर की धूल झाड़ी। मेज़ के नीचे से एक बीड़ी का बुझा हुआ टुकड़ा ढूँढ़कर निकाला। उसे सुलगाया, और पीते-पीते उसने दराज़ खोली, वह घड़ी बाहर निकाली। उसे हिलाकर कान के पास ले गया। चलने लगी वह; लेकिन थोड़ी ही देर में टिकटिकाकर बंद हो गई। भूधर ने उसे खोला। जल्दी-जल्दी कुछ पुरज़े साफ़ किए, तेल दिया। घड़ी चल पड़ी स्वस्थ ध्वनि से। भूधर ख़ुश हो गया। उसे घड़ी को केस में फ़िट करते देर न लगी। अंदाज़ से उसने घड़ी की दोनो सुइयाँ ठीक समय पर रख दीं। कपड़े से पोंछ-रगड़कर घड़ी की चाँदी और काच, दोनो चमका दिए, और उसे जेब में रखकर उसी वक़्त बाज़ार जाने को तैयार हो गया।

वह अपने मन में बोला—"इसे बेचकर और किसी दूसरे होटल में कुछ दिन के लिये खाने का हिसाब हो जायगा। एक धोती, दो कमीज़ और एक जोड़ा चप्पल भी ख़रीद लाऊँगा। इन फटे और पुराने कपड़ों की वजह से और भी लोग मेरा अविश्वास करते हैं। यही नहीं, वे मुझसे घृणा करते हैं, और कोई भी उधार देने को तैयार नही होता।"

ख़ुशी से फूलकर एक पॉलिश-उड़-चुके, धुँधले आईने में भूधर ने अपनी प्रतिच्छाया देखी। एक पुराने ब्लेड को टूटे हुए काच के गिलास में घुमा-घुमाकर उसने तेज़ किया, और दाढ़ी बनाने लगा कई महीने बाद।

प्रतिच्छाया बोली—'लेकिन इस घड़ी को बाज़ार

में ले जाकर कहीं बेचने या गिरवीं रखनेवाला होता तू कौन है ?"

भूधर के भीतर से भूख की आत्मा ने जवाब दिया—"किसी की चीज़ चुराकर बेच रहा हूँ क्या ? मैं भूल गया था मेरी ही है यह घड़ी। किसी की होती, तो क्या अब तक ले न गया होता।"

प्रतिच्छाया ने तीव्र ताड़ना दी—"तेरी कहाँ से आई ? तेरी जो भी घड़ियाँ थीं—घड़ियाँ ही नहीं, उनके एक एक छोटे पुरज़े, कील, काँटे तक तो तू बेच चुका। मुझे ख़ूब याद है, एक पलटन का सिपाही तुझे मरम्मत के लिये यह घड़ी दे गया था। तूने इसमें उसके नाम का टिकट लगाया था, जो टूटकर गिर पड़ा है, लेकिन डोरा अब भी इसमें लटक रहा है। गाहकों के रजिस्टर को अगर तू रद्दी में बेचकर खा न गया होता, तो उसमें तुझे इस घड़ी के साथ इसके मालिक का भी नाम मिलता। मैं झूठ नहीं बोलता। किसलिये ? एक दिन रंक से राजा तक हम सबको काल के गाल में समा जाना है।"

भूधर की कल्पना चिल्लाई—"बेची नहीं जा सकती, तो गिरवी तो रक्खी जा सकती है, छुड़ा ली जायगी शीघ्र ही। कल से खाना नहीं खाया है। पेट में दाना जाने पर ही तो है भूधर की उपचेतना, तेरी भी आवाज़ खुलती है। किस वक़्त किस विचार की लहर से मेरी मशीन काम करने लग जाय, यह कोई नहीं बता सकता। अब इसमें किसी घड़ी की देर है। फिर पैसे

का क्या घाटा रहेगा मेरे लिये ? तब उस सिपाही को ऐसी ही नई घड़ी मोल लेकर दे दूँगा। धर्म और सच्चाई ही भूधर की सबसे बड़ी पूँजी है—तुझे अच्छी तरह मालूम होना चाहिए।"

प्रतिच्छाया ने अस्फुट स्वरों में कहा—"अच्छी बात है।"

"जब नई घड़ी उसे दे सकता हूँ, तो इसे बेच सकता हूँ, और मेरा धर्म सुरक्षित ही रहेगा।"—कहकर भूधर ने घड़ी को कान के पास ले जाकर फिर सुना—वह सुंदर स्वर में चल रही थी। तुरंत ही भूधर उसकी टिक-टिक से उदास हो गया। उसने काँपकर घड़ी मेज पर रख दी। वह विचार की गहराई में खोकर दाढ़ी बनाने लगा।

दाढ़ी बनाकर जब वह सेफ्टी रेज़र धो-धाकर लौट रहा था, तो उसने द्वार के पास पड़ा हुआ अपने नाम का एक लिफाफा देखा। वह उसे उठाने को झुका।

आईने में का अक्स बोल उठा—"किसी का बिल, नोटिस या रिमाइंडर होगा।"

भूधर ने जल्दी में फाड़कर लिफाफा खोला—दस दस रुपए के दो नोट उसकी आँखों के आगे खुलकर नाचने लगे।

अक्स बोला—"भगवान् की बड़ी महिमा है। वह किसी सच्चाई से परिश्रम करनेवाले को भूखा मार देना नहीं चाहता।"

भूधर ने जल्दी में वह घड़ी दराज के भीतर जहाँ-की-तहाँ रख दी—"नहीं, यह दूसरे की चीज़—इसे बेचने या गिरवी रखने की नीयत से छूना पाप है।"

प्रतिच्छाया बोली—"ये नोट भी तो किसी दूसरे की चीज़ है।"

भूधर ने जवाब दिया—"लिफ़ाफ़े पर मेरा पता टाइप किया हुआ है। किसी पर होंगे मेरे, वह दे गया है मुझे। कैसी दूसरे की चीज ? लेकिन कौन दे गया होगा ?" भूधर ने लिफ़ाफ़े के भीतर टटोला, और बाहर उलट-पलटकर देखा। भेजनेवाले का कोई पता-निशान न था।

भूधर फिर बोला—"अपने को छिपा रखकर फिर कौन दे गया होगा ? कल तो मैं दिन-भर घर ही पर था।"

प्रतिच्छाया बोली—"लिफ़ाफ़े पर पता छापनेवाले टाइप-राइटर के हरूफ़ों से पता लग सकता है।"

"ठीक है, इस उपकारी का पता लगाना ही होगा। जितना उसने अपने को छिपाया है, उतना ही उसे ढूँढ़ लेने की मेरी कामना बढ़ गई।"—भूधर ने उस लिफ़ाफ़े को यत्न से सँभालकर दराज़ में रख दिया—उस अज्ञात स्वामी की घड़ी के साथ।

फिर एक हाथ से प्रकाश के विरोध में रखकर वह नोटों का वाटरमार्क देखने लगा, और दूसरे से मेज़ बजाते हुए कहने लगा—"इस मतलबी संसार में क्या ऐसे भी लोग हैं, जो भूखे सो जानेवाले की चिंता करते हैं। नोट नक़ली नहीं है। मुझसे परिहास करनेवाला कोई नहीं है।"

उन दोनों करारे काग़ज़ के टुकड़ों ने भूधर को बेचैन कर दिया। वह भीतर के कमरे में उस बनती हुई मशीन के पास जा

पहुँचा। आज एक आशा उसके मन में थी। उसने बड़े उत्साह से मशीन का पहिया घुमाया, वह चला, चला...उसने पत्ते को उठाकर तंबाकू की पत्ती के स्रोत के पास रक्खा, तंबाकू की उचित मात्रा उस पर गिरकर बंद हो गई। मशीन ने पत्ते को लपेटने के बदले उलटकर तंबाकू-सहित फेंक दिया। भूधर हँसा, और बहुत सूक्ष्मता से मशीन के पुर्ज़ो का निरीक्षण करने लगा।

अनगिनती बार वह उस मशीन को बंद कर खोल चुका था। आनन्-फ़ानन् मे फिर पेंच ढीले कर खोल दी, और कुछ पुर्ज़े निकालकर उसने एक चीथड़े से उन पर का तेल पोंछ डाला, और फिर उन्हें एक थैले में रख बाज़ार को चला।

वह एक लोहार के यहाँ गया। उससे खराद पर पुर्ज़ों मे कुछ परिवर्तन करने के लिये कहा। लोहार ने घंटे-भर का समय दिया, उतनी देर मे वह एक होटल में गया। कुछ- खाना खाकर फिर बाज़ार से उसने एक धोती, दो कमीज़ और एक जोड़ा चप्पल ख़रीदा, और फिर लोहार की दूकान में पहुँच गया। लोहार ने अभी तक उसके पुर्ज़ो में हाथ भी नहीं लगाया था। अपने काम की उसे सख़्त ज़रूरत समझा-कर वह एक कबाड़ी की दूकान में चला गया। वहाँ घंटे-भर तक वह लोहे के कबाड़ में उलट-पलट करता रहा। उसके हाथो में लोहे के ज़ंग की लाली लग गई, और कपड़े गर्द से सन गए। लेकिन जब वह कुछ पुर्ज़े ख़रीदकर कबाड़ी की दूकान से बाहर निकला, उसका मुख हर्ष से खिला हुआ था, और उसके हर

क़दम मे एक अजीब उत्साह था। उसने अपने परिश्रम की सफलता एक बीडी सुलगाकर व्यक्त की, और लोहार के कारखाने में जा पहुँचा। लोहार ने उसके पुरज़े बना दिए थे। भूधर उन्हें देख भालकर संतुष्ट हो गया, और लोहार को मजदूरी देने लगा।

लोहार उसकी जान-पहचान का था। पूछने लगा—"क्यों, नहीं हुई मशीन अभी पूरी? कई महीने हो गए तुम्हें परिश्रम करते हुए।"

"जोड़-तोड़ तो बहुत मिला रहा हूँ।"

"अभी देर है क्या?"

"कुछ नहीं कहा जा सकता। पत्ते में ठीक-ठीक तबाकू भरना, पत्ते को लपेटना, उसका मुँह बंद करना और उसे डोर से बाँधना, इन चारों क्रियाओं के लिये मैंने मशीन मे गति उपजा तो ली है, पर—" भूधर चुप हो गया।

"पर क्या? रुक क्यों गए?"

"इन चारों क्रियाओं के लिये एक अटूट रास्ता नहीं खुल रहा है। कभी एक जगह उलझन पड़ जाती है, तो कभी चारों जगह। देखो, कब भगवान् को मंज़ूर हो।"

"तुम्हारी बग़ल ही मे तो 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' है। जाकर उनसे कहो। अंत में इस मशीन का सबसे बड़ा लाभ तो उन्हीं की थैली में जमा होगा। वह ज़रूर तुम्हारी मदद करेंगे।"

"वह क्या करेंगे?"—भूधर अपना सामान सँभाल, घोर निराशा प्रकट कर चल दिया।

वह अपनी दूकान पर लौट आया। ताला खोलते हुए उसकी दृष्टि 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की विशाल इमारत पर पड़ी। उसे लोहार का प्रस्ताव याद आया। उसने मन में सोचा—"अगर मैं कहूँ, तो सेठ जयराम एकदम रूखा जवाब तो कभी न देगा। लेकिन भूधर एक आत्माभिमान रखता है।" उसने फिर उस फैक्टरी को देखा, पर आज उसकी दृष्टि में उदारता थी, और वह इस बात को भूलता-सा जान पड़ा कि उसकी मशीन का आरंभ सेठ जयराम की प्रतिहिंसा से संबद्ध था।

[बारह]

नौजवान को बीड़ी की फ़ैक्टरी में भरती हुए सात महीने हो गए। इतने ही समय में उसमें धरती-आकाश का फ़र्क हो गया। उसका बाहरी रूप ही नहीं बदल गया, मानसिकता भी परिवर्तित हो गई। जो पढ़ना-लिखना उसे पहाड़-सा जान पड़ता था, उसमें रुचि उत्पन्न हो जाने से उसकी प्रगति सरल हो गई। अब वह खूब अच्छी तरह समाचार पत्र और पुस्तकें पढ़कर समझ लेता है। स्कूल की वाद-विवाद-सभा में धारा प्रवाह रूप से बोलता है। उसकी तर्कणा ही प्रस्फुटित नहीं हुई है, शब्दों का आडंबर भी बढ़ चला है। कोई नहीं कह सकता अब, सात महीने पहले यह नौजवान भीख के टुकड़ों पर जीता था।

बीड़ी लपेटने में भी वह किसी से कम नहीं। नियत समय के भीतर ही बीड़ियों की नियत संख्या वह बड़ी आसानी से पूरी कर लेता है। सेठजी के तीव्र अनुशासन के बीच में उसकी तमाम गंदी आदतों की जगह भलाइयों ने घेर ली। उचित व्यायाम और ठीक समय पर उचित भोजन मिलने से उसके स्वास्थ्य ने उन्नति की, नित्य के स्नान और स्वच्छ कपड़ों से उसके बाहरी दिखावे की वृद्धि हुई। नियत घंटों में हर काम के बँटवारे और उनकी संतोषप्रद परिपूर्णता से उसने अपने भीतर एक व्यक्तित्व

का विकास कर लिया। संगति, संयम और नियम से मनुष्य नए संस्कार जगा लेता है, 'दि जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के भीतर के वे दोनो लड़के-लड़कियों के विभाग इस बात के साक्षी थे।

समाज के तात्च्छिल्य, घृणा और अपमान पर जीनेवाले, लोगों के जूठे, उच्छिष्ट और कूड़े पर निर्वाह करनेवाले, गंदगी, रोग, चीथड़ों और उपवास के घर, वे ऋतुओं की तीक्ष्णता के साथ असहाय और निःशस्त्र लड़नेवाले भिखारियों के लड़के-लड़कियाँ मानो स्पर्शमणि के संयोग से सुवर्णमय जीवन में साँस लेने लगे। एक लक्ष्य, एक उद्देश्य और कर्म की पारस्परिकता से उन भिन्न-भिन्न माता-पिताओं की संतानों में एक नाता और संबंध स्थापित हो गया।

समाज के एक भार को उपयोगिता में बदल देने में सेठ जयराम को अपनी गाँठ से कुछ भी नहीं देना पड़ा। उन्होंने उस निरुद्देश्य और बिखरे हुए मनुष्य के कर्म को एक मार्ग पर रख दिया। उसमें शक्ति उत्पन्न हो गई। उस शक्ति को सेठजी की व्यवसायात्मिका बुद्धि ने संपत्ति में बदल दिया। लड़के-लड़कियों ने अपने ही परिश्रम से जीवन का स्तर ऊँचा कर लिया। सेठजी ने यश कमाया, और समाज के परिष्कार के लिये एक नया प्रयोग और उदाहरण लोगों के सामने रख दिया।

नौजवान ने भरती होते ही लड़कों का बहुमत अपनी ओर आकर्षित कर लिया, और उनका लीडर बन गया। चिक्कू उसका सहायक था। नौजवान को सेठजी के तमाम नियम-

उपनियम पसंद थे, पर एक बात उसे बहुत खटकती थी। उसे जब अवसर मिलता, तभी उस असंतोष को वह तमाम लड़कों के बीच में फैलाता। इतवार की छुट्टी के दिन इस काम के लिये उसे पूरी आज़ादी रहती थी, क्योंकि उस दिन सुपरिंटेंडेंट साहब सौदा खरीदने के लिये बाज़ार जाते थे।

इतवार का दिन! छः दिन फैक्टरी के कायदों में कोल्हू के बैल की तरह जुते रहने से सातवें दिन प्रायः सभी लड़के मनमानी में विश्राम लेना चाहते थे। वे नौजवान की हा-हा ही-ही में योग देते। जो साथ नहीं देता, उसका खूब मज़ाक़ उड़ाया जाता।

नौजवान कमांडर के नाम से लड़कों में मशहूर था। जन्म से ही वह अच्छे क़द और बनावट का था। जब से भीख की रोटियाँ छूटीं, और समय पर मेस का बना हुआ भोजन नसीब हुआ, तब से वह काफ़ी तंदुरुस्त हो गया। सभी लड़के उससे डरते और उसकी आज्ञा पालन करते थे।

वह लड़कों का मॉनीटर बना दिया गया था। वही लड़कों को ड्रिल और व्यायाम भी कराता, खेल कूद का भी संयोजक था। व्यायाम का भोजन की भाँति कभी छुट्टी नहीं होती थी।

एक इतवार का दिन था। नौजवान ने सीटी बजाकर सब लड़कों को खेल के मैदान में एकत्र किया, और ड्रिल कराने के बाद उसने अपना लेक्चर शुरू किया—"आज मैं तुमसे एक बहुत ज़रूरी बात के लिये राय लेना चाहता हूँ। सबको ठीक-ठीक अपने मन का सच्चा भेद देना होगा। सब तैयार हो?"

संतू लाइन से बाहर निकल आया। नौजवान ने पूछा—“क्यों जी, क्या बात है ?”

“मुझे छुट्टी दे दीजिए।”

“क्यों ?”

“जरूरी काम है।”

“मैं समझता हूँ तुम्हारा जरूरी काम। नहीं, छुट्टी नहीं मिलेगी। हमारे वाद विवाद में तुम्हारा शामिल होना आवश्यक है। दुनिया तुम्हारे-जैसे खुशामदियों से ही धोखे में पड़ी है। तुम्हें दुरुस्त किया जायगा।”

“सुपरिटेंडेंट साहब के आते ही मैं उनसे तुम्हारी रिपोर्ट करा दूँगा।”

“क्या रिपोर्ट करोगे ?”—नौजवान ने उसका हाथ पकड़कर कहा।

“यही कि तुम लोग सब सेठजी के खिलाफ बक रहे हो।”

“लाइन में खड़े हो। बिना मेरी आज्ञा के तुम उसके बाहर नहीं जा सकते। मैं सुपरिटेंडेंट साहब की जगह पर हूँ इस समय।”—नौजवान ने शासन के स्वर में कहा।

संतू ने छहों लड़कों की तरफ देखा, उसे किसी के भी पास अपने लिये समवेदना नहीं मिली। वह घबराकर फिर लाइन में शामिल हो गया।

“हम जरूर सेठजी के खिलाफ कुछ बातें करेंगे। लेकिन इस बुराई से हमारी मंशा भलाई पैदा करना है। दोनों पक्षों की

भलाई—हमें भी लाभ और सेठजी को भी नफ़ा, यह कैसे? अभी बताऊँगा। पहले तुम एक बात का जवाब दो। तुम्हें मास्टर साहब ने नागरिक शास्त्र पढ़ाया है न?"

संतू ने सिर हिलाकर जवाब दिया—"हाँ।"

"मनुष्य और पशु मे क्या अंतर है?"

"मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।" —संतू ने जवाब दिया।

"क्या सिर्फ मनुष्यों के ही झुंड का नाम समाज है?"

"नही।" संतू ने प्रत्युत्तर मे कहा—"उस झुंड का कोई उद्देश्य होना चाहिए।"

"उद्देश्य सदैव और सर्वत्र कुछ-न-कुछ होता ही है। मेरा सवाल है, क्या सिर्फ़ मनुष्यों की भीड़ का ही नाम समाज है—नारी की उसमें कोई उपयोगिता, कोई अधिकार और कोई आवश्यकता नहीं है?"

संतू ने जवाब दिया—"उनका समाज अलग है।"

नौजवान ताली बजाकर बोल उठा—"शाबाश! यही तो सेठजी के स्वर निकल रहे हैं तुम्हारे होंठों से।"

"न निकलने का कोई कारण ही क्यों हो? जीवन की यह जागृति उन्हीं की कृपा से मिली है, जन्म का यह संस्कार उन्ही का दान है, तब क्यों न उनकी भावना में अपने स्वर मिलावें, और उनके निश्चय को हाथ जोड़, उनके नियमों पर सिर झुकावें।"—संतू ने बहुत ऊँचे स्वर में कहा।

"सेठजी के उपकारों को भूल जाने के लिये मैं कभी नहीं कह

सकता, यह उनकी महत्ता ही है, जिससे उऋण होने के लिये हम क़दम उठा रहे हैं।"—नौजवान बोला।

"उनके नियम के ख़िलाफ़ भड़काकर तुम्हारा यह उऋण होना कोई मानी नहीं रखता। अगर उन्हें इस बात का ज़रा भी पता चल जायगा, तो तुम्हारा गूदड़ फिर किसी फ़ुटपाथ के किनारे पर हो जायगा, और यह स्वर्ग दूसरे भिखारियों के नाम लिख जायगा।"

"तुम मूर्ख हो, जो यह सोचते हो। अगर हमारी आठों आवाज़ें एक हो गईं, तो सेठजी को हमारी बात पर विचार करने को विवश होना पड़ेगा। और, हम उनकी सबसे बड़ी कमज़ोरी दूर कर देंगे।"

"क्या है उनकी कमज़ोरी? एक साधारण हैसियत में जन्म लेकर उन्होंने इतना बड़ा धंदा चला दिया। सैकड़ों आदमियों को काम दिया। यही नहीं, तुम्हारे-जैसे कई भिखारियों को इस महल में लाकर रख दिया। लेकिन तुम्हें ये सुख कैसे हज़म हों। तुम उनमें कमज़ोरी ढूँढ़ते हो?"

"मिस्टर संतू, जोश में मत आओ। अंध-विश्वास बड़े-बड़े महापुरुषों की कमज़ोरी है। अगर सेठजी का अंध-विश्वास हमने तोड़ दिया, तो उनके जीवन में एक नया उजाला फैल जायगा।"

"क्या अंध-विश्वास है उनका?"

"यही, मनुष्य की सामाजिकता को काटकर उसके दो टुकड़े

कर दिए। पशु-पक्षियों मे कोई [illegible] न होने पर भी नर-मादा साथ-साथ चरते और विचरते है, वनस्पतियों में कोई भावना न होने पर भी नर-मादा साथ-ही-साथ, एक ही फूल मे, निवास करते हैं। संसार की अधिकांश जातियों में भी लड़के-लड़कियाँ, दोनो मिलकर एक ही स्कूल में पढ़ते है, खेल खेलते हैं, सभा-समितियाँ बनाते हैं, खेती करते हैं, मशीनें चलाते हैं, दूकानों दफ़्तरों में काम करते हैं, देश-सेवा करते हैं, और मुल्क के लिये साथ-ही-साथ लड़ाई के मैदान में जाते हैं।"

'यह पश्चिमी आदर्श है, पूर्व में हमारी भारतीयता अलग है।"

"यह तुम्हारा कोरा देशाभिमान है। सत्य सदा और सर्वत्र एक ही-सा रहता है। अन्य देशों में एक और एक ग्यारह बनते हैं, यहाँ उन्होने एक में से एक को अलग कर सिफर कर दिया।" बिच्छू ने नौजवान की मदद करते हुए कहा।

संतू ने जवाब दिया—"तुम्हारी मति मारी गई है। इस अवस्था में ब्रह्मचर्य का पालना बहुत जरूरी चीज़ है।"

फागुन ने पूछा—"क्या है ब्रह्मचर्य ?"

संतू ने उत्तर दिया—"इंद्रियों को वश में कर विद्या और बल का संचय करना ही ब्रह्मचर्य है।"

"इंद्रियों को वश में करना क्या हुआ ?"—दयाल ने प्रश्न किया।

संतू कुछ सोचने लगा। शंकर बोल उठा—"संतूजी, आपको तो सिर घुटाकर कहीं किसी जंगल में होंठ सी, कानों में

उँगली डाल, आँखों में पट्टी बाँधकर भगवान् का ध्यान लगाना था, नाहक ही चोटी लपेटने का कष्ट किया।"

संतू—"यह भी कोई बात हुई। बहस में जीत न सके, तो लट्ठ घुमाने लगे।"

शंकर—"बहस में कौन हारा? तुम्हीं ने कहा नहीं, इंद्रियों को वश में करना। और आँख, कान, नाक, मुँह की इंद्रियाँ बिना उनके छेद बंद किए कैसे वश में होती हैं? आँखें खुली हैं तुम्हारी, वह घड़ी का टॉवर देख रहे हो, और उसके पीछे अनंत आकाश, असंख्य तारे, लाखों-करोड़ों मील की दूरी—"

संतू—"मेरा मतलब है, विद्याध्ययन की अवस्था तक स्त्रियों को नहीं देखना चाहिए।"

नौजवान—"संतू महाराज, अच्छा, सच सच कहिए, लड़के और लड़कियों के विभाग के बीच में यह जो ऊँची दीवार है, उसके होते हुए आप लड़कियों को देखते हैं या नहीं?"

संतू—"अजीब सवाल है! क्या तुम देखते हो?"

नौजवान—"जरूर देखता हूँ, इसीलिये तो सेठजी के उस पाखंड को तोड़ देना चाहता हूँ। क्या तुम नहीं देखते? ये सब देखते हैं। शंकर, क्या तुम देखते हो?"

शंकर—"हाँ।"

नौजवान—"बिच्छू, तेजा, फागुन, दयाल और कामता—तुम?"

सब—"हम भी सब देखते हैं।"

संतू—"तुम सब झूठे हो, मिलकर मुझे मूर्ख बनाना चाहते हो। मैं तुम सबकी रिपोर्ट करूँगा सेठजी से।"

नौजवान—"तुम्हारी रिपोर्ट से नहीं डरते। तुम बने-बनाए मूर्ख हो। मैं पूछता हूँ, तुम कभी सपने देखते हो या नहीं?"

संतू—"सपने कौन नहीं देखता?"

नौजवान—"ठीक है, अंधे भी देखते हैं। तो जब तुम सपने देखते हो, वहाँ यह सेठजी की बनाई हुई दीवार ऐसी ही ठोस, ऊँची और अपारदर्शक रहती है क्या? वहाँ लड़कियों के आने की इजाज़त है या नहीं?"

संतू विचार में पड़ गया।

नौजवान कहता जा रहा था—"भाई संतू, हमारे मन के भीतर एक ब्लैक बोर्ड है, उसमें दुनिया की तमाम चीज़ों का अक्स पड़ा रहता है। बाहर लड़कियों को ओट में रख देने से क्या होता है? उस ब्लैक बोर्ड में से कोई लड़कियों की तसवीर मिटा दे, तो हम भी जानें।"

बिच्छू कहने लगा—"संतू भैया, नाराज़ होने की बात नहीं है। नर और नारी, ये दोनों भगवान् की सृष्टि हैं। दोनों बराबर हैं। दोनों को अलग-अलग डिब्बों में बंद कर देने से कुछ बनने-वाला नहीं है, उलटा बिगाड़ ज़रूर होता है।"

कुछ साँस लेकर नौजवान ने अपना लेक्चर शुरू किया—"ये दोनों अगर स्वाभाविक रीति से एक साथ ही छोड़ दिए

जायँ, तो हानि हरगिज़ नहीं है। एक को दूसरे से छिपाकर सेठ-जी ने दोनो के मन में एक दूसरे के लिये भय और अचरज पैदा कर दिए। यहीं पर सबसे बड़ी बुराई उपज गई। अगर लड़का लड़की के साथ बचपन से ही साथ-साथ खेलता, पढ़ता और बढ़ता रहे, तो हरगिज़ एक के मन में दूसरे के लिये कोई कौतूहल पैदा न हो, और वे एक दूसरे को बचपन से ही आदर और पूजा की प्रतिमा समझें।"

बिच्छू ने पूछा—"कहो संतजी, कुछ ज़मीन पर आप आए या नहीं ? दुनिया की हवा को देखो, वह किस तरफ़ किस तरह बह रही है। क्यों, क्या विचार है ?"

"बहुत गंदे विचार हैं ये।" संतू ने कहा—"ये पश्चिमी सभ्यता के विचार हैं। आज वहाँ जो हाहाकार फैला है, उसकी जड़ में यही मर्यादा का टूटना है।"

शंकर कहने लगा—"संतू, तुम सेठजी के सेक्रेटरी बन सकते हो। कोशिश करो।"

नौजवान कहने लगा—"ज्यादा बहस से कोई फ़ायदा नहीं। सेठजी तो समय को समझते हैं, पर उनके कुछ ख़ुशामदी सलाहकार हैं, जो उन्हें अँधेरे में ही रखना चाहते हैं। असल में हमारी लड़ाई उन्हीं के ख़िलाफ़ है। एक भली बात के लिये जो अपनी आवाज़ ऊँची नहीं कर सकता, मैं उसे मनुष्य नहीं, गोबर का पुतला कहूँगा। समाज के अंध-विश्वास और गंदी रूढ़ियों को तोड़ने के लिये जिसके मन में कोई हौसला नहीं, वह

मनुष्य नहीं, एक जानवर है। वह कूप मंडूक न अपना भला कर सकता है, न अपने साथियों का।"

संतू को छोड़कर सब लड़कों ने तालियाँ बजाकर कहा—"हियर! हियर!"

नौजवान बोला—"आज दुनिया में बहुमत का राज्य है। जो मेरे साथ है, वह हाथ ऊँचा करे।"

संतू के सिवा सबने हाथ ऊँचा किया। संतू बोला—"मैं नहीं हूँ तुम्हारे साथ।"

बिच्छू ने कहा—"हम छहों लड़के तुम्हारे साथ है, इस एक के न होने से हमारा कुछ नही बिगड़ सकता।"

नौजवान चिल्लाया—"दरवाजा खोल दो, दीवार तोड़ दो।"

छहो लड़को ने दुहराया—"दरवाजा खोल दो, दीवार तोड़ दो।"

"हम यह पहला गोला छोड़ते है। मैंने यह अर्जी लिख रक्खी है।" नौजवान ने जेब से एक अर्जी निकालकर पढ़नी शुरू की—"श्रीमान् सेठजी महोदय, हम आपके बीड़ी लपेटनेवाले आपकी सेवा में निम्न-लिखित प्रार्थना करते हैं—लड़के और लड़कियाँ, भगवान् की ये दो मानव सृष्टियाँ हैं, उन्नतिशील विदेशों में इनके बीच मे कोई दीवार नहीं चुनी गई है। आपने 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के बीड़ी लपेटनेवाले और लपेटनेवालियों को जो अलग-अलग कमरों मे बंद कर उन्हे हर तरह की सुविधाएँ दी हैं, वे इस आजादी के युग में हमें कुछ भी सुखी नहीं

कर सकतीं। हम आपका क़ीमती समय अधिक नहीं लेंगे। संक्षेप में हमारी प्रार्थना है, आप हमारे दोनों विभागों को एक में मिला दें। इससे फैक्टरी को दूना लाभ होगा। एक तो आपके प्रबंध का खर्च आधा हो जायगा, दूसरा, अगर हम दोनों विभाग एक ही कमरे में बीड़ियाँ लपेटना शुरू कर देंगे, तो हमारी चाल दूनी हो जायगी। हम प्रतिदिन आठ हज़ार के बदले सोलह हज़ार बीड़ियाँ लपेट देने की प्रतिज्ञा करने को तैयार हैं। आशा है, आप हमारी आज़ादी और फैक्टरी का मुनाफ़ा बढ़ाने में ज़रूर योग देंगे। हमारा नारा है—'दरवाज़ा खोल दो, दीवार तोड़ दो।' हम हैं आपके सेवक—"

सबसे पहले उस अर्ज़ी में नौजवान ने दस्तखत किए। उसके बाद तेजा, फागुन, बिच्छू, दयाल, कामता और शंकर ने। संतू किसी तरह अपना नाम लिखने के लिये राजी नहीं हुआ। नौजवान ने उसको अँगूठा दिखाकर कहा—"जाओ, जिससे चाहो, हमारी रिपोर्ट कर दो।"

नौजवान ने वह अर्ज़ी सुपरिटेंडेंट साहब के मार्फ़त सेठजी के पास पहुँचा दी। सेठजी उसे पढ़कर खूब हँसे। शाम को देवी के मंदिर में जाकर उन्होंने उस अर्ज़ी पर अपना भाषण दिया—"प्यारे बच्चो, मुझे तुम्हारी अर्ज़ी मिली। मैं खुश हूँ, तुमने अपने मन के विचार साहस के साथ मुझ पर ज़ाहिर किए। मैं तुम्हारा सबसे बड़ा हितचिंतक हूँ। एक मिनट को भी मत सोचो कि मैंने किसी स्वार्थ के लिये तुम्हें जेल में क़ैद कर रक्खा है। तुम्हें

मालूम है, मेरी फैक्टरी में और भी बहुत-से बीड़ी लपेटनेवाले हैं। तुम्हें मैं उनकी तरह नौकर-जैसा नहीं, संतानवत् समझता हूँ। मैंने तुम्हारी मानसिक, शारीरिक और चारित्रिक उन्नति का प्रबंध किया है—और बहुत सोच-विचारकर। मेरी घरवाली बहुत साल हो गए, मर गई, और मेरे कोई संतान नहीं—जो कुछ हो, तुम्हीं हो। मैं जानता हूँ, तुम अब उम्र में बढ़ चले हो। मैंने तुम्हारा सब इंतज़ाम सोच रक्खा है। दोनो विभागों में लड़के और लड़कियों की गिनती बराबर एक मतलब ही से है। मैं अंत में दोनो विभागों को एक करूँगा, उस दिन एक-एक लड़के का विवाह एक-एक लड़की से होगा। इसके लिये तुम्हें कोई जल्दी नहीं होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य बहुत बड़ी चीज़ है। उसकी सच्ची रक्षा किए बिना तुम्हारे जीवन की सच्ची उन्नति नहीं हो सकती।"

सबने ताली बजाई। नौजवान का दल भी संतुष्ट हो गया, और संतू भी ख़ुश हो गया, क्योंकि सेठजी ने अपने भाषण के अंत में ब्रह्मचर्य शब्द का इस्तेमाल कर दिया था। और, कदाचित् सबसे ज़्यादा ख़ुश हो गई थी लड़कियों की टोली। वे मन-ही-मन लड़कों की उस अर्ज़ी के लेख की तारीफ़ करने लगी, जिसने उनकी कल्पना के विचरण के लिये मुक्त आकाश दे दिया।

आरती के बाद जब लड़कियाँ भोजन करने बैठीं, तो निरंतर उसी लड़कों की अर्ज़ी और सेठजी के भाषण पर बातें करती रहीं।

लक्ष्मी बोली—"लेकिन सेठजी ने एक अक्षर भी नहीं खोला लड़कों की उस अर्जी का—आखिर क्या लिखा होगा उसमे ?"

चुन्नी धीरे-धीरे कहने लगी—"बड़े बदतमीज़ हैं ये लड़के। जरूर कोई शरम की बात लिख दी उन्होंने।"

तुलसी ने सेठजी की उदारता की प्रशंसा मे कहा—"लेकिन सेठजी धन्य हैं, उन्होंने कोई कठोर दंड देने के बदले बड़ी नरमी से उन्हें खुश कर दिया।"

यशोदा तुलसी की कोहनी में चिकोटी काटती हुई बोली—"विवाह की आशा दिला दी।"

तुलसी ने यशोदा की पीठ पर थपकी जमाकर कहा—"उस आशा मे तू भी तो बँध जायगी।"

यशोदा—"और तू क्या छूटी रहेगी ?"

भगती ने असमंजस में कहा—"लेकिन शादी तय कैसे, किसके साथ होगी ?"

उदासी—"जन्म-कुंडलियाँ मिलाई जायँगी।"

चुन्नी—"भिखारियों की जन्म-कुंडलियाँ कहाँ रक्खी है ?"

लक्ष्मी—"अंदाज़ से बना ली जायँगी। सेठजी पुरानी संस्कृति को बहुत बड़ी चीज मानते हैं।"

चुन्नी—"तू बड़ी बेवक़ूफ है। आठ लड़कों की आठ लड़कियों से शादी की जायगी। आठों की ठीक आठों से जन्म-कुंडलियाँ कैसे मिल सकेंगी ?"

लक्ष्मी—"कलम पंडितों के हाथ में, और पंडित सेठजी की मुट्ठी-भर दक्षिणा के वश में। चाहे जिस ग्रह को जिधर रख दें, यह उनके बाएँ हाथ का खेल है।"

बिजली अब तक चुप थी, बोल उठी—"तुम दोनो बेवकूफ हो। आठ लिफाफों में लड़कों के नाम बंद कर एक संदूक में रक्खे जायँगे, और उसी तरह आठों लड़कियों के एक दूसरे संदूक में। फिर सेठजी आँखें बंद कर एक एक लिफाफा दोनो संदूकों में से निकालकर, एक साथ पिन लगाकर रखते जायँगे। जिसका लिफाफा जिसके साथ आ जायगा, शादी हो जायगी।"

तुलसी कुछ अनखाकर कहने लगी—"यह भी कोई बात हुई। जिसे हमें अपने जन्म का साथी बनाना है—सेठजी आँखे बंद कर उनकी तक़दीर मिला दें, अत्याचार! घोर अत्याचार! नहीं, हम ऐसा न होने देंगी। लड़के अर्ज़ी भेज सकते है, तो क्या हमें लिखना बोलना नही आता?"

बिजली—"तो क्या स्वयंवर रचाया जायगा तुम्हारा? आठों की शादी आठो से करनी जरूरी है। मुँह देखकर जब आठों एक ही पर टूट पड़ें, तो फिर?"

चंपा ने फ़ैसला किया—"हर लड़के और लड़की का रॉल नंबर पहले ही से नियत है। बस, वे अंक आपस मे मिला दिए जायँगे, छुट्टी हुई।"

बिजली ने अनुमोदन किया—"मुँह देखकर जो शादियाँ की जाती हैं, उनमें ही क्या जन्म-भर के सुख की गारंटी रहती है?"

लेडी-सुपरिंटेंडेंट के आ जाने पर सब लड़कियों ने बातचीत का विषय बदल दिया। खा-पीकर मनोरंजन और रेडियो-अखबार की घंटी बजी। सब पुस्तकालय में चले गए।

जिस प्रकार नौजवान लड़कों के विभाग का जन्मजात कमांडर था, वैसे ही लड़कियों के विभाग की लीडर थी चंपा। पुस्तकालय में पहुँचते ही चंपा ने लेडी-सुपरिंटेंडेंट से पूछा—"लड़कों ने अपनी अर्जी में क्या लिख रक्खा था ?"

वह बोली—"मुझे कुछ नहीं मालूम है।"

[तेरह]

गजानन पंडित को तंबाकू छोड़े हुए लगभग छ महीने हो गए। उनकी प्रतिज्ञा इस बार अटूट रही, इसके लिये वह नित्य भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि भविष्य में भी वह इसी तरह अचल रहें। वह डॉक्टर जोश का भी गुणानुवाद करते हैं। अगर उनका सहारा न मिला होता, तो पंडितजी को वह जहरीला धुआँ फिर लपेट लेता।

वह बहुधा एंटी-निकोटीन-सोसाइटी में जाते हैं। डॉक्टर जोश से अब उनकी बड़ी गहरी दोस्ती हो गई है। वहाँ घंटों वह बैठकर सोसाइटी के भविष्य के बारे में तर्क-वितर्क करते रहते हैं। डॉक्टर जोश बहुत बड़े आशावादी हैं। उनकी दृढ़ धारणा है, एक-न-एक दिन यह हिंदुस्तानियों से जरूर छुड़ा दी जा सकती है। उनका दावा तो यहाँ तक है, अगर राष्ट्र-संघ कुछ मदद दे, तो वह इस पत्ती को धरती पर पैदा ही न होने दें। इसके बीजों को नेस्त-नाबूद करने के लिये उन्होंने पूरे फुलस्केप साइज के बहत्तर पेजों में, विना स्पेस छोड़े, एक स्कीम टाइप कर रक्खी है।

लेकिन गजाननजी को कुछ शंका है। वह डॉक्टर जोश का ऋण अदा करने की निरंतर कोशिश करते रहते हैं। पर अभी तक एक भी व्यक्ति की तंबाकू, सिगरेट या बीड़ी नहीं

छुड़ा सके हैं। जिसके साथ भी वह तंबाकू के अवगुणों पर बहस करते हैं, वह पराजित हो जाता है, पर तंबाकू छोड़ने के लिये किसी तरह तैयार नहीं होता। वह मान लेता है, तंबाकू एक अत्यंत गंदी आदत है, लेकिन जब गजाननजी दस्तखत करने के लिये उसके आगे सोसाइटी का फॉर्म रखते हैं, तो बग़लें झाँकने लगता है।

एक दिन गजाननजी ने डॉक्टर जोश की राशि-नक्षत्र मालूम कर ज्योतिष की गणना की। फल कुछ साधारण ही निकला। डॉक्टर जोश से कुछ नहीं कहा उन्होंने, पर मन-ही-मन ढीले पड़ गए, और सोचने लगे—"नहीं, यह भयानक अमल मेरे-जैसे दो-चार लिहाफ़ जलानेवाले छोड़ दें, बाक़ी यह ज्यों-का-त्यों रहेगा। शुक्ल पक्ष के चंद्रमा की तरह यह दिन-दिन बढ़ता ही जायगा, इसकी अमावस्या कभी नहीं आ सकती। एक दिन यह सारे भारत की आबादी को ग्रस लेगा।"

दिन-भर परिचित-अपरिचितों के बीच में नए-पुराने तंबाकू के अमलवालों को समझाते-समझाते गजानन हार गए। एक भी फॉर्म भरकर नहीं ले जा सके डॉक्टर जोश के पास। डॉक्टर जोश इस बात से कुछ भी अधीर नहीं हुए। वह पंडितजी से बराबर कहते—"मुझे झूठी संख्या बढ़ाने से कोई मतलब नहीं है, पंडितजी। आप अपनी प्रतिज्ञा पर ध्रुव की तरह अटल रह जायँगे, तो सिर्फ आपका एक नाम ही मेरे लिये एक हज़ार नामों से बढ़कर है।"

लेकिन एक दिन गजाननजी की यह आशा पूरी होने को आई। मन में जो भी होगा उनके, भगवान् जानें, हाथ में तो माला के दाने फुल स्पीड में सरकते जा रहे थे। अचानक उन्होंने बड़े ज़ोर से किसी का रोना सुना, साथ ही मार-पीट और डाँट डपट भी। डाँटने और रोनेवाले के स्वरों को पहचानते उन्हें ज़रा भी देर न लगी। माला हाथ में सरकाते हुए दौड़े पंडितजी उधर ही, खड़ाऊँ खटकाते हुए। तुरंत ही रामधन बाबू की बैठक में पहुँच गए। वहीं से आवाज़ आ रही थी।

"चांडाल, आज मैं तेरी टाँग तोड़कर ही दम लूँगा।" कहते हुए रामधन बाबू ने एक लकड़ी और जमा दी अपने पंद्रह-सोलह बरस के लड़के वसंत की टाँग में।

वसंत चिल्लाता हुआ कमरे में भागने लगा। गजाननजी ने दौड़कर रामधन बाबू के हाथ से लकड़ी छीन ली—"वकील साहब, पढ़े लिखे होकर यह क्या कर रहे हैं आप? ठौर-कुठौर कहीं लग गई, तो फिर क्या होगा?"

"नहीं, पंडितजी, आप बीच में न बोलिए। मैं इसकी हड्डी-पसली तोड़ दूँगा। क़सूर किया इसने, उसके लिये पश्चात्ताप करना तो दूर रहा, झूठ बोलता है! मैं नहीं छोड़ूँगा इसे।"

गजानन के आ जाने से वसंत को कुछ लज्जा का भान हुआ या सहायता का, उसने रोना बंद कर दिया, और एक कोने में सिमट गया।

"आखिर कारण क्या है? क्रोध का ऐसा आवेश आपकी शोभा कदापि नहीं है। गीता के बहुत बड़े उपासक हैं आप, समय पर जब इसका उपयोग न हुआ, तो मैं क्या कहूँ, वकील साहब!"

"इसी से पूछिए, इसने क्या किया ?"

"क्यों वसंत, क्या बात है ?"

वसंत ने लज्जा से सिर झुका लिया।

"मुँह सूँघिए इसका।"

गजानन वसंत का मुँह सूँघने लगे। रामधन बाबू बोले—"क्या बताऊँ पंडितजी, मैंने हजार मरतबा इससे कह दिया, बीड़ी-सिगरेट मत पिया कर, लेकिन यह लात-घूँसों की बरसात सह लेगा, पर सिगरेट न छोड़ेगा।"

पंडित गजाननजी को आज एक असामी मिल जाने से बड़ा भारी संतोष हुआ। पिता को तंबाकू छोड़ने का उपदेश देते-देते वह हार चुके थे, आज बेटे को चेला बना लेने की उनकी आशा दृढ़ हो गई। उन्होंने वकील साहब के हाथ की लाठी छीन ली, और वसंत को पूरी तरह से अपने आश्रय में लेकर उसका विश्वास जीत लिया। पुचकार कर उन्होंने वसंत से कहा—"क्यो लल्ला, सिगरेट पी तुमने ? सच बोलो। सच बोलने वाला सदैव निर्भय है। तुमने मार सिगरेट पीने के लिये नहीं खाई, झूठ बोलने का यह दंड मिला।"

"कान पकड़, अभी वादा कर कि सिगरेट हाथ से न छुऊँगा,

सिगरेट पीनेवाले लड़कों के साथ न जाऊँगा।"—वकील साहब फिर हाथ उठाकर उसकी तरफ़ बढ़े।

गजानन ने अपने हाथ की ढाल बनाकर वसंत को बचाते हुए कहा—"आप जल्दी न करें। बल-प्रयोग द्वारा कराई गई प्रतिज्ञा से उलटा परिणाम होता है। प्रतिज्ञा जब तक अपने ही हृदय की आवाज़ न हो, उसका कोई मूल्य नहीं है। डॉक्टर जोश यह कहते हैं।"

वकील साहब ने कुछ आशा में भरकर कहा—"हाँ, पंडितजी, आपने छोड़ दी तंबाकू, इसे भी ले जाइए उन्हीं डॉक्टर साहब के पास। वह क्या कहते है?"

"वह कहते हैं, प्रतिज्ञा कराने से पहले पीनेवाले के मन में तंबाकू की बुराइयाँ ख़ूब अच्छी तरह जमा देनी उचित हैं, जिसमें उसे तंबाकू से भारी घृणा हो जाय। जब तक इस तरह भूमि तैयार न होगी, उसमे प्रतिज्ञा का पौधा नहीं पनपेगा, लेकिन अपराध क्षमा हो बाबूजी, एक बात कहूँगा। आज्ञा दीजिए।"

रामधन बाबू ताड़ गए। उनके क्रोध-भरे मुख पर एक क्षीण हँसी की रेखा उदित हो गई—"कहिए न।"

"आप इतने पढ़े-लिखे, क़ानून ही नहीं, तत्त्वज्ञान के भी पंडित। डॉक्टर जोश की पुस्तक 'ज़हर की पत्ती'. के सिवा और भी कई किताबें मैंने आपको पढ़ाईं, अनेक मौखिक व्याख्यान भी दिए, पर आपके हृदय में कभी क्षेत्र तैयार न हुआ।"

मैं एंटी-निकोटीन-सोसाइटी के दो फ़ॉर्म निकाल लाता हूँ। पिता-पुत्र दोनो उस पर दस्तख़त करें, तो बड़ा आनंद आ जाय।"

"पंडितजी, मैं बूढ़ा हो चला। बनने-बिगड़ने के दिन गए मेरे। मेरी तो बात छोड़ दीजिए। जो होना था, सब हो गया। इस बालक का ध्यान कीजिए। इसने बुरी संगति में जाकर सिगरेट पीना सीख लिया। इसकी लत छुड़ाइए पंडितजी।"

"लेकिन संगति तो इसको घर ही में मिल गई।"

चौंककर वकील साहब ने गजानन को तरेरा—"क्या कहते हैं आप ?"

"वकील हैं आप। सत्य की खोज आपका कर्तव्य है। उसके लिये अपने और पराए में आपकी सम दृष्टि होनी चाहिए, तभी तो आपको सत्य के दर्शन होंगे।"

"आपका मतलब क्या है ?"

"मैं कहता हूँ, इस बालक की सिगरेट का श्रीगणेश आप ही ने किया।"

वसंत के चेहरे पर निर्दोषिता चमकने लगी, और रामधन बाबू बौखलाए—"क्या ? क्या ?"

"मैं आपका बड़ा पुराना पड़ोसी और मित्र हूँ। हम दोनो एक दूसरे की भलाई-बुराई को बहुत दिनों से जानते हैं। इस बालक के जन्म के बहुत पहले से आप तंबाकू पीते हैं। आपको रात में बड़ी देर तक क़ानून का अध्ययन करने और मुक़दमों के

लिये नोट लिखने की आदत है। उस समय तंबाकू आपका अटूट साथी है। सुबह और शाम मुवक्किलों के साथ जरूर आप अपने दफ्तर में ही बैठकर बातचीत करते और पढ़ते-लिखते हैं, लेकिन रात को शय्या ही पर आपका दफ्तर खुलता है। अब आप बताइए, लगातार तंबाकू के धुएँ से आपका कमरा भर जाता होगा या नहीं ?"—गजानन ने विराम दिया, और उत्तर के लिये रामधन के मुख की ओर ताका।

"आगे कहिए।"

"और, उस तंबाकू के धुएँ में आपका यह पुत्र शिशु-अवस्था में साँस लेता था। मैं कहता हूँ, क्या उस साँस के द्वारा वह जहर इस बालक के रक्त मे नहीं मिल गया ? यह एक दिन की बात नहीं। आपकी आदत के साथ यह उस शिशु की भी आदत हो गई !"

रामधन बाबू असतुष्ट होकर बोले—'पंडितजी, आप आज तक ग्रह-ताराओं की ही गणना करते थे, अब साइंस के भीतर भी आप पैठने लगे।"

"डॉक्टर जोश की कल्पना है यह। वह कहते हैं, जिन घरों में तंबाकू घुस जाती है, उस घर के तमाम बच्चों में यह संक्रामक रोग की तरह फैल जाती है।"

रामधन बाबू गंभीर हुए, और कहने लगे—"इस बात में कुछ तत्त्व हो सकता है, पंडितजी। लेकिन मैं कारण ढूढ़ने के लिये आपसे नहीं कहता। इसका इलाज कीजिए।"

"मैं इस बालक को डॉक्टर जोश के पास ले जाऊँगा। वह सबसे पहले कारण ही ढूँढ़ते हैं। मुझे यह सारा इतिहास बताना ही पड़ेगा उन्हें। मैं कदापि यह न कहूँगा कि वसंत ने आवारा लड़कों की संगति में इसे सीखा।"

वकील साहब हँसकर बोले—"जो भी चाहें आप, कह दीजिए। इसके पिता ने सिखाई यह लत, बस। वह छूट जानी चाहिए।"

"वह छूट जायगी, लेकिन मुफ्त में नहीं।"

"जब मैं फीस लेता हूँ, तो फीस देने में मुझे कोई हिचक क्यों हो? दूँगा उचित फीस, पूरी-पूरी दूँगा।"

"इस निर्दोष बालक को पीटने के लिये आपके मन में पश्चात्ताप होना चाहिए।" गजानन ने लड़के का हाथ पकड़कर कहा—"चलो, वसंत।"

वसंत की तरफदारी कर गजानन ने उसके हृदय पर अधिकार कर लिया, और वह खुश होकर उनके साथ चला। गजानन घर आए। हाथ की माला ठाकुरजी के मंडप में विश्राम पाने लगी। खड़ाऊँ के बदले पैर में जूता पहना और कुरता, उसके ऊपर सजाई चादर और सिर पर धारण की पगड़ी। श्रीमती से बोले—"भोजन जरा धीरज से बनाना, मैं डॉक्टर साहब के यहाँ जा रहा हूँ।"

"भोजन कर जाइए। आप वहाँ से लौटने में बड़ी देर कर देते हैं।"

"जरूरी काम है। अभी तो तुम्हारी दाल घुली भी नहीं।"

गजानन ने वसंत को इशारा किया, और दोनों डॉक्टर जोश के यहाँ चले। गली पार कर दोनों मेन स्ट्रीट पर बस की प्रतीक्षा करने लगे।

गजानन ने वसंत की पीठ पर हाथ रखकर कहा—"वसंत, तुम्हारे पिता मेरे बहुत दिनों के मित्र हैं, लेकिन मैंने तुम्हारे ही पक्ष का समर्थन किया। सत्य बहुत बड़ी चीज़ है। एक बात का उत्तर दो, जब तुमने पहलेपहल सिगरेट पी थी, वह तुम्हें कितनी स्वादिष्ठ लगी ?"

"स्वादिष्ठ ? उससे मुझे उल्टी हो गई, सिर चकराने लगा, और मैं पेट के दर्द का बहाना कर सो गया, रात को मैंने खाना भी नहीं खाया।" वसंत ने लज्जा से आँखें भूमि पर गड़ाकर कहा।

"आँखें ऊपर कर बात करो। सच्चाई मनुष्य को निर्भयता देती है। मैं तुम्हारी इस लत का कारण तुम्हारे पिता को समझता हूँ।"

वसंत ने अजीब तरह से हँसकर गजानन की ओर देखा। गजानन बोले—"उस विष की पहली साँस से तुम्हें उल्टी हो गई, फिर तुमने उसे क्यों पिया ?"

"क्या बताऊँ पंडितजी, भीतर से कोई माँगता था, उसी ने मुझे बताया कि मैंने बड़े ज़ोर से कश खींचा था। दुबारा जब मैंने उसे पिया, तो डर-डरकर बहुत धीरे-धीरे धुआँ खींचा।"

"धीरे-धीरे जंगली हाथी भी वश में हो जाता है। गिरकर ही चलना सीखा जाता है।" गजानन ने वसंत की पीठ ठोकर

कहा—"वसंत, यह भयानक विष मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। एन्टी-निकोटीन-सभा में लटकते हुए तमाम नक्शे, चार्ट और तस्वीरें देखोगे, तो तुम्हें पता चलेगा—यह मानव का महान् शत्रु किस तरह उसके स्वास्थ्य, संपत्ति और धर्म को क्षीण करता जा रहा है।"

वसंत चुपचाप सुन रहा था, बड़े मनोयोग से।

गजानन बोले—"अभी तुम इसके नए शिकार हो, बड़ी आसानी से इसकी जड़ मन में से उखाड़कर फेंक सकते हो। कुछ भी कठिनता न होगी। एक बार इस सर्पिणी को पहचान लोगे, इसके भयानक विष की कल्पना कर लोगे, तो इसके लिये तुम्हारे मन में घृणा पैदा हो जायगी, और यह आप-से-आप छूट जायगी।"

दोनों बस में बैठकर जाने लगे। गजाननजी ने फिर उसी विषय पर बातचीत छेड़ी—"डॉक्टर जोशी एक विचित्र व्यक्ति हैं। उनके त्याग और तपस्या का लोहा एक दिन सारी दुनिया को मानना पड़ेगा। इस जहर के खिलाफ वह रात-दिन सोचते रहते हैं। सोते-जागते यही केवल एक भावना, मानो संसार में और कोई वस्तु ही नहीं। उनसे आँखें मिलाते ही तुम्हारी यह लत छूट जायगी। एक लेक्चर सुना नहीं कि तुम अपने को सर्वथा एक नवीन जीवन में साँस लेता हुआ पाओगे। इस तंबाकू के जहर को मारने के लिये कई दवाइयाँ उनके पास हैं। मेरी उतनी पुरानी लत? मैंने उन्हीं की मदद से

उस पर विजय पाई। तुम अपने जीवन में इसे बड़े सौभाग्य की घड़ी समझो कि आज तुम्हारा संयोग प्रोफेसर जोश के साथ होगा।"

इसी तरह तमाम रास्ते-भर गजानन वसंत का उत्साह बढ़ाते हुए चले कि बस आखिरी स्टॉप पर ठहरी, और वे दोनो उससे उतर गए। दूर ही से पंडितजी ने वसत को 'दि जयहिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' की इमारत दिखाकर कहा—"वह ऊँची इमारत देख रहे हो न ?"

वसंत ने चौंककर कहा—"वही है क्या आपकी सोसाइटी ?"

"नहीं, वह तो इसी बीड़ी राक्षसी की फ़ैक्टरी है। उसकी बगल में वह जो साइनबोर्ड देख रहे हो, वही है डॉक्टर जोश की एंटी-निकोटीन-सोसाइटी। अभी एक शिशु के रूप में है, जिस दिन अपनी पूरी ताकत से काम करने लगेगी, उस दिन फिर यह फैक्टरी ठहर नहीं सकेगी इसके सामने।"

डॉक्टर जोश अपनी लेबोरेटरी मे दो असामियों के साथ बैठे थे। डॉक्टर जोश की चर्चा का विषय कभी राजनीति, धर्म-शास्त्र या अर्थ-नीति नहीं होता था। निकोटीन के विष से संबद्ध होकर ही कभी उनका उल्लेख हो गया, तो हो गया। उन दोनो नए असामियों को अपने कमरे की परिक्रमा कराकर उन्होने तमाम चित्र और चार्ट समझा दिए थे, और अब वह बैठकर कुछ और तथ्य उन्हें बता रहे थे। वे दोनो सज्जन कदाचित् सिगरेट छोड़ देने के उद्देश्य से डॉक्टर साहब की मदद लेने के लिये वहाँ आए थे।

गजाननजी ने वसंत के साथ कमरे में प्रवेश किया, और हाथ जोड़े। जोश ने अभिवादन का उत्तर देते हुए कहा—"आइए पंडितजी, आज कई दिन बाद पधारे। तबीयत तो ठीक है न?"

"आपका अनुग्रह है बिलकुल ठीक हूँ।"

जोश ने दो कुरसियों की तरफ संकेत किया। पंडितजी वसंत के साथ उन पर विराजमान हो गए। जोश उन दोनों सज्जनों से कहने लगे—"इनसे पूछिए, जन्म-भर के तंबाकू के आदी थे यह। दिन-रात पीते थे। एक दिन समझ में आ गई, छोड़ दिया उसे। तब से उसके निकट जाना घोर पाप समझते हैं। क्यों पंडितजी, क्या तकलीफ हुई?"

"कुछ भी नहीं, बल्कि दुश्मन को परास्त करने में बड़ा आनंद आया डॉक्टर साहब—लेकिन सब आपकी कृपा और सहायता से।"

"दो-तीन महीने जरूर कुछ तकलीफ हुई इन्हें। लेकिन मैं इनके साहस की तारीफ़ करूँगा। जन्म-भर का हड्डियों में बसा हुआ शत्रु इन्होंने दृढ़ इच्छा-शक्ति से निकाल बाहर कर दिया। अब इनके चेहरे पर आत्मतृप्ति और शुद्ध स्वास्थ्य की दोहरी चमक आ गई।"

"डॉक्टर साहब, मैं तो नवीन यौवन को लौटा लाया हूँ, आपके प्रसाद से।"

डॉक्टर जोश बोले—"तबाकू का नशा इंसान को एक झूठी

लहर देता है, जो उसकी निरंतर की कल्पना और अभ्यास से उसे एक असलियत-सी जान पड़ती है। वह हमारे खून की तमाम चीनी चट कर जाता है। हमारे दिल और दिमाग़ को खोखला कर देता है। हम समझते हैं, वह फुर्ती लाता है। चुस्ती नहीं, सुस्ती लाता है। हमारे विचार को धुँधला कर देता है। भले-बुरे की पहचान भुलाकर वह हमारे विवेक को नष्ट, भ्रम बढ़ाकर ज्ञान को भ्रष्ट, चेतना को क्षणिक जोश देकर स्मृति को चौपट कर देता है। यह पायरिया पैदा कर पेट और रक्त के प्रवाह में विष फैला देता है। यह ग्लैंडों को मुरदार कर देता है। कैंसर, हाई ब्लड प्रेशर, दिल की धड़कन, नेत्र रोग, अनिद्रा, पागलपन आदि इसके वरदान हैं।"

गजानंन ने उपस्थित सज्जनों का परिचय पूछा।

जोश ने एक लंबे बाल-धारी, क्लीन-शेव व्यक्ति की तरफ़ इशारा कर कहा—"यह हैं कवि श्रीकंपनजी। आप सिनेमा-कंपनियों के लिये गाने तथा रेडियो के लिये नाटक और फीचर लिखते हैं। आपका कहना है, बिना सिगरेट का दम लगाए आपकी फाउंटेन पेन बाल-भर भी आगे नहीं सरकती।"

'बिलकुल झूठ, सरासर भ्रम! कविता-नाटक के सिर पैर तो कुछ लिखता नहीं, लेकिन क़लम से जरूर काम पड़ता है मेरा। मैं जन्म-कुंडलियाँ और वर्ष-फल बनाता हूँ। मैं भी पहले यही समझता था कि मेरे दिमाग़ के साथ सारा ग्रह-मंडल भी तंबाकू के धुएँ से ही गतिशील है। लेकिन यह एक कोरे वहम का पुतला

जमा रक्खा था मैंने, जो मेरी प्रगति का प्रकाश-स्तंभ नहीं, मार्ग की ठोकर था। तंबाकू हमारी बुद्धि पर मैल थोप देती है। हम साफ और सही सोच ही नहीं सकते उसकी संगति से। खुलती हुई सोडे की बोतल का-सा एक जोश जरूर उठता है, जो फौरन जमा को भी बहाकर, सारी गैस निकाल ठंडा पड़ जाता है। आप इसे छोड़ देने की नीयत से ही यहाँ आए होंगे।"

कविजी बोले—"हाँ, मुझे ब्लड प्रेशर हो गया है। डॉक्टरों ने सिगरेट छोड़ देने की राय दी है।"

दूसरे सज्जन, जो बालदार ऊँची बाड़ की टोपी पहन थे, दाढ़ी-मूँछों पर पूरे सप्ताह के बासी बाल थे, बोले—"कुछ और प्रेशर भी है।"

"और प्रेशर कैसा?"

"इकॉनोमिक प्रेशर। कहीं बँधी हुई नौकरी तो है नहीं हमारी; फ्री लांसिंह करते हैं। आमदनी ही अब वैसी नहीं, फिर उस पर कमीशन देना पड़ता है।"

"जो भी हो, छोड़ दीजिए, सिगरेट छोड़ दीजिए। मैंने एक ही मिनट में छोड़ दी थी। फिर देखिए, कैसी बढ़िया-बढ़िया कविताएं और नाटक आपके दिमाग़ में चमक उठेंगे।" गजानन ने दूसरे सज्जन की तरफ संकेत कर पूछा—"आपकी तारीफ़?"

डॉक्टर साहब ने प्रत्युत्तर में कहा—"आप हैं श्रीभभूतजी पेंटर। यह कलाकार हैं। कंपनजी जो कुछ हरूफ़ों की मदद से

बनाते हैं, यह वैसा ही रेखा और रंग से पैदा करते हैं। इनकी भी बिलकुल ऐसी ही कहानी है।"

"मैं समझ गया। अंतर केवल इतना ही है, इनके हाथ में फ़ाउंटेन की जगह किसी जानवर की पूँछ के बाल हैं। क्यों पेंटर साहब, बिना दम लगाए आपका बुरुस भी आगे को नहीं सरकता?" गजानन ने कहा।

डॉक्टर साहब बोले—"कलाकार बंधन के भीतर नहीं पैदा होता। रुपैया, रूप और नशा—ये उसकी सीमाएँ नहीं हैं। वह आकाश की भाँति अनंत और असीम है। वह जनता का मार्ग-दर्शक है। यदि अंधकार में पड़ा हो, तो वह स्वयं अपना भार और अपनी ठोकर है। इसलिये आप लोग अपने कर्तव्य को पहचानिए, अपने स्वरूप का निर्णय कीजिए, और इस बोझ को धरती पर पटक दीजिए। भगवान आपकी मदद करेंगे।"

भभूतजी बोले—"छुड़ा दीजिए डॉक्टर साहब, हम बड़ी आशा और भरोसे से आपकी शरण में आए हैं।"

"एक मरीज़ को मैं भी लाया हूँ डॉक्टर साहब।" गजानन बोले।

डॉक्टर जोशी ने बसंत का मुँह खुलवाकर परीक्षा की, पलकें उठाकर उसकी आँखों का निरीक्षण किया, तदनंतर बोले—"क्यों जी, तुम्हारी यह उठती हुई उमर! कब से पीते हो सिगरेट? बुरी संगति में पड़ गए—शायद माता-पिता की असावधानी या अभाव से?"

"अभाव किसी का नहीं डॉक्टर साहब, और संगति—आपको आश्चर्य होगा, पिता श्री की।"

"अच्छा।"

गजानन ने कविजी से कहा—'ऐसे नाटक नहीं लिख सकती आपकी कलम ? दिल के दर्द तो बहुत लिख चुके आप। जो पिता—अभिभावक अपने घर को सिगरेट के धुएँ से भर देते हैं, क्या वे अपने अबोध बालकों को उस जहरीले वातावरण में साँस लेने को विवश नहीं कर देते ? या दूसरे शब्दों में—वे उनके सिगरेट के गुरु नहीं है ?"

"जरूर है। जरूर है। मैं कब से यह चिल्ला रहा हूँ।"—डॉक्टर बोले।

'कविजी, ऐसे विषयों पर आप नाटक लिखे, तो समाज के प्रति आपके कर्तव्य पूर्णता को प्राप्त हो। लेकिन सिगरेट की मदद से न लिख सकेंगे आप।" गजानन ने डॉक्टर जोश की तरफ मुँह किया—'यह लड़का ऐसा ही इतिहास रखता है। मैंने इसकी बुरी आदत छुड़ाने का उत्तरदायित्व लिया है, आप ही के भरोसे डॉक्टर साहब।"

"मेरी और आपकी कोई शक्ति नहीं पंडितजी, जब तक यह इस लत को एक गंदगी न समझे, इसके मन में इसके लिये घृणा न पैदा हो जाय, यह इसे छोड़ नही सकता। प्रत्येक लत इसी बुनियाद पर पनपती रहती है, उसका शिकार उसे एक वरदान समझता है। क्यों कविजी, इंस्पिरेशन—प्रेरणा

निकोटीन के धुएँ में है न ?"—डॉक्टर साहब ने कंपनजी से पूछा।

कवि और पेंटर ने इधर-उधर नजर दौड़ाई।

जोश ने कहा—"जब कलाकारों ने अजंता को छील डाला, या पिरामिडों को हवा में उठा दिया, तब निकोटीन से उनकी पहचान नहीं थी।"

कवि बोला—"निकोटीन लफ्ज न होगा, पेड़ तो होगा ही धरती पर।"

"मैंने तो कहीं नहीं पढ़ा। नशेबाज अपने लिये एक धोखा पैदा कर लेता है, और समझता है, उसके विचार और कल्पना में नशे के कारण गहराई उपजती है। संसार में अनेक कवि, कलाकार और वैज्ञानिक ऐसे भी हुए हैं, जिन्होंने हमेशा किसी प्रकार के नशों का सेवन नहीं किया, और उनकी कृतियों की सारी दुनिया क़ायल है। उनका पक्का विश्वास था, तमाम नशे मनुष्यों के मन और शरीर, दोनों के बलों के महान् घातक हैं। इसलिये हे कलाकारो! मैं इस नशे के छुडाने में आपकी पूरी-पूरी मदद करने को बिना किसी लालच के तैयार हूँ। लेकिन पहले आपने इसे जो अमृत का बाना पहनाया है, उसे उतारकर इसकी नंगी भयानकता का अपने में विश्वास उपजाना होगा। अभी कुछ भी नहीं बिगड़ा है।"

कवि कंपनजी ने जेब से सिगरेट निकालकर एक भभूतजी को दी, और दूसरी का एक सिरा दियासलाई की डिबिया में सम-

तल करते हुए बोले—"हां, डॉक्टर साहब, जरूर हम इसे अब छोड़ ही देंगे।"

भभूतजी भी होंठों में सिगरेट लेते हुए बोले—"और, मैं भी पक्का विश्वास कर चुका हूँ।"

डॉक्टर जोश उनको वर्जित करते हुए कहने लगे— 'हैं ! हैं ! यह आप क्या कर रहे हैं ?"

"जब आप कोई रास्ता दिखावेंगे, तभी तो।"

डॉक्टर जोश की भौंहे तन गईं—"हाँ, रास्ता वही है, जिधर से आप यहाँ आए हैं।"

दोनों एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। गजानन ने बड़ी रुखाई से कहा—"आश्चर्य है, आप आए हैं एंटी-निकोटीन सभा में सिगरेट छोड़ने, और कुछ क्षण भी सिगरेट के बिना नहीं रह सकते ! इसलिये अभी आप इसी रास्ते से जाइए। जान पड़ता है, अभी आपके सिगरेट छोड़ देने की घड़ी नहीं आई है।"

दोनों बड़बड़ाते हुए अपमान जानकर चल दिए। जोश बोले—'ये हमारे कलाकार हैं। इन्होंने कला को विषय-विलास समझ रक्खा है। विदेशी कला का अंधानुकरण ही इनका आदर्श है। उसमें जान पैदा नहीं होती, न वह भारतीय जीवन से मेल ही खाता है—इसीलिये वह जनता के जागरण और प्रगति में सहायक नहीं होता। इनके तीव्र जीवन से जब प्रकृति इनके स्वास्थ्य को अपने दंड के रूप में वसूल करती है, तो ये उसे तब

भी नहीं छोड़ सकते। देखा तुमने, नहीं छोड़ सके। और, ये अपने को स्रष्टा—कलाकार कहते हैं—देश काल के नायक, अपने अंग की एक गंदी आदत को मिटा नहीं सकते। इनके बनाए हुए नमूनों पर पब्लिक किधर जायगी ? ये हमारी आजादी के उजाले हैं !"

गजानन अपनी ही धुन में बोले—"डॉक्टर साहब, यह बालक आपकी शरण है। इसका भी उपकार कर दीजिए।"

"हाँ, पंडितजी, यह एक बालक ही नहीं, मेरी आँखों के आगे आज भारत के करोड़ों बालक और नौजवान हैं। मैं स्कीम बना रहा हूँ। यदि देश के बच्चों को मैं इस जहर से छुटा सका, तो मैं अपने परिश्रम और सेवा को विश्वव्यापी बनाकर ही चैन लूँगा—आज नौजवानों और बालकों पर ही मेरी दृष्टि टिकी है, अपनी सफलता के लिये। क्या नाम है इनका ?"

"वसंत—यह बाबू रामधन वकील के सुपुत्र हैं। दसवें दरजे में पढ़ते हैं।"

"वसंत, सिगरेट में ऐसा कौन-सा गुण है कि तुम्हें उसे छोड़ते हुए संकोच होता है। सच-सच कहो, कोई दबाव या जबरदस्ती नहीं है हमारी।"

"मैं छोड़ने को तैयार हूँ, यही नहीं छूटती।"—वसंत ने उत्तर दिया।

"तुम सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ चेतना, तुम मनुष्य का रूप हो। भगवान् के तेज की चिनगारी तुम्हारे भीतर मौजूद है। तुम उसे

छोड़ने को तैयार हो, पर यह निर्जीव सिगरेट की जड़ता तुम्हें नहीं छोड़ती। हे बालक, यह कैसा निरर्थक तर्क है। क्या तुम फिर इस पर विचार न करोगे? घर लौटकर इसे सोचो, फिर मेरे पास आना।"—डॉक्टर जोश ने कहा।

गजानन ने कहा—"वसंत, क्या तुम इसे नहीं छोड़ सकते? चलो मेरे साथ। मैं तुम्हें इन चार्ट और चित्रों में कुछ भयानक सत्य और सर्वनाशी अंक दिखाऊँगा।"

गजानन वसंत को साथ लेकर उसे कमरे का एक-एक चित्र दिखाने लगे। डॉक्टर जोश भी उनके साथ हो लिए। सब कुछ दिखा चुकने पर गजानन ने वसंत से पूछा—"क्या विचार है?"

पिता का डर था, या गजानन का आग्रह, या डॉक्टर जोश का व्यक्तित्व। बालक वसंत कहने लगा—"मैं छोड़ दूँगा।"

जोश कहने लगे—"कोई जल्दी नहीं। तुम्हारे मन में इसके लिये सच्ची घृणा का पैदा होना आवश्यक है।"

"वह हो गई है।"—वसंत ने कहा।

"क्या तुम अपने इस वाक्य की गंभीरता समझते हो? प्रतिज्ञा तोड़ देनेवाले से प्रतिज्ञा न करनेवाला मनुष्य श्रेष्ठ है।"—जोश ने कहा।

"मैं अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहूँगा।"

"शपथ लोगे कोई?"

"शपथ न लूँगा।"

"शाबाश! साक्षी बनाओगे किसी को?"

"आपको, पंडितजी को और भगवान् को। भगवान् से नित्य आशीर्वाद के लिये प्रार्थना करूँगा।"

"तुम धन्य हो बालक! तुम्हारा दरजा इन झूठे, पाखंडी कलाकारों से कहीं बढ़कर है।" डॉक्टर जोश ने 'ज़हर की पत्ती' की एक पुस्तिका निकाली, और उसमें लगे हुए दो फ़ॉर्मों पर वसंत के दस्तख़त कराए। साक्षी-रूप से गजानन और डॉक्टर जोश ने भी उस पर हस्ताक्षर किए।

वसंत का नाम इत्यादि डॉक्टर जोश ने एक और रजिस्टर में भी अंकित किया। उसके प्रतिज्ञा-पत्र की दोहरी कॉपी फाड़कर एक अपनी फाइल में चिपकाई, एक उसी के पास प्रतिज्ञा की स्मृति के रूप में रहने दी।

"वसंत, भगवान् तुम्हारी सहायता करें। तुम आज से एक नवीन जीवन में प्रविष्ट हुए हो। यह 'ज़हर की पत्ती' पुस्तिका ले जाओ। सुबह-शाम, दोनो वक्त एक धार्मिक पुस्तक की भाँति इसका पाठ करना। इससे तुम्हारी घृणा इस ज़हर के प्रति दिन-दिन बढ़ती जायगी, और तुम्हारे मनोबल का विकास होगा। जब तुम्हारा मनोबल दृढ़ हो जायगा, तो तुम निरंतर अपने स्कूल की परीक्षाओं में सफल होते जाओगे।" डॉक्टर जोश ने कुछ विराम देकर कहा—"यदि कभी इस राक्षसी ने तुम्हें पराजित कर दिया, और तुम अपनी प्रतिज्ञा तोड़ने के लिये तैयार हो गए, तो तुरंत मेरे पास आना। वसंत, डूब न जाना, मैं तुम्हें उपाय बताऊँगा। अच्छा, अब तुम जा सकते हो।"

गजानन ने डॉक्टर साहब को हाथ जोड़कर कहा—"यह बड़ी कृपा आपने मेरे ऊपर की है। मैं निरंतर वसंत का देख-रेख करूँगा।"

वसंत ने भी उन्हें हाथ जोड़े। दोनो एंटी-निकाटीन-सोसाइटी से बाहर हो घर की ओर चले। दोनो के पग अभूतपूर्व उत्साह के साथ मार्ग में पड़ते जा रहे थे।

[चौदह]

उस दिन निकोटीन देवी के मंदिर मे सेठजी के व्याख्यान और आश्वासन से कुछ दिन के लिये बीड़ी लपेटनेवालों के बीच मे शांति फैल गई, पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, फिर धीरे-धीरे उनके बीच में असंतोष सुलगने लगा।

बीड़ी लपेटने के हॉल में, लाइब्रेरी में, रसोईघर में, स्नानागार मे, खेल के मैदान मे, जहाँ मौका मिलता, व फिर दो विभागों के बीच की उस ऊँची और बनावटी दीवार को ढा देने के लिये उपाय सोचते। सेठजी के सांत्वना के शब्दों की प्रतिध्वनि उनके मानस मे दूर पड़कर खो गई, और फिर उनके नारे ऊँचे होने लगे। वे जब एक दूसरे से सुबह मिलते, तो नमस्ते की जगह पहला कहता—"दरवाजा खोल दो।" और दूसरा प्रत्युत्तर में कहता—"दीवार तोड़ दो।" केवल एक मंतू ही इसका अपवाद था। उस बेचारे को अलग-ही-अलग उनकी छाया बचाकर रहना पड़ता था।

मंतू सुबह, घंटी बजने से भी पहले, उठ जाता, और तमाम कार्यक्रमों मे सबसे पूर्व और सबसे अलग शामिल होता। सुपरिंटेडेंट को उसकी दाँतों मे जीभ की-सी रहनि ज्ञात थी। पर वह और लड़कों के बहुमत के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते थे।

कई बार उन्होंने उस बहुमत को तोड़ देने की चेष्टा की, पर कभी सफल नहीं हुए।

वैसे सुपरिंटेंडेंट थे उदार वृत्ति के, पढ़े-लिखे और समझदार। वह सेठजी के दो विभागों की नीति को एक बड़ी पुरानी लीक समझते थे। इसके द्वारा वह जिस लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते थे, इससे उसका उल्टा ही प्रभाव फैल रहा था। लड़कों के निकट संसर्ग में रहने से सुपरिंटेंडेंट को इसका पता था, पर सेठजी की कल्पना उनकी बनावटी विनय को छेदकर सच्चाई को न पा सकती थी।

सुपरिंटेंडेंट लाचार थे। सेठजी को तर्क से पराजित कर उनके मूल सिद्धांतों में उलट-फेर नहीं करा सकते थे। लड़कों की कोई शिकायत भी सेठजी के सामने नहीं करना चाहते थे वह; क्योंकि वे चालाक लड़के सुपरिंटेंडेंट साहब के आदर तथा अनुशासन की रक्षा करते हुए ही अपना आंदोलन जारी रखते थे।

एक दिन नौजवान ने अपने साथियों से कहा—"भाइयो, इस तरह इस चुप आंदोलन से शीघ्र कोई फूल फलनेवाला नहीं है। अगर किसी तरह हम अपना उद्देश्य और अपने नारे इस दूसरे विभाग में पहुँचा सकते, तो संभव है, वे भी हमारे आंदोलन से सहानुभूति रख हमारी शक्ति दूनी कर देते। लेकिन समस्या है, किस तरह उन्हें यह समझाया जाय?"

बिच्छू बोला—"तुम एक लेख बनाओ। एक लिफाफे में रखकर आरती के समय उन्हें दे दिया जायगा। लेकिन लेख

बहुतं बढ़िया क[illegible]—गागर में सागर । शंकर बहुत साफ और सुंदर लिखता है।"

नौजवान ने कहा—"लेकिन लिफाफा दोगे कैसे ? हमारी और उनको, दोनों की आँखों में पट्टियाँ बँधी हुईं। अगर कहीं सुपरिंटेंडेंट साहब के हाथ लग गया, तो?"

बिच्छू हँसा—"उनका तो कोई डर नहीं है, कहीं सेठजी ने देख लिया, तो?"

उस दिन बात वहीं पर छोड़ दी गई। लेकिन लड़कों का दल उस आग को लड़कियों के विभाग में किस तरह फैला दिया जाय, इस प्रश्न पर निरतर विचार करने लगा।

एक दिन, जब लड़के-लड़कियों के खेल का घंटा था, नौजवान को एक विचार सूझा। उसने चुपचाप बिच्छू से कहा—"बिच्छू, लेटर-बॉक्स मिल गया चिट्ठी ले जानेवाला।"

बिच्छू बोला—"कहाँ ?" वह फ़ुटबॉल मे पंप से हवा भर रहा था।

नौजवान ने जवाब दिया—"आज लड़कियों का भी फ़ुटबॉल है। सुन रहे हो न, दीवार के उधर बीच-बीच में फ़ुटबॉल की किक ?"

बिच्छू ने उधर कान लगाकर कहा—"हाँ।"

नौजवान फ़ुटबॉल के तसमे बाँधता हुआ बोला—"यही है डाकख़ाना।" उसने गेंद दोनों हाथों से कंधे तक उठाकर उस ऊँची दीवार के ऊपर फेंकने का इशारा किया।

"मैं समझ गया !" बिच्छू खुश होकर चिल्लाया—"दीवार टूट गई, डाकखाना ज़िंदाबाद ! चिट्ठी फ़ुटबॉल के तस्मे में बाँध दी जायगी। लेकिन चिट्ठी तो लिखो। अभी बढ़िया मौक़ा है।"

"चिट्ठी अभी नहीं, फिर ।" नौजवान ने अपने हाफ़ पैंट की जेब से एक चॉक की बत्ती निकाली, और फ़ुटबॉल में बड़े-बड़े अक्षरों मे लिखा—"हमसे मैच लड़ो, तो हम जानें !"

खेल का समय निकट होने से दो-चार लड़के और आ गए वहाँ। फागुन ने पूछा—"कमांडर साहब, क्या हो रहा है ?"

"तारबर्की ।"—बिच्छू कहने लगा ।

"आज तुम्हारे पैरों की परीक्षा है ।"—फ़ुटबॉल हाथ मे लेकर नौजवान उठा, और उसने दूसरे हाथ से लंबी सीटी बजाई ।

सब लड़के आ पहुँचे। आज दोनों विभागों के सुपरिंटेंडेंट सेठजी के पास गए हुए थे, किसी परामर्श के लिये । नौजवान ही उनका प्रतिनिधित्व कर रहा था।

उसने गेंद पाँचो उँगलियों में ऊपर उठाकर कहा—"दोस्तो, है क्या तुममे ऐसा कोई वीर-बली, जो इस फ़ुटबॉल में किक मारकर पहुँचा दे दीवार के उस पार, लड़कियों की फील्ड में ? आज यही परीक्षा है तुम्हारे ब्रह्मचर्य की ।"

दयाल एक तरफ खड़े हुए संतू का हाथ पकड़कर ले आया—"यह संतू है ब्रह्मचारी। कमांडर, इसे दो गेंद ।"

संतू शरमाकर पीछे हट गया। सब लड़कों ने ताली बजा दी।

बिच्छू ने जमीन पर हाथ टेककर चार-पाँच दंड पेले। फिर हाथ जोड़कर बोला—"जय बजरंग बली! आज लाज तुम्हारे हाथ है।" उसने नौजवान से गेंद ले लिया, और उसमें तान-कर ऐसी किक मारी कि गेंद दीवार के उस पार।

संतू को छोड़कर सब चिल्लाए—"दीवार तोड़ दी!"

अब सब लड़के कौतूहल-पूर्वक फ़ुटबॉल के भविष्य की कल्पना करने लगे। नौजवान ने कहा—"बस, आज यही खेल होगा।"

शंकर ने कहा—"अगर फ़ुटबॉल न लौटा, तो?"

घबराकर कुछ लड़के चिल्ला उठे—"क्यों न लौटेगा?"

दयाल ने जवाब दिया—"लड़कियों की किक में ऐसा जोर होगा, इसका विश्वास है तुम्हें?"

नौजवान बोला—"अकेले हमने ही थोड़े उड़ाया है 'दि जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' का माल।"

कुछ देर तक सबने प्रतीक्षा की, गेंद नहीं लौटा। अब लड़कों मे विचार होने लगा।

एक बोला—"मुश्किल है।"

दूसरे ने कहा—"लगन के आगे मुश्किल कुछ नहीं।"

नौजवान ने गंभीरता के साथ दीवार के उधर कुछ सुनते हुए कहा—"लेकिन लड़कियों का खेल रुक गया जान पड़ता है। फ़ुटबॉल के शब्द अब नहीं सुनाई दे रहे है। जरूर वे अपने

बीच में हमारे गेंद को पाकर उसे यहाँ लौटा देने की समस्या को हल कर रही है।"

अचानक 'भद' के शब्द के साथ उनका फुटबॉल उनकी फील्ड में आ टपका। नौजवान ने दौड़कर फुटबाल उठा लिया। उसमें एक काग़ज़ का पुरज़ा अटका था। उसे खोलकर पढ़ा गया। लिखा था—"डरती है क्या हम ? सेठजी से मैच की इजाज़त माँगो, तो पोल खुल जायगी।"

सब लड़के उछलकर चिल्लाए—"दरवाज़ा खुल गया !"

लेकिन संतू बड़े भय से उधर देख रहा था।

नौजवान ने दयाल से कहा—"देखी तुमने लड़कियों की किक।"

दयाल ने कहा—"किक से हरगिज़ नहीं आया। उसकी आवाज़ भी नहीं सुनी गई।"

बिच्छू बोला—"फिर आया कैसे ?"

दयाल ने उत्तर दिया—"किसी बाँस पर अटकाकर फेंक दिया गया इधर।"

नौजवान बोला—"डाक चलने से मतलब है, पैर से चली हो, या पर से उड़ी हो—इससे क्या वास्ता। जवाब सोचो, इसका जवाब।"

फागुन ने कहा—"सेठजी को एक अर्ज़ी फिर दो।"

बिच्छू बोला—"वह फिर एक लेक्चर झाड़ देंगे, देवी निको-टीन के मंदिर में।"

नौजवान ने संतू से कहा—"आप बताइए, क्या लिखें। ये लड़कियाँ आपकी पोल खोल देने को कहती हैं। और आप ब्रह्मचर्य का ही शंख फूँक रहे हैं।"

संतू बोला—"मैं कुछ नहीं जानता। जो मन में आवे, करो।"

बिच्छू ने पूछा—"सेठजी या सुपरिंटेंडेंट साहब से शिकायत तो न करोगे?"

"शिकायत कैसी?" संतू बोला—"मैं तुम्हारे साथ भी नहीं हूँ, और ख़िलाफ़ भी नहीं।"

नौजवान ने पूछा—"यह तो हम जानते ही हैं। एक बात बताओ। जब लड़कियों से हमारा मैच ठन गया, तब लड़कियों के साथ तो न हो जाओगे?"

"मैं लड़की हूँ क्या?"—संतू ने जवाब दिया।

"तब दूसरे शब्दों में तुम हमारे ही साथ हो। थैंक यू संतू।" बिच्छू ने कहा।

नौजवान बोला—"शोर न करो। लड़कियों की यह भयानक चुनौती है। कोई जवाब सोचो। इस तरह लड़कों की लुटिया डूब गई, तो सारे शहर में बदनामी फैल जायगी।"

"हम हारनेवाले नहीं हैं।"—एक ने कहा।

"लेकिन मैच कैसे हो?"

"दीवार टूट गई! फिर कैसे न होगा?"

नौजवान ने एक काग़ज़ और पेंसिल मँगाकर लिखा—"यह

एक बहाना है, सेठजी से इजाज़त लो, तो हम जानें तुम्हारी लियाकत ?"

वह पुरज़ा फ़ुटबॉल में खोंसा गया, और बिच्छू ने फिर दो किकों में उसे उस पार पहुँचा दिया। फिर सबने कुछ देर तक इंतज़ार किया। इस बार कुछ जल्दी ही फ़ुटबोल लौट आया। जवाब में जो पुरज़ी मिली, उसमें लिखा था—"मंज़ूर है। हम सेठजी से इजाज़त भी ले लेंगी।"

अब तो लड़कों की ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा। नौजवान बोला—"अभी कुछ समय है। लड़कियाँ अवश्य किसी तरकीब से मैच खेलने के लिये आज्ञा ले लेंगी। इधर हम भी जोर लगावेंगे, उधर से उनका भी अनुरोध होगा, तो सेठजी मान जायँगे। इसलिये हमको रोज़ कसकर फ़ुटबॉल की प्रैक्टिस करनी चाहिए। अगर कहीं लड़कियों ने हमें हरा दिया, तो नाक कट जायगी।"

"हिप-हिप-हुरे!"—सब लड़के फ़ुटबॉल खेलने लगे।

लड़कों से मैच की चुनौती पाकर लड़कियों के दल में हलचल मच गई। जैसे इधर का कमांडर नौजवान था, वैसे उधर की लीडर चंपा थी।

चंपा बोली—"हम सब मिलकर सेठजी की सेवा में एक प्रार्थना-पत्र क्यों न भेजें ?"

बिजली चंपा का दाहना हाथ थी, जैसे बिच्छू नौजवान का। वह कहने लगी—"क्या लिखोगी ?"

चपा ने कुछ सोचकर जवाब दिया—"नहीं, लिखेंगी कुछ नहीं। इससे हमारी गरज जाहिर होगी, और हमारा पक्ष कमजोर पड़ जायगा। माँगने से कुछ मिलता भी नहीं है।"

बिजली बोली—"फिर कैसे होगा ? हमने तो उन्हें बड़े जोश में आकर लिख दिया कि हम सेठजी से मैच की इजाजत ले लेंगी।"

सब लड़कियों ने गुपचुप सलाह की, कुछ निश्चय किया। दूसरे दिन से एक-एक कर सभी लड़कियाँ धीरे-धीरे बीमारी का बहाना कर बिस्तर पकड़ने लगी।"

सेठजी को जब यह खबर मिली, तो उन्होंने आकर इसका कारण पूछा। चपा ने कराहते हुए उत्तर दिया—"इसका मूल कारण है, हमारे व्यायाम का यथोचित इतजाम न होना।"

"क्यो नहीं है ? ड्रिल होती है, हॉकी, फुटबॉल का भी प्रबंध है। फिर लड़कों के विभाग में भी वही प्रबंध, वे तो सब-के-सब ठीक हैं।"—सेठजी ने कहा।

"लड़के अतिरिक्त कूद-फाँद मे अपनी कमी पूरी कर लेते होंगे, हमें यह आजादी कहाँ ? फिर आपस के खेल से कुछ नहीं होता। जब तक किसी दूसरी पार्टी से प्रतिद्वंद्विता न हो, खेल में संघर्ष उत्पन्न हो नहीं होता।"—चपा ने कहा।

सेठजी ने कहा—"तुम आपस मे दो पार्टियाँ बना लो।"

बिजली ने कहा—"कुल आठ लड़कियाँ हुईं हम। दो पार्टी बना ली गईं, तो आधी हो गईं, चार-चार! टेनिस खेला जा सकता है।"

सेठजी बोले—"तो उसका प्रबंध हो जायगा।"

चंपा बड़ी विनम्रता से कहने लगी—"टेनिस तो गुड़ियों का खेल है। फिर, एक ही वर्ग की लड़कियों के बीच में कोई प्रतिद्वंद्विता नहीं हो सकती। और बिना प्रतिद्वंद्विता के जीवन में उन्नति नहीं पैदा होती। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है।"

सेठजी चौंक पड़े—"मनोविज्ञान तो तुम्हारे पाठ्य-क्रम में नहीं रक्खा गया था।"

चंपा—"जनरल नॉलेज में कुछ पढ़ा दिया मास्टर साहब ने।"

सेठजी अपने मन में कहने लगे—"बड़ा भयानक विज्ञान पढ़ा दिया गया इन लड़कियों को। मास्टरों का भी कोई क़सूर नहीं है, एक विषय दूसरे विषय के साथ संबद्ध जो है।"

कुछ देर गंभीर रहने पर सेठजी बोले—"तो तुम बाहर किन्हीं से मैच खेलना चाहती हो?"

"सप्ताह में एक दिन भी हो, तो पर्याप्त होगा।"

"अच्छी बात है। लड़कियों के स्कूलों से कभी-कभी तुम्हारा मैच तय कर दिया जायगा। लेकिन वे लड़कियाँ यहाँ आकर तुम्हें फिर कुछ और—" सेठजी बिना कुछ आगे कहे चुप हो गए।

बिजली पड़े-पड़े बोली—"कभी हम उनके स्कूलों में चली जायँगी।"

"नहीं, मेरे आदर्श कुछ और हैं। तुम कहीं न जाओगी।"—सेठजी ने ताड़ना दी।

चंपा को अवसर मिला—"तो फैक्टरी के भीतर ही क्यों न लड़कों के विभाग के साथ हमारा मैच हो। कभी उनकी फ़ील्ड में और कभी हमारी फ़ील्ड में ?"—वह बिस्तर पर उठ गई।

सेठजी गहरे सोच-विचार में पड़ गए—"बाहर जाकर ये बीस बातें सिखा आवेंगी। बाहर के स्कूल की लड़कियाँ भी इन्हें कई बातें सिखा जायँगी। उधर लड़कों का नारा है—दीवार का तोड़ देने का।" अचानक सेठजी का मुख चमक उठा। उन्हें समस्या का एक हल प्राप्त हो गया। वह बोले—"अच्छी बात है। फैक्टरी के बाहर न जाने पावेगा कोई। यहीं लड़कों के विभाग से तुम्हारा मैच तय कर दिया जायगा, हर रविवार को।"

"सेठ जयराम की जय हो!"—सब लड़कियाँ बिस्तर छोड़ हर्ष से चिल्ला उठीं।

सेठजी बोले—"नहीं. मैं व्यक्तिगत जय को बड़ी क्षुद्रता मानता हूँ। मैं बार बार इसका विरोध करता हूँ।"

लड़कियों ने अपनी भूल दुरुस्त की—"जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी की जय!"

सेठजी कहने लगे—"मैच तो होगा तुम दोनों विभागों का, पर देवी के मंदिर में तुम जैसे आँखों में पट्टी बाँधकर आरती करने जाती हो, वैसे ही मैच खेलने भी जाओगी"

लड़कियाँ अचरज से एक दूसरे का मुँह देखने लगीं।

सेठजी बोले—"नहीं, कुछ भी अनोखी बात नहीं। आरती

के कारण तुम्हें पट्टी बाँधकर चलने-फिरने का अच्छा अभ्यास हो गया है। इससे दौड़ने भागने का हिम्मत खुल जायगी। भारत के ब्रह्मचारी शब्दवेधी बाण चलाते थे। फुटबॉल की आवाज़ से तुम बड़ी आसानी से उसकी जगह मालूम कर लोगी। मैं कहता हूँ, तुम्हारे इस नए खेल का नमूना संसार में प्रसिद्ध हो जायगा। इससे तुम्हारी शारीरिक शक्ति का ही विकास नहीं होगा, तुम्हारा मानसिक बल भी जाग उठेगा, तुम्हें प्रखर कल्पना प्राप्त हो जायगी।'

लड़कियों ने मन में सोचा, कुछ न मिलने से यह जितना भी मिल गया, बहुत है। चंपा का मस्तक अभिमान से उन्नत हो गया कि आखिर लड़कों से सेठजी से मैच की आज्ञा ले लेने की जो प्रतिज्ञा उसने की थी, वह पूरी हो गई।

सेठजी बोले—"अब तो ठीक हो न तुम ?"

चंपा सबका प्रतिनिधित्व कर बोली—"आपकी कृपा।"

सेठजी ने कहा—"सप्ताह का प्रत्येक इतवार तुम्हारे मैच का दिन नियत किया जाता है। दोनों विभागों के सुपरिंटेंडेंट तुम्हारे मैच के भी निरीक्षक होंगे। क्योंकि यह अंधा फुटबॉल तुम्हारी आवश्यकता के लिये मेरे दिमाग़ की एक नई उपज है—मैं इस पर विचारकर इसके नियम बनाऊँगा। वे नियम तुम्हारे मैच के एंपायरों को बताऊँगा, और वे समय-समय पर उनमें उचित संशोधन करते रहेंगे।"

लड़कियों के विभाग से सेठजी ने लड़कों के विभाग में जाकर

कहा—"आज मैंने तुम्हारे लिये एक बहुत बढ़िया खेल का आविष्कार किया है—उसका नाम है, अंधा फुटबॉल।"

लड़कों में कोई प्रोत्साहन नहीं प्रकटा इससे, पर जब सेठजी ने कहा—"तुम्हारा बहुत दिनों की वह इच्छा भी इस खेल से पूरी हो जायगी।" सेठजी यहाँ पर विश्राम लेकर लड़कों के मुखों पर की भावना का अध्ययन करने लगे।

लड़के बड़ी उत्सुकता से अचल-अटल होकर सेठजी को देखने लगे। सेठजी बोले—"प्रत्येक रविवार को लड़कियों के विभाग के साथ तुम्हारा फुटबॉल का मैच होगा। उसी का नाम अंधा फुटबॉल है। आरती की तरह आँखों में पट्टी बाँधकर।" सेठजी चले गए।

नौजवान बोला—"अंधे होकर ही सही। दरवाजा तो खुला! भगवान् का धन्यवाद है। पट्टी भी कभी-न-कभी खुल ही जायगी। लेकिन मानता हूँ बात, इतना शोर मचाने पर भी जो बात हम नहीं कर सके, वह लड़कियों ने न-जाने कौन-सा पेच घुमाकर कर दी।"

[पंद्रह]

भूधर की जेब में दस-दस के उन दो नोटों को बिलाते कोई देर न लगी। बालू के खेत में पानी के दो लोटे कितने समय तक दिखाई देते? या उत्तप्त तवे पर जल की दो बूँदें कब तक ठहरी रहतीं? वह फिर अपनी पहली दशा में लौट आया।

नित्य प्रभात-समय वह अपनी घड़ीसाज़ी की उस उजड़ी हुई मेज़ पर बैठता। दराज़ खोलकर उस न लौटे हुए गाहक की घड़ी में समय देखता; उसे ठीक-ठीक चलता हुआ पाता। वह धीरे-धीरे उसमें चाबी देता। उसे बेच देने का खयाल फिर उसके मन में दबे पैर प्रवेश करता। अपनी दृढ़ता से वह उसे भगा देता, और घड़ी को फिर दराज़ में रख देता। इसके बाद वह दरवाज़े की तरफ नज़र दौड़ाता शायद नोटों से भरे हुए किसी नए लिफाफे की आशा में!

फिर कुछ याद आती उसे, और वह उस दस-दस के दो नोटों को धारण करनेवाले लिफाफे पर छपे टाइप के अक्षरों को बड़े ग़ौर से देखता, आइ ग्लास लगाकर उन्हें पढ़ता—"छोटे 'ए' हरफ़ के सिर पर की घुंडी में एक छोटा-सा ज़ख्म है। जितनी बार भी 'ए' इस पते में दुहराया गया है, वह ज़ख्म साफ़ साफ़ ज़ाहिर हुआ है, वह अक्षर की टूट है। इससे सहज

ही उस टाइप-राइटर का पता लग सकता है। और फिर अपने उपकारी का पता लगा लेने में मुझे क्या देर लगेगी ?... कौन हो सकता है वह ?"

"कौन हो सकता है ? इष्ट-मित्र, सखा-दोस्त कौन है मेरा ? किस पर मैंने कभी कोई भलाई की, जो वह मुझे इस आड़े समय में याद करता ? मैं किसी का न हुआ, फिर कौन है मेरा ?"

सहसा उसके मन में एक विचार उठा—"कौन हो सकता है फिर वह ?... सेठ जयराम ? वह अपने उदार विचारों के लिये प्रसिद्ध तो है, लेकिन वह मेरी नौकरानी को उड़ा ले गए ! वह चंपा, कितने परिश्रम से मैंने उसे राज़ी किया था, वह कहाँ ग़ायब कर दी उन्होंने ? उनसे ऐसे उपकार की आशा ? क्या संभव है ? मैं तो कहूँगा कभी नहीं।" लेकिन उसके मन में न-जाने कोई कुछ कह रहा था।

सेठ जयराम ने एक दिन फिर अपने मुंशी को भूधर के समाचार जानने को भेजते हुए कहा—"आप अपनी तरफ से जाइए। बाहर वह नहीं दिखाई देता, तो उसके भीतर जाकर देखिए तो सही, वह कैसी बीड़ी की मशीन बना रहा है। हमारा मतलब हो सकता है।"

मुंशीजी ने भूधर का बंद दरवाज़ा बाहर से खटखटाया। भीतर मशीन पर काम करता हुआ भूधर घबराया। उसने जल्दी से एक टाट से मशीन ढक दी, और धीरे-धीरे किसी तक़ाज़े-

वाले की कल्पना करता हुआ बाहर आया। जब उसने दरवाज़े के काच से 'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' के मुंशी को झाँकते पाया, तो द्वार खोलते हुए कहा—"क्यों मुंशीजी, कैसे कष्ट किया ?"

मुंशीजी बेधड़क उसकी दूकान के भीतर घुसते हुए कहने लगे—"देखिए, भूधरजी, हम आपके पड़ोसी हैं। एक दूसरे के सुख-दुख में हमारा हिस्सा लेना ज़रूरी ही नहीं, धर्म है। क्या कर दिया आपने यह ?" मुंशीजी ने उस बेतरतीब और कूड़े-कचरे से भरी दूकान की तरफ़ संकेत किया।

"घड़ीसाज़ी छोड़ दी मैंने। उससे भी और क़ीमती काम कर रहा हूँ।"

"लेकिन आपकी यह हालत क्या हो गई ?"

"इस हाड़-चाम के सजाने-सँवारने में क्या रक्खा है। मैं बहुत बड़ा काम कर रहा हूँ।"

"आपके समान मेहनती और ईमानदार आदमी से ऐसी ही आशा करते हैं हम।"

भूधर के मन में विचार हुआ कि चंपा की बात छेड़े, पर उसी समय एक दूसरी लहर ने उसके ओठों में ताला लगा दिया।

भीतरी कमरे में जाते हुए मुंशीजी ने पूछा—"क्या काम कर रहे हैं आप ?"

"मैं एक बीड़ी की मशीन की ईजाद कर रहा हूँ।"

"सुना तो था, क्या यही है वह ?"—मुंशीजी ने टाट से ढके हुए उसी स्तूपीकृत लौह-सचय की ओर इशारा किया।

भूधर ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया—"हाँ, यही है। लेकिन अभी यह बनी कहाँ है ?"

"अभी और कितने दिन लगेंगे ?"—मुंशीजी ने मशीन पर का टाट खींचते हुए कहा—"यह तो बिलकुल पूरी जान पड़ती है। घुमाऊँ इसे ?" उन्होंने मशीन के पहिए का हेंडिल पकड़कर पूछा।

"नहीं, न घुमाइए इसे। मैंने कुछ पुरज़े खोल रक्खे है, टूट जायगी।"—भूधर ने जल्दी से पहिए को रोककर कहा।

"क्या कसर है अभी ?"

"कई स्थानो मे अटक जाती है।"

"कब बन जायगी ?"

एक ठंडी साँस लेकर भूधर ने कहा—"क्या बताऊँ ? झीड़ी के लपेटने मे जितनी भिन्न-भिन्न क्रियाएँ है, उन सबके लिये जगहें तो बन गई है, पहिए-काँटे अपना-अपना काम करने भी लगे है, पर उनकी आपसी एकता अभी तक क़ायम नहीं हुई है।"

"उसमें क्या देर लगेगी ?"

"देर ?" एक निराशा-भरी हँसी हँसकर भूधर बोला—"कुछ समझ में नही आता। देर बहुत लग गई है, अब भी नहीं कहा जा सकता, महीने लगेंगे या साल ?"

"ज़रा जोड़-जाड़कर चलाओ तो सही, देखूँ मैं भी।"

भूधर मशीन को जोड़ने लगा चुपचाप।

मुंशीजी बोले—"जान पड़ता है, आपको अगर कोई सहायता प्राप्त होती, तो यह मशीन आज तक पूरी हो जाती।"

भूधर पेचकश घुमाते हुए बोला—"ऐसी भी बात नहीं है। अधिकतर कठिनाई में उजाला प्राप्त होता है, और सुबीतों मे बहुत-सी अड़चनें पैदा हो जाती हैं।"

"लेकिन भूधरजी, आपके भोजन का क्या इंतजाम है?"

"खा लेता हूँ बाहर, किसी होटल में।"

"मैं कहता हूँ, अगर उसका सुबीता होता, तो—" मुंशीजी चुप हो गए।

भूधर चुपचाप मशीन के जोड़ मिलाने लगा, और मुंशीजी उसके कमरे में चारों ओर अपनी पैनी दृष्टि दौड़ाने लगे।

"घड़ीसाज़ी न छोड़नी थी आपको, वह आपका चलता हुआ धंदा था।"

"मैंने नहीं छोड़ा उसे मुंशीजी, उसी ने मुझे छोड़ दिया।"

"समझ मे नहीं आई आपकी बात।"

"मेरे लिये भी वह एक पहेली है। अच्छे प्रतिष्ठित लोग मेरे संरक्षक थे, वे एक-एक कर फिर कभी मेरे पास न आने की क़सम खा गए।"

'संभव है, आपके काम में कोई ख़राबी पैदा हो गई?"

भूधर ने मशीन के एक पुरज़े में वॉशर लगाकर उसकी पिन खोंसते हुए कहा—"नहीं, काम में कोई ख़राबी नहीं हुई, मेरे वादे-पर-वादे टूटने लगे—इसी राक्षसी के कारण।" भूधर ने

भूमि पर पड़ा हुआ एक हथौड़ा उठाकर मशीन की तरफ़ ताना।

मुंशीजी ने उसका हाथ पकड़ लिया—"हैं! हैं! यह क्या कर रहे हो?"

भूधर रुद्ध-कंठ होकर बोला—"मेरा सुख-चैन, भूख-प्यास, श्रम-विश्राम, दिन-रात, हँसी-ख़ुशी, सब कुछ इसी ने छीनकर मुझे दिवालिया बना दिया। मुंशीजी, मैं कहीं का न रहा! जी चाहता है, इसके टुकड़े-टुकड़े कर उन पर अपने टुकड़े बिछा दूँ।"

"भूधरजी, ये बच्चों की-सी कैसी बातें आप कर रहे हैं? मशीन की बनावट तो कह रही है, आपने इस पर काफ़ी परिश्रम किया है। मुझे तो इसे देखकर ऐसा भासता है, यह आपकी मेहनत का कई गुना फल दे देगी।"

"मैं सैकड़ों बार ऐसी आशा कर चुका हूँ, लेकिन हमेशा उस पर पानी फिर जाता है।"

"जुड़ गई मशीन?"

"हाँ, जुड़ तो गई।"

"चलाइए तो सही, मैं भी देखूँ, कहाँ पर इसमें कसर है।"

"अभी चलाता हूँ।" भूधर ने तेल की कुप्पी उठा ली, और मशीन में तेल देना आरंभ किया।

"भूधरजी, आप तो कठिनाई को ही सफलता का कारण मानते हैं—अभी कुछ देर पहले आपने यही जाहिर किया था, फिर अभी-अभी आपके विचारों मे यह कैसा परिवर्तन हो गया? सच्चा परिश्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता। मैं तो समझता हूँ, यह मशीन

आपके परिश्रम का पूरा-पूरा मूल्य ही न लौटा देगी, बल्कि आपकी प्रतिष्ठा की भी वृद्धि करेगी। चलाइए तो सही। हाथ से ही चलेगी यह ?"

भूधर बोला—"इसके सफलता-पूर्वक चलने से मतलब है। जहाँ यह हाथ से चली, फिर थोड़ा-सा परिवर्तन करने से पैर से भी चलने लगेगी। और फिर, यह बिजली से भी काम करने लगेगी।" उसने धीरे-धीरे मशीन को चलाना आरंभ किया।

मुंशीजी बड़े मनोयोग से देखने लगे।

भूधर ने कहा—"अभी पत्तों को मैं अलग पंच से शकल में काटकर एक साथ इसमें रख रहा हूँ—इसके आगे की धारा ठीक हो जाय, तो मैं पंच को भी फिर इसी में शामिल कर लूँगा।"

मशीन चली—एक पत्ता अपनी जगह से धीरे-धीरे आगे को खिसकता चला, तंबाकू की पत्ती के संचय का मुख खुला, और वह उस पत्ती पर रेखा के आकार में तंबाकू गिराकर बंद हो गया। पत्ता फिर धीरे-धीरे आगे बढ़ता और लिपटता चला। वह तागे के पास आया ही था कि मशीन रुकने लगी। भूधर ने जरा जोर से पहिया चलाया। 'खट्' से एक आवाज़ हुई, और बीड़ी टूटकर मशीन के दो पुरज़ों के दाँतों में गिर गई—मशीन रुक गई !

भूधर ने उदास होकर हाथ से माथे पर का पसीना पोंछा। लोहे की कालिख उसके माथे पर लग गई। मुंशीजी ने अपने रूमाल से उसे पोंछते हुए कहा—"नहीं, भूधरजी, निराशा की

कुछ भी बात नहीं है। आपकी मशीन तो करीब-करीब बन चुकी है।'

"कहाँ बन चुकी है—यही पर तो मैं कई महीने से अटका हुआ हूँ।"

"आपको कुछ सहारे और प्रोत्साहन की आवश्यकता है। आप एक काम क्यों न करें ?" कुछ ठहरकर मुंशीजी ने कहा—"आप हमारे सेठजी से क्यों न इसके बारे में बातचीत करें। यह उनके मतलब की चीज है। वह सबसे पहले आपकी सहायता करेंगे। रुपए-पैसे से ही नहीं, सलाह-मशविरे से भी।"

"नहीं, मुंशीजी, आप भूधर को नहीं जानते।" भूधर के सामने चपा की कल्पना-मूर्ति बहुत विशाल होकर खड़ी हो गई—"वह श्रीमानों के द्वार पर अपना हाथ नहीं फैला सकता, न उनकी खुशामद के लिये उसके पास फालतू शब्द और समय ही है।"

"लेकिन हमारे सेठजी उन श्रीमानों में नहीं है। आपने उनका वेश तो देखा ही है न ? वही गाढ़े का कुरता-चादर, घुटने तक की धोती और देसी जूता—जो वह पच्चीस साल पहले पहनते थे, आज भी उसके उपयोग में वह गौरव समझते हैं। उनकी बैठक में कभी गए नहीं आप ? वहाँ उन्होंने अपने आरंभिक जीवन की एक फोटो का इनलार्जमेंट सामने ही लटका रक्खा है—जब वह साग-भाजी की टोकरी सिर पर रखकर फेरी लगाते थे।"

"सेठजी के पराक्रम और उनकी विज्ञापन की कला का मैं

शुरू से लोहा मानता हूँ। उनकी उदारता भी सराहनीय हो सकती है। लेकिन मैं किसी से कुछ माँगने के सर्वथा खिलाफ़ हूँ।"

"माँगना क्या ? तुम्हें यह सहायता उधार मिल जायगी। मशीन बन जाने पर उसकी आमदनी मे आसानी से चुका सकोगे। संभव है, सेठजी ही तुम्हारी मशीन के सर्वाधिकार खरीद लें।"

"अभी मशीन तो बन जाय मुंशीजी।"

"मेरे योग्य कोई सेवा हो, तो याद रखना। संकोच न करना।" मुंशीजी बिदा होने लगे।

भूधर का कुछ याद आई—"आपके दफ्तर में अँगरेजी का टाइप-राइटर होगा। फुरसत मिलने पर मेरी यह एक चिट्ठी उसमें टाइप कर ला दीजिएगा।" भूधर ने एक फ़र्जिया ऑर्डर लिखकर मुंशीजी को एक कार्ड के साथ देते हुए कहा—"मेरे अक्षर बहुत खराब हैं।"

मुंशीजी सीधे सेठजी के पास पहुँचे, और कहने लगे—"भूधर की हालत अवश्य शोचनीय है।"

"तबीयत तो ठीक है ?"

"तबीयत ? शारीरिक कोई भार हो सकता है उस पर, दिमाग़ बिलकुल सही है। लोग ऐसे ही उड़ा देते हैं। बीड़ी बनाने की मशीन के पीछे ही उसने अपना सर्वस्व लगा दिया है।"

"तुम्हे दिखाई उसने मशीन ?"

"हाँ। और वह क़रीब-क़रीब पूरी हो चुकी है, थोड़ी-सी कसर रह गई है, जो किसी समय भी ठीक हो सकती है, अगर कुछ आर्थिक सहायता उसे मिल जाय, तो। मैंने उससे कहा कि आपसे भेंट करे, लेकिन बड़ा संकोची जान पड़ता है।"

कुछ याद करते हुए सेठजी ने कहा—"इधर कई हफ्तों से मैंने नहीं देखा है उसे। क्या कभी बाहर नहीं निकलता ? खाने-पीने का क्या-इंतज़ाम है ?"

"कहीं बाहर खाता होगा। मैं समझता हूँ, अँधेरा होने पर रात को कहीं किसी होटल में जाता है। माली हालत कुछ अच्छी नहीं जान पड़ती उसकी। कठिनाइयों के लिये उसके मन में आदर है। लेकिन भोजन और निवास की कठिनाई का सत्कार कैसे करता होगा वह ? अकाल-पीड़ित की तरह एक वक़्त भी उसे खाना मिलता है या नहीं, मुझे शक है। अगर उसकी यही हालत रही, तो ज़रूर उसे बीमारी धर दबाएगी।"

"परिश्रम करनेवाले को कम-से-कम भोजन का सुबीता होना ही चाहिए मुंशीजी, नहीं तो उसके दिमाग़ में शरीर की ही चिंता भरी रहेगी। वह एक उपयोगी काम कर रहा है, उसे सहायता देनी चाहिए।"

"लेकिन वह आत्माभिमानी आसानी से किसी की सहायता माँगने के लिये तैयार नहीं है।"

"हूँ!" सेठजी धीरे-धीरे कहने लगे—"क्या आत्माभिमान

इस तरह शरीर को भूखा मार देने का नाम है ?"—वह कुछ सोचते हुए कमरे मे टहलने लगे।

मुंशीजी दफ्तर में चले गए। उन्हे याद आ गई भूधर के पत्र की, और वह टाइप-राइटर की कुरसी पर बैठकर उसके कार्ड पर खटखटाने लगे।

दूसरे दिन प्रभात-समय मुँह-हाथ धोकर ज्यों ही भूधर मेज के पास उस घड़ी में चाबी देने के लिये जा रहा था, या उसे निकालकर कहीं बेच आने के अनिश्चित विचार में था, त्यों ही उसका ध्यान द्वार के पास पड़े हुए एक लिफाफे ने खींच लिया। इस बार उस लिफाफे की स्थूलता पहले से अधिक थी। पहले की ही तरह टाइप के अक्षरों में उस पर उसका नाम चमक रहा था। लोहे का टुकड़ा जिस तरह चुंबक पर दौड़ जाता है, भूधर का हाथ उस पर खिच गया। तुरंत ही उसने उसे खोलकर देखा, सौ-सौ रुपए के दस नोट ! वह भौचक्का रह गया !

उसने धरती पर पैर जमाकर देखा, वह ठोस थी। आँखे मलकर आकाश को देखा, वह जाग्रत् था। उँगलियों के बीच में नोटो के अस्तित्व का प्रमाण पाया। आँखों से नोटों पर के अंक और अक्षर पढ़े—एक सौ रुपया स्पष्ट ! कोई स्वप्न या धोखा नहीं। एक-एक कर उन्हे कई बार गिना, पूरे दस ! सौ गुना दस—एक हजार !

"पूरे एक हजार रुपए ! इस तरह कौन किसी के द्वार पर फेक जाता है ? अदृश्य होकर, बिना किसी मतलब के ?" भूधर के

मन में एक शंका उठी—"कोई मुझे चोरी मे फँसा देने के लिये तो यह नहीं कर गया ? लेकिन मेरा शत्रु कौन है ? किसके लिये मेरे मन में प्रतिहिंसा है ?" भूधर ने फिर निष्पक्ष होकर विचार किया—"सेठ जयराम के प्रति अवश्य ही एक बदले की कामना थी मेरे हृदय में, वहीं पर तो बीडी की मशीन की कल्पना उपजी थी। निश्चय ही इस कुभावना के कारण ही मुझे अभी तक, इतना परिश्रम करने पर भी, सफलता नहीं मिली।"

"नहीं, मुझे चोरी में फँसा देने का किसी का मतलब नहीं है। मेरे भीतर जो चोर है, मै उसे निकाल बाहर कर अपना अंतःकरण साफ कर लूँगा। हे भगवान्! तुमने यह मुझे दैवी सहायता दी है। मै तुम्हारी शरण हूँ। मुझे मार्ग दो।—" भूधर दोनों बाँहों मे मेज़ पर अपना सिर रखकर कुछ देर तक गहरे विचार में पड़ा रहा।

जब पछतावे की लहर ने उसे साहस और स्फूर्ति दी, वह उठा। पहले लिफाफे के पते के साथ उसने दूसरे लिफाफे का पता मिलाया। दोनों मे निकटतम साम्य था। वह कहने लगा—"अब मेरी मशीन की सफलता निश्चित है। उसके बाद मेरा ध्येय होगा इस उपकारी को ढूँढ़ निकालना। तुम जितना ही छिप गए हो, मै उतना ही तुम्हे प्रकाश में ले आऊँगा।"

भूधर अमित उत्साह में भरकर मशीन के पास दौड़ा गया। मशीन का हैंडिल पकड़कर धीरे-धीरे चलाया। फिर स्वच्छ मस्तिष्क से उसने मशीन की चाल और उसकी बाधाओं को

सोचा-विचारा। एक हजार रुपए की ठोस संपत्ति ने उसकी कल्पना को मुक्त विस्तार दे दिया था। उसे एक नवीन प्रेरणा मिली। तत्क्षण ही उसने मशीन खोल डाली, और उसके पुर्ज़े निकालकर बाजार ले जाने को बाँधे।

सौ रुपए का एक नोट उसने जेब में रक्खा, और बाकी नौ सँभालकर रख दिए। पुर्ज़ों को लेकर वह एक लोहे के कारखाने में जा पहुँचा। लोहार को अपने नमूने देकर, उसने उनमें कुछ परिवर्तन बताकर नए पुर्ज़े ढालने का ऑर्डर दिया। लोहार के न माँगने पर भी उसने पर्याप्त रुपया उसे पेशगी दे दिया।

बाजार में जो कुछ किसी का देना था, वह दे लेकर भूधर जब अपनी दूकान पर आया, तो उसे मुंशीजी मिले। बोले—"लीजिए, यह आपका कार्ड है। मैंने कल ही टाइप कर दिया था। सुबह कहाँ चले गए थे आज?"

"कुछ पुर्ज़े ठीक कराने लोहार के पास गया था—" कहकर भूधर ने कृतज्ञता दिखाते हुए अपना कार्ड ले लिया।

मुंशीजी भूधर के कंधे पर स्नेह-पूर्ण हाथ रखकर कहने लगे—"हमारे सेठ आपके लिये बड़ा सद्भाव रखते हैं। एक बार उनसे मिलने में कोई हानि नहीं। तुम्हें कुछ भी माँगने की जरूरत नहीं रहेगी।"

"मेरी जरूरत ही कुछ नहीं है मुंशीजी।" भूधर के मन में वे सौ-सौ के साबुत नौ नोट नाच रहे थे। मुंशीजी को कुछ उदास-सा होता हुआ देख वह कहने लगा—"जब आवश्यकता होगी,

तो मैं उनसे भेंट करूँगा, और ज़रूरत पड़ेगी, तो हाथ भी पसारूँगा मुंशीजी। मनुष्य बड़ा दुर्बल प्राणी है।"

मुंशीजी चले गए। भूधर दूकान के भीतर घुसा। दराज़ में से वे दोनों लिफाफे निकालकर उस कार्ड पर के छपे हुए अक्षरों से उनके अक्षर मिलाने लगा। बिना आइग्लास की सहायता के ही उसने लिफ़ाफे और कार्ड पर के अक्षरों की समानुरूपता जाँच ली। एक अजीब दृश्य उसकी आँखों के आगे खुल पड़ा—"इतनी बड़ी रक़म सेठ जयरामजी के सिवा और कौन मेरे दरवाज़े पर फेंक सकता है।"

मेज़ पर दाहने हाथ की कोहनी और हाथ पर गाल रखकर भूधर बाएँ हाथ से उन दोनों लिफ़ाफ़ों और कार्ड को उलटता-पलटता ही रह गया, कुछ देर तक—"ये रुपए सेठजी ने ही मुझे दिए हैं, इसमें कोई संशय नहीं। किस मतलब से दिए हैं? दूर-ही-दूर से कभी नमस्ते हो गई, तो यह भी कोई कारण हुआ। परोपकार की भावना से?···मैं बीड़ी की मशीन बना रहा हूँ। कल उनके मुंशीजी ने इसका पूरा परिचय दिया होगा उन्हें। इस मशीन के पूरे होने से पहले उनकी मंशा उस पर अधिकार जमा देने की तो नहीं है?" वह घबराकर उठ गया।

उसने बीड़ी सुलगाई, और मशीन के पास जाकर खड़ा हो गया—"क्या करूँ फिर, यह रुपया उन्हें वापस कर आऊँ? पहले के वे दो नोट, और जो इसमें से खर्च कर चुका हूँ? नहीं, मेरे मन में सेठजी के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। मैं

उनका रुपया लौटा दूँगा, तो फिर उपवास, दुर्बलता और दरिद्रता के बीच भँवर में मेरी नाव डूब जायगी।"

वह मशीन के निकट भूमि पर बैठ गया। उसने आधार के लिये मशीन के पहिए पर अपना चक्कर खाता हुआ सिर रख दिया। कोई आवाज मानो उसके कानों में कहने लगी—"कौन सेठजी देनेवाले है, और कौन भधर लेनेवाला? भगवान ही सबके मन मे प्रवेश। कर देते और दिलाते हैं। उपकारी के ऋण का प्रतिशोध न करना महान् पाप है। मैं इस अयाचित सहायता के लिये सदैव उनका कृतज्ञ रहूँगा।"

भूधर फिर उत्साह में भरकर मशीन का पहिया चलाने लगा। जिन पुरजों को वह बनाने के लिये दे आया था, उनकी कल्पना मे पूर्ति कर उसने मशीन को गति दी। अचानक मशीन की एक उलझी हुई गाँठ उसकी समझ में आ गई। वह जोर से चिल्ला उठा—"मशीन बन गई!"

[सोलह]

दोनों विभागों द्वारा बड़ी उत्कंठा से प्रतीक्षा किया हुआ वह इतवार का दिन आया। सुबह से ही दोनों दल उस अंधे फुटबॉल के मैच के लिये भाँति-भाँति के मनसूबे बाँधने लगे।

एक विशेष प्रकार की नरम, मोटी पट्टियाँ दोनों दलों की आँखों में बाँधने के लिये बनवा ली गई थीं। मैच के लिये दोनों दलों के दोनों सुपरिंटेंडेंट एंपायर नियुक्त किए गए। सेठजी स्वयं उस मैच का उद्घाटन करनेवाले थे, पर उन्हें उस दिन इनकमटैक्स-ऑफ़िसर के दफ़्तर में हाज़िरी देनी पड़ गई।

ठीक समय पर पट्टी बाँधे हुए दोनों दल खेल के मैदान में आए। लड़कों के विभाग के एंपायर ने सबको सेठजी के बनाए हुए कुछ प्रारंभिक नियम बता दिए। इसके बाद दोनों एंपायरों ने दोनों दलों को स्थानों का निर्देश कर उनकी नियुक्ति कर दी। भगतो एक तरफ़ और संतू दूसरी ओर गोल में रक्खे गए।

सीटी बजी। एंपायर ने बीच में गेंद उछाल दिया। दोनों पक्षों में भाग-दौड़ मची। लक्ष्मी के हाथ गेंद लगा। उसने उसमें किक मार दी। गेंद एक तरफ़ चला गया। दोनों दलवाले इधर-उधर उसे टटोलते ही रह गए। शीघ्र ही संतू गेंद पर लुढ़क गया। दोनों एंपायरों को हँसता सुनकर और खिलाड़ी भी हँस पड़े।

नौजवान प्रतिपक्षी की दिशा का ज्ञान खोकर अपने ही गोल की तरफ़ बिना किक मारे गेंद को ले जाने लगा।

एंपायर बोला—"नौजवान, देखो, यह ठीक नहीं है। इस खेल में पट्टी बँधी होने के कारण हैंड नहीं माना गया है, तो इसके यह माने नहीं कि तुम हाथ में ही गेंद को ले जाओ। यह रग्बी का खेल नहीं है। तुम हाथ में गेंद लेकर भाग जाओगे, तो खेल निर्जीव हो जायगा। किक लगाने से ही तो और खिलाड़ी आवाज़ से गेंद की जगह पहचानेंगे, तभी तो खेल में आकर्षण बढ़ेगा। और फिर, मज़े की बात तो यह है, तुम अपने ही गोल की तरफ़ गेंद को ले जा रहे हो। नौजवान, तुम कैसे लीडर हो?"

नौजवान घबराकर जहाँ-का-तहाँ अपने गोल की तरफ़ से विरुद्ध दिशा की ओर मुँह फिराकर खड़ा हो गया।

एंपायर बोला—"गेंद उठाकर दो क़दम से अधिक चलने पर फाउल माना जायगा।"

नौजवान ने दूसरी दिशा की तरफ़ गेंद में किक मार दी। उस तरफ़ फ़ील्ड ख़ाली थी। फुटबॉल किसी के हाथ न लगा। कुछ इधर दौड़े, कुछ उधर। कुछ लड़के लड़कों से, कुछ लड़कियाँ लड़कियों से, और लड़के लड़कियों से भिड़ गए। दोनो एंपायर आपस में कुछ बातचीत करने लगे।

चंपा एक लड़की का हाथ पकड़कर बोली—"कौन, नौ-जवान!"

वह बोली—"मैं चुन्नी हूँ। लेकिन तुम नौजवान को क्यों ढूँढ़ रही हो ?"

चंपा ने जवाब दिया—"वह लीडर है, मैं लड़कियों की लीडर नहीं हूँ क्या ? लीडर को लीडर ढूँढ़ना ही चाहिए।"

चुन्नी ने कहा—"अच्छी बात है। मुझे मिलेगा, तो कह दूँगी।"

चंपा पूछने लगी—"किधर है फ़ुटबॉल ?"

चुन्नी ने उत्तर दिया—"मैं क्या जानूँ ? उसे ही ढूँढ़ रही हूँ।"

लेकिन गेंद कहाँ और ढूँढ़ने वाले कहाँ ? एंपायर बोला—"सेठजी ने इस खेल के जो क़ायदे बनाए हैं, उनमें हम दोनों एंपायरों को आपस में सलाह कर उचित संशोधन करने के अधिकार दिए हैं। हमने एक नया नियम बनाया है। अगर आधे मिनट तक गेंद खिलाड़ियों से विलग रहा, तो एंपायर गेंद को उठाकर सीटी देगा, गेंद को धप खिलाकर उसकी स्थिति जाहिर करेगा, और इस तरह फिर खेल शुरू हो जायगा।' एंपायर ने सीटी दी। सब खिलाड़ी उसके पास दौड़ आए। उसने गेंद को धप खिलाया। उसकी आवाज़ से सब उस पर टूट पड़े, और फिर खेल आरंभ हो गया।

नौजवान के हाथ किसी का हाथ लग गया। उसने उसे पकड़कर कहा—"कौन, विच्छू ?"

"छिः ! यह चूड़ी नहीं देखते हाथ में ? मैं हूँ चंपा।"—यह चंपा का उत्तर था।

"कौन चंपा ?"—नौजवान ने चूड़ी को टटोला।

"पेड़ पर खिलनेवाली चंपा नहीं। 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' में बीड़ी लपेटनेवालियों की लीडर चंपा।"

"लड़कियों में भी कोई लीडर हो सकती है, मैं इस बात को सोच रहा था।"

"एक से दो होने पर ही एक लीडर हो जाता है, क्या तुम्हें यह नागरिक शास्त्र का सत्य ज्ञात नहीं है ?"

उस समय दोनों दलों के एंपायर आपस में फिर कुछ सलाह करने लगे थे। लड़कों के एंपायर ने लड़कियों के एंपायर से पूछा—"आपका नाम ?"

"पहले आप अपना तो बताइए।"

"इस क्षुद्र सेवक को जो 'जय हिंद बीड़ी फैक्टरी' का एक तनख्वाह में सुपरिंटेंडेंट, मास्टर और अब एंपायर बना है—मेघ-दूत कहते हैं। अब तो आप अपना बताइए।"

"आपकी ही स्थिति में इस सेविका को सौदामिनी कहते हैं।"

"बहुत खूब, चूँकि हम दोनों एक दूसरे के न तो सुपरिंटेंडेंट हैं, न मास्टर-न एंपायर, इसलिये मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं आपको आपके जन्म के नाम से पुकारूँ"

"पुकारिए मेघदूतजी, मुझे क्यों आपत्ति हो।"

'हे सौदामिनी, और कोई अलंकार तो नहीं है तुम्हारे नाम के पहले ? पूछ लेना कर्तव्य है।"

"नहीं, कुछ भी नहीं। क्या आपको मालूम नहीं, सेठजी ने अखबारों में सुपरिंटेंडेंट की आवश्यकता का जो विज्ञापन छपाया था, उसमें उसका कुमारी होना पहली विशेषता थी। और, आप अपनी तो कहिए।"

"मेरा भी यही इतिहास है। कर्तव्य में हमारी एकाग्रता अटूट रहे, लक्ष्य यही था सेठजी का। लेकिन—"

सौदामिनी ने बीच ही में कहा—"उस लेकिन को अव्यक्त ही रहने दो। भगवान् का धन्यवाद है, जो सेठजी मेघदूत और सौदामिनी को भी एक दूसरे का मुख देखने की आज्ञा नहीं देते थे, लड़कियों के कौशल से उन्होंने अंधे फुटबॉल की ईजाद कर हमें एक दूसरे का मुख दिखा दिया।"

उधर चंपा नौजवान के कसे हुए हाथ से अपना हाथ छुड़ाने लगी। नौजवान ने और भी कसकर उसे पकड़ लिया—"ठहरो चंपा, सेठजी के वेद में मेरी आँखों का तुम्हें देखना पाप है। और इस पाप के दरवाज़ों पर डबल पट्टियों के ताले लगे हैं। लेकिन हाथ छू लेने में कोई गुनाह नहीं है। रेफ़री ने आरंभ में ही बताया है, इस खेल में हैंड नहीं होगा।"

चंपा ने हाथ ढीला कर दिया।

"चंपा, बहुत ज़रूरी बातें करनी हैं तुमसे। सेठजी एक महापुरुष हैं, इसमें कुछ भी शक नहीं। लेकिन उन्होंने हमें और तुम्हें जो अलग-अलग डिब्बों में बंद किया है, इससे प्रकृति का एक बड़ा भारी क़ानून तोड़ा है..."

इतने में एंपायर ने सीटी दी। सब अपनी-अपनी जगहों पर खड़े हो गए।

मेघदूत बोला—"हम एक क़ायदा और बनाते हैं इस खेल का। हाथ से गेंद को छू लेने में हैंड नहीं होगा, लेकिन अगर एक लड़का दूसरी लड़की का हाथ पकड़ लेगा, तो ज़रूर हैंड हो जायगा।"

नौजवान ने चंपा का हाथ छोड़कर धीरे-धीरे कहा—"चंपा, दूर न जाना, हाँ। पूरी बात सुन लेना। हम दोनों का मतलब है।" फिर वह ज़ोर से चिल्लाया—"एंपायर साहब, अगर एक लड़का दूसरे लड़के का हाथ पकड़ ले, तो ?"

मेघदूत सौदामिनी से कुछ बातें कर मुसकाया और बोला—"एक ही विभाग के हाथों की पकड़ से हैंड न होगा।"

एंपायर ने फिर गेंद को थप खिलाया, और फिर खेल शुरू हो गया। लेकिन नौजवान से चंपा बिछुड़ गई। वह गेंद की कुछ भी परवा न कर तमाम खिलाड़ियों के बीच में धीरे-धीरे—"चंपा ! चंपा !" पुकारता फिरने लगा।

खेल बहुत ढाला-ढाला चल रहा था। एक तो सर्वथा नया खेल, दूसरे, खिलाड़ी अंधे और नया अभ्यास।

फिर चंपा को ढूँढ़ लिया नौजवान ने। वह कानाफूसी करने लगा—"सेठजी ने जो हमारे बीच में दीवार खड़ी की है, उसे तुम क्या समझती हो ?"

"उनका एक पाखंड।"

"शाबाश, चंपा, यहाँ पर मेरा और तुम्हारा मन मिल गया। हमारा नारा है, दरवाज़े खोल दो—दीवार तोड़ दो।"

"हमारा भी यही रहेगा।"

"हाथ मिलाओ।"

चंपा हाथ मिलाने पर विचार कर ही रही थी कि एंपायर ने अंतर्वेला की सीटी दी। नौजवान बोला—"कोई परवा नहीं चंपा, जब हमारे मन मिले हैं, तो हाथ की क्या हस्ती है।"

मेघदूत की दूसरी सीटी पर, हाफ टाइम के बाद, फिर खेल शुरू हो गया। खेलते ही बिजली और बिच्छू, दोनो भिड़ जाते हैं। दोनो गिर पड़ते है।

बिच्छू ने पूछा—'चोट तो नहीं लगी ?"

"नहीं।"

"क्या है तुम्हारा नाम ?"

"बिजली।"

"मेरा नाम है बिच्छू। नाम के पहले हरूफ़ भी मिलते हैं और गुण भी। हाथ मिलाओ।"

"हैंड हो जायगा।"

"कुछ परवा नहीं, दंड भर दिया जायगा।"

"करेंट लग जायगा।"

"उसका भी क्या डर है। तुम्हारे करेंट है, तो मेरे भी तो डंक है। मिलेगा, तो मुझसे हो, दूसरे से नहीं मिल सकता हाथ।"

"मैं पूछूँगी।"

"किससे पूछोगी?"

"अपने लीडर से।"

"कौन है तुम्हारी लीडर?"

"चंपा।"

बिच्छू मन में सोचने लगा—हमारे कमांडर साहब 'जो 'चंपा चंपा' पुकार रहे थे, यह थी वह चंपा। उसने बिजली से कहा—"इसमें लीडर से पूछने की क्या बात है। उससे तो हमारे बाहरी संबंधों से वास्ता है। यह तो हमारी भीतरी भावना का सौदा है, अपने आप किया जाता है। इसमें कौन किसी से पूछता है। कहाँ है तुम्हारा हाथ?"

दोनों हाथ मिलाते हैं।

मेघदूत ने सीटी बजाते हुए कहा—"फाउल!"

फ़ाउल दे दिया गया। फिर खेल शुरू हुआ। गोपी बनवारी का सिर पकड़ती है।

बनवारी बोला—"हैं! हैं! इसमें किक मत मार देना। यह फ़ुटबॉल नहीं, मेरा सिर है।"

"मैं क्या जानूँ, कौन हो तुम?"

"मैं हूँ 'दि जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' के अंधे फ़ुटबॉल मैच का अग्रगामी खिलाड़ी—फागुन। तुम कौन हो?"

"तुम्हारे विरुद्ध खेलनेवाली गोपी।"

"कोई बात नहीं। अंधे खेल में ऐसा हो ही जाता है। लेकिन

में कोई कटुता अपने मन में जमा नहीं करता। हाथ मिलाओ।"

"दोनों एंपायरों में से किसी एक की आँख पड़ गई, तो फ़ाउल हो जायगा।"

"कह देंगे, यह गोल करने के इरादे से बेईमानी का हाथ नहीं मिलाया गया, बल्कि मन की एक ग़लतफ़हमी दूर करने के लिये।"

दोनों ने हाथ मिला लिए। किसी एंपायर की नज़र नहीं पड़ी।

तेजा और तुलसी साथ-ही-साथ दौड़ रहे थे। तुलसी का धक्का लगा, और तेजा ज़मीन पर गिर पड़ा।

तेजा बिगड़कर बोला—"कौन हो तुम, देखकर भी नहीं चलते।"

"अंधे फ़ुटबॉल में देखकर चला भी कैसे जाय?"—तुलसी ने जवाब दिया।

तेजा ने जवाब दिया—"मेरा मतलब है, टटोलकर चलतीं।"

"अब से ऐसा ही करूँगी।"

"अरे, हाथ पकड़कर इस ग़रीब को उठा देने में मदद तो देती जाओ।"

"हैंड हो जायगा।"

"गिरे-पड़े को उठा देने में कैसा हैंड?"

तुलसी के उठा देने पर तेजा बोला—"ओ हो हो! बड़ा कोमल स्पर्श है तुम्हारा, धन्यभाग्य! नाम क्या है?"

"मेरा नाम तुलसी है।"—तुलसी ने अपना हाथ खींच लिया।

"और मेरा तेजा है, भूलना मत। अंधे फुटबॉल मे जिसके माने हैंड हैं, समाज में कुछ और हैं।"

तुलसी—"क्या है?"

तेजा—"यह हाथ जन्म-भर के लिये मिल गया।"

तुलसी—"हिश्! एक अंध-विश्वास।"

इतने ही में गेंद की किक सुनाई दी, दोनो उधर ही दौड़ पड़े।

शंकर और यशोदा साथ-ही-साथ दौड़ रहे थे। बीच में गेंद आं। यशोदा ने किक मारकर दूर फेक दिया।

शंकर बोला—"शाबाश! मिलाओ हाथ!"

यशोदा ने कहा—"मैच खेलने आई हूँ या हाथ मिलाने?"

शंकर बोला—"मैच के माने हैं जोड़। किसी से हाथ मिला चुकी हो, तो दूसरी बात है।"

यशोदा—"हाथ तो किसी से नहीं मिलाया।"

शंकर—"एक से तो मिलाना ही पड़ेगा अंत में। शंकर से ही सही।"

यशोदा बोली—"कहाँ है तुम्हारा हाथ?"

शंकर—"सावधानी से, एंपायर की नजर बचाकर। जरा अपना नाम भी तो बता दो।"

"यशोदा है मेरा नाम।" यशोदा जल्दी से हाथ मिलाकर भाग गई।

कामता दयाल का हाथ पकड़कर बोला— 'कौन?"

दयाल ने जवाब दिया—"दयाल।"

"कमांडर नौजवान की आज्ञा है, एक-एक लड़का एक-एक लड़की से ज़रूर हाथ मिला ले। तुमने मिलाया या नहीं ?" कामता ने पूछा।'

दयाल ने जवाब दिया—"लक्ष्मी से मिला लिया। तुम अपनी तो कहो।"

कामता ने उत्तर दिया—"उदासी से।"

मैच एक अजीब तरह से हो रहा था। किसी तरफ़ गोल का हो जाना एक असंभव बात थी। वह अभी तक हुआ भी नहीं। मैच के भीतर यह जो हाथ मिलाने की प्रतियोगिता चल रही थी, उसने मैच की सजीवता क़ायम रक्खी थी। दोनो एंपायरों की खुली आँखों से उन अंधे खिलाड़ियों के हैंड छिपे न थे, पर उस स्वभाव के मैच में बार-बार हस्तक्षेप करना उन्होंने उचित न समझा।

नौजवान ने बिच्छू से पूछा—"बिच्छू, सबके हाथ मिल गए या नहीं ?"

"मिल गए। सिर्फ़ एक संतू बचा है।"—बिच्छू ने कहा।

"वह तो ब्रह्मचारी है। वह कदापि किसी से हाथ नहीं मिलावेगा।"

"गोल में होने के सबब मिलाता भी कैसे ?"

"कोई चिंता नहीं। एक गोल में उधर भी तो लड़की है—वही उसके लिये बाक़ी है। कभी न-कभी मिला लेगा उससे हाथ !"

गेंद खिलाड़ियों के बीच से दूर जा पड़ा था। मेघदूत ने गेंद उठाकर सीटी दी। सब खिलाड़ी सीटी की आवाज़ से उधर खिंच गए। गेंद को धप खिलाया गया, खिलाड़ी उस पर टूट पड़े।

नौजवान ने चंपा को फिर ढूँढ़कर कहा—"चंपा, सबके हाथ मिल गए, खेल भी अब ख़त्म होने को है। अगले इतवार तक हमारे बीच में वही सेठजी की फिर ऊँची दीवार है। जिस प्रकार वह ऊँची दीवार इस पट्टी में समा गई, इस पट्टी को भी उड़ा देने का ध्यान रखना।"

"याद है।" चंपा ने उत्तर दिया।

इसी समय मेघदूत ने खेल-समाप्ति की लंबी सीटी दी।

नौजवान उससे बिदा लेते हुए बोला—"दरवाज़ा खोल दो।"

चंपा ने जवाब में कहा—"दीवार तोड़ दो।"

मेघदूत ने सौदामिनी से कहा—"अच्छा, सौदामिनी, सात दिन के लिये बिदा दो।" उसने उसकी ओर बिदाई का हाथ बढ़ाया।

सौदामिनी कुछ संकोच में पड़ने लगी।

"क्यों, तुम्हें कैसी शंका हो गई?"

"इन्होंने हैंड का नियम तोड़कर भी हाथ मिलाए हैं। हमने तो एक दूसरे को खूब अच्छी तरह देख-भालकर जाँच लिया है।"

"हाथ मिलाने से क्या होगा?"

"एक प्रतीति।"

"कैसी प्रतीति ?" सौदामिनी ने पूछा ।

"कि हमारे विचार मिलते हैं।"

"लेकिन यह एक विदेशी ढंग है।"

"स्वदेशी क्या है ?"

"आप अपने हाथ से हाथ मिलावें, मैं अपने हाथ से हाथ मिलाऊँ।" सौदामिनी ने हाथ जोड़कर कहा—"नमस्ते।"

"नहीं, सौदामिनी, हमें हर जगह की अच्छी चीज़ को अपनी सभ्यता में मिलाना ही होगा। तभी सभ्यता का विकास होता है।" मेघदूत ने अपना हाथ बढ़ाकर सौदामिनी का हाथ खींच लिया।

वह घबराकर बोली—"कोई देख लेगा।"

"इन सबकी आँखों मे पट्टियाँ बँधी हैं।"

इसी समय लड़कों का दल चिल्लाया—"पट्टियाँ खोल दो।"

लड़कियों ने शोर किया—"दीवार तोड़ दो।"

दोनो ने घबराकर, अपने-अपने हाथ छुड़ाकर देखा—सात लड़के सात लड़कियों का हाथ पकड़े हुए थे, और भगती संतू को टटोल रही थी। दोनों सुपरिंटेंडेंटों ने अपने अपने विभाग को क़ायदे में बाँधकर हॉस्टलों को चलने की आज्ञा दी।

[सत्रह]

उस दिन गजाननजी डॉक्टर जोश के यहाँ वसंत को प्रतिज्ञा-बद्ध कराकर सीधे अपने घर लाए। मार्ग में जो उस पर उपदेशों की झड़ी बरसाने लगे थे, वह घर आकर भी नहीं थमी। पत्नी से विशेष भोजन बनाने का आग्रह किया, और वसंत को वहीं खाने का निमंत्रण दिया।

पत्नी ने पूछा—"बात क्या है ?"

गजाननजी बोले—"बात ? बहुत बड़ी बात है ! इस बालक को देखो। इसके साहस का विचार करो। गजानन जिस प्रतिज्ञा को बार-बार तोड़कर भी न जोड़ सका था, इस बालक ने उसे ध्रुव की तरह अटल कर दिया।"

सावित्री कुछ न समझकर सिर से पैर तक वसंत को देखने लगी।

"ऐसे क्या देख रही हो, अनबूझ की भाँति। वसंत डॉक्टर जोश के रजिस्टर में दस्तखत कर आया है। शायद लड़कों के दस्तखतों में इसके अग्रगामी हैं—इसने तमाम लड़कों के लिये मार्ग खोल दिया।"

"क्यों वसंत, तुम कब से तंबाकू पीने लगे ?"

"संगत का असर और क्या ? अच्छी बात सीखने में युग

लग जाते हैं, और बुरी बात बिना सिखाए ही आ जाती हैं।"

"ख़बरदार लल्ला, तुम बड़े बाप के बेटे हो, बुरे लड़कों के साथ अब न जाना।"

"अब कहाँ जायगा, अब डॉक्टर जोश का हाथ इसके सिर पर है। सावित्री, तुम्हें याद है, डॉक्टर जोश की गुरु-दक्षिणा देने के लिये मैं इतने महीने से परेशान था।"

"कैसी गुरु दक्षिणा?"

"तबाकू छुड़ाने का जो मंत्र दिया उन्होंने। तुम भूल गई क्या, फीस का एक पैसा नहीं लिया। कम-से-कम एक आदमी से सिगरेट छुड़ाने की दक्षिणा थी। कितनी छोटी चीज़! कितने भले-बुरे आदमियों की ख़ुशामद करता फिरा मैं। उसमें मेरा क्या स्वार्थ था? पर एक भी तो अपनी बुराई छोड़ने को राज़ी नहीं हुआ। यह दुनिया किधर जा रही है, कुछ समझ ही नहीं पड़ता। तुम रसोई घर में जाओ। हम दोनों सुबह के निकले हैं। ख़ूब अच्छा भोजन बनाओ।"—गजानन ने कहा।

सावित्री चल दी।

गजानन वसंत से कहने लगे—"वसंत, बेटा, तुम्हारे लिये इसका छोड़ना कुछ भी कठिन नहीं। मेरे तो एक एक रोम में यह ज़हर बसा हुआ था, तुम्हारे तो अभी यह धुआँ होंठों ही तक है। मैं भगवान् के निकट आज के दिन के लिये कृतज्ञ हूँ

कि मैं डॉक्टर साहब का ऋण अदा कर सका। और, तुम्हें भी उनके गुण गान करने चाहिए कि इस राक्षसी के पंजे में फँसने से पहले ही तुमने उसे परास्त कर दिया।"

वसंत गजानन के उन बार-बार दुहराए गए उपदेशों में कोई नवीनता न पाने से ऊब उठा। उसने जेब से 'ज़हर की पत्ती' की प्रति निकाली, और उसे पढ़ने लगा।

"बहुत बढ़िया किताब है यह। मैं कहता हूँ, ऐसी बढ़िया किताब दूसरी इस सदी में हिंदुस्तान क्या, दुनियां के किसी परदे में नहीं छपी। यह किताब रामायण और गीता की तरह हर घर में रहनी चाहिए, जिससे यह राक्षसी तंबाकू वहाँ न घुस सके। और, एक दिन ज़रूर आएगा, जब तमाम घरों में प्रतिष्ठा को प्राप्त हुई यह ज़हर की पत्ती जड़-मूल से हर घर के बाहर झाड़कर निकाल दी जायगी। उस दिन सारी दुनिया के लोग कोलंबस की जगह डॉक्टर जोश का नाम याद करेंगे। एक ने अमेरिका के साथ इस राक्षसी को ढूँढ़ा था, और दूसरे ने लाहौल का नाम लेकर इसे अस्तित्व के पृष्ठ पर से अंतर्धान कर दिया।"—गजानन ने कहा।

वसंत चुपचाप बैठा-बैठा अपनी पुस्तक के पढ़ने में विलीन था।

कुछ देर मौन रहने पर फिर गजाननजी का भाषण प्रारंभ हुआ— "क्यों वसंत, है न बढ़िया किताब ?"

"ज़रूर है।"

"कितनी मेहनत से लिखी गई है। डॉक्टर साहब कहते थे, हजारों पुस्तकों का निचोड़ इसमें है। मैं तो पुस्तक उसी को कहता हूँ, जो मानव-समाज का कोई उपकार करे। नहीं तो इस छपाई के सुलभ साधनों के जमाने में लाठी चलानेवाले भी क़लम चलाने लगे।"

वसंत पंडितजी की बातों में कोई रस न लेकर पुस्तक के ही पृष्ठ उलटता जा रहा था। अंत में वह उठते हुए बोले—"अच्छा, मैं तुम्हारे पढ़ने में कोई हानि नहीं पहुँचाऊँगा। मैं जरा ज्योतिष से गणना करता हूँ, तुम्हारी इस प्रतिज्ञा के फल की। इसीलिये मैंने तुम्हारे प्रतिज्ञा-पत्र पर दस्तखत करने का सही-सही समय अपनी घड़ी से नोट किया था।"

गजाननजी ने जाकर पंचांग उठाया, और एक स्लेट पर आड़ी-तिरछी रेखाएँ खींच गणना करने लगे। बीच-बीच में दो-तीन कपड़ों में बँधी हस्त-लिखित पुस्तकों में भी उन्होंने प्रकरण देखकर कुछ लिखा।

थोड़ी देर बाद जब उनकी भूख की ज्वाला को रसोई-घर से आती हुई अग्नि सिद्ध भोजनों की सुवास ने अधिक चैतन्य किया, तो वह वसंत के समीप आकर बोले—"वसंत, मैंने बहुत दूर तक तुम्हारा भविष्य देखा और विचारा। तुम अपनी इस प्रतिज्ञा पर सर्वथा अटल रहोगे। तुम्हारा विद्यार्थी-जीवन अद्वितीय रहेगा। उसके बाद तुम भारत के गण राज्य में एक विशेष पद को सुशोभित करोगे।"

वसंत ने पुस्तक बंद कर विस्मय से पंडितजी की ओर देखा। पंडितजी ने जोर देकर कहा—"कोई बनावट नहीं वसंत, सब गणना कर ही कह रहा हूँ। मुझे झूठ बोलने से क्या मतलब? मुझे तुमसे कोई लालच नहीं, कोई दक्षिणा नहीं चाहता। लेकिन डॉक्टर जोश को तुम्हें जरूर एक दक्षिणा देनी होगी। वह भी किसी सिक्के के रूप में नहीं—एक व्यक्ति की तंबाकू तुम्हें भी छुड़ा देनी होगी।"

"किसकी?"

"जिसकी भी हो, लेकिन मैं तुम्हें राय दूँगा—घर से ही सुधार करना अधिक हितकर है। सावित्री अगर तंबाकू पीती या खाती होती, तो मैं तुम्हारी सिगरेट छुड़ाने को इतना व्यग्र न होता। घर में कुछ न होने पर ही मुझे पड़ोस में जाना पड़ा। तुम्हारा सौभाग्य है—तुम्हारे घर में ही एक तंबाकू की लत-वाला है। क्यों न तुम पिताजी के हुक्के पर चोट चलाओ।" गजानन ने हँसकर कहा।

"यह कैसे हो सकता है?"

"क्या नहीं हो सकता? इस 'जहर की पत्ती' का सुबह-शाम गीता की तरह पाठ करना जोर-जोर से। परिशिष्ट भाग में वह सब दिया गया है। तुम्हारी सिगरेट तो छूट ही गई है, उसमें तो अब कोई शक ही नहीं है। जहाँ तक तुम्हारे उस पाठ की आवाज जायगी—जो भी उसे सुनेगा, निश्चय अगर वह तंबाकू पीनेवाला होगा, तो उसे छोड़ देगा। मैंने बड़ी कोशिश

की थी; उनकी यह लत छुड़ाने की, लेकिन वह अँगरेज़ी पढ़े वकील, उन्हें बहस मे हरा नही सका। और, वेद का कोई मंत्र इसके ख़िलाफ़ मुझे याद नही। हो भी कहाँ से? उस समय यह राक्षसी यहाँ थी ही नहीं। हमारी ग़ुलामी के साथ ही यह यहाँ आई, और हम स्वतंत्र होने पर भी, इसके यहीं रह जाने के कारण, आज तक इससे मुक्त न हो सके। चलो, अब भोजन कर लें; श्रीमतीजी पुकार रही है।"

दोनो भोजन के लिये जाने लगे थे कि द्वार पर किसी ने खट-खटाया। खीझकर गजाननजी ने द्वार खोला, तो रामधन बाबू!

रामधन बाबू बोले—"बड़ी देर लगा दी आपने?"

गजानन ने कहा—"क्या कोई आसान काम था? जो काम आप इतने बड़े वकील होकर भी न करा सके, उसे ठीक कराकर आया हूँ। रसोई ठंडी हो रही है। वसंत आज यहीं खायगा। आप जाइए, कह दीजिए, रसोई उठा दें।"

रामधन बाबू आशान्वित होकर कहने लगे—"क्या कहा, आपके डॉक्टर साहब ने?"

"कहना क्या? वह भूत निकाल दिया वसंत के सिर से। अब आप सावधान हो जाइए।"

"किसलिये?"

"अब आपकी बारी है।"

"हँ-हँ-हँ! हमारी क्या बारी है? जगत् युवकों का है, हमारो

तो अब जाने की ही बारी है। अब इस जन्म के साथी को कहाँ छोड़ जाऊँ ?"

गजानन ने वकील साहब के अधरों पर अपने हाथ का ढकना रखते हुए कहा—"यह आप क्या कहते है वकील साहब ! ससार युवकों का है, इसमे संदेह नहीं। लेकिन उन्हें पथ-निर्देश तो हमें ही करना है। जिसने जन्म-भर हमें बहकाया है, उसे आप साथी की संज्ञा देते हैं ! नहीं वकील साहब, आपका यह कुतर्क है।"

हँसते हुए वकील साहब बोले—"पहले इसे तो ठीक कर दीजिए।"

"यह ठीक हो गया।"

"अभी से कैसे कहा जा सकता है।"

"इसने डॉक्टर साहब के रजिस्टर में दस्तखत कर दिए।"

"मैंने रात-दिन कचहरी मे ऐसे दस्तावेज पेश किए, जिनमें दस्तखत करनेवाले साफ मुकर गए।"

"क्या आप उन्हें दंड नहीं दिला सके ?"

"दंड दिला सका, लेकिन फिर भी बहुत-से धूर्त कानून की आँखों में धूल झोंककर—"

गजानन बोले—"एक और नियंता भी तो है, वकील साहब, और उसके न्याय का कोई उल्लंघन कर ही नहीं सकता। आपने भोजन नहीं किए हैं, तो चलिए आप भी।"

"मै तो खा चुका हूँ।"

"तो विराजिए इस कुरसी पर।"—गजानन ने कहा।

वकील साहब ने वसंत के हाथ से 'ज़हर की पत्ती' ले ली। गजानन कहने लगे, ताने के साथ—"यह वही पुस्तक है वकील साहब, जो एक बार मैंने दी थी आपको अध्ययन के लिये, लेकिन आपने इसका पंखा बनाकर झल दिया था अपनी चिलम के सिर पर। पुत्र के हाथ से प्राप्त करने पर देखिए, शायद इसके हरूफों में आपको कोई अर्थ मिल जाय।"

पंडितजी वसंत का हाथ पकड़कर भोजन के लिये चले गए रसोई-घर मे। श्रीमतीजी कई बार कढ़ाई के कानों में चमचा बजाकर सिग्नल दे चुकी थीं।

रामधन बाबू ने वहीं से पुकारकर घर में जवाब भेज दिया कि वसत पडितजी के यहाँ भोजन कर रहा है। इसके बाद वह वहीं कुरसी पर बैठकर 'ज़हर की पत्ती' का पारायण कर इतवार के अवकाश का उपयोग करने लगे।

जब गजानन और वसंत ने खा-पीकर उस कमरे मे प्रवेश किया, तब भी वकील साहब का मनोयाग उस पुस्तक मे स्थिर था। पडितजी ने पूछा—"क्यो साहब, कैसी है पुस्तक?"

"अनेक बातो में असहमत होते हुए भी पुस्तक उपयोगी है। नवयुवक निःसंदेह इससे अपने जीवन को उज्ज्वल मार्ग में ले जा सकते हैं, लेकिन मेरे-जैसे बुड्ढे की ठोस हड्डी मे इसकी कोई पंक्ति नहीं गड़ सकती।"

"पूरी पढ़ ली आपने?"

"क़ानूनी दफ़ाओं का एक-एक अक्षर, मात्रा, विराम, अर्द्ध-विराम पढ़ने का आदी हूँ मैं, जहाँ ज़रा सी छूट पर मामले इधर से उधर हो जाते हैं। यह तो—" वकील साहब चुप हो गए।

"यह धर्म-शास्त्र है, संस्कृत के श्लोकों में नहीं है, तो क्या हुआ? आपने इसका परिशिष्ट (ख) पढ़ा या नहीं? उसमें मंत्र है, वकील साहब, मंत्र। मंत्र में अर्थ कोई अर्थ नहीं रखते, वे भावना उपजाते हैं, आकाश में बिजली की लहरें पैदा करते हैं। जड़ में पर लगा दें, और जीव को जमाकर बना दें पत्थर! क़ानून बदमाशों को जकड़ने की शृंखला है, धर्म-शास्त्र जीवन का प्रकाश है। आप उसको पूरा-पूरा पढ़ने में अपनी मान-हानि समझते हैं!"

"अच्छा, अच्छा, पूरा पढ़ूँगा।" रामधनजी हँसते हुए बोले—"लेकिन इन मंत्रों से आपको क्या सिद्धि मिली?"

"तंबाकू, जीवन के इस शत्रु से छुट्टी नहीं पा ली?"

"तंबाकू से छुट्टी कहाँ पाई? उसी के इंजेक्शन तो लगा देते है डॉक्टर जोश आपको बीच-बीच में, जब ज़रा उसका राशन कम हुआ, तो।"

"यह क्या कह रहे हैं आप, वकील साहब। शुरू में एक-दो इंजेक्शन लगाए थे ज़रूर। छ महीने बीत गए इस बात को। वे तंबाकू के नहीं थे।"

"अगले छ महीने और बीत जायँ, तो?" सहसा उन्हें इस बात की याद आई कि वसंत की सिगरेट छुड़ानी है, और इस

वहम से पंडितजी का विश्वास तोड़ना वसंत को भी हानि पहुँचाना है। उन्होंने अपने वार्तालाप की धारा बदलते हुए कहा—"नहीं पंडितजी, मैं आपकी केवल परीक्षा कर रहा था। सचमुच आपके इस सिगरेट के त्याग से हम सब आश्चर्य-चकित हैं। आपका मनोबल सराहनीय है। मैं क्या करूँ, मैं कभी प्रतिज्ञा के फॉर्म पर दस्तखत कर देता। पेट की शिकायत है मुझे बरसों से। जब तक एक-एक घंटा गुड़गुड़ा नहीं लेता, न मेरी निवृत्ति ही होती है—न प्रवृत्ति! आपने वसंत की यह लत छुड़ा दी। डॉक्टर जोश के कर्ज की चुकती मेरी प्रतिज्ञा से न सही, मेरे बेटे के दस्तखतों से हो गई।"

वकील साहब के श्रीमुख से आत्मश्लाघा के कुछ वाक्य सुनकर पंडितजी फूलकर कुप्पा हो गए। उस स्तुति को सब्याज लौटाते हुए बोले—"बाबू साहब, आपके इस होनहार बालक को पाकर डॉक्टर जोश बहुत खुश हो गए। सिगरेट छोड़ देने से अब देखिएगा, इसकी प्रतिभा का दिन-दूना, रात-चौगुना विकास हो जायगा। मैंने ज्योतिष की गणना से जो फल निकाला है, वह फिर कभी बताऊँगा आपको।"

"आपने मुझे सदैव के लिये ऋणी बना लिया पंडितजी।" उन्होंने वसंत से कहा—"वसंत, पैर छुओ पंडितजी के। इन्हीं के कारण आज तुम जीवन की उज्ज्वल दिशा में दीक्षित हुए हो। इन्हें आज से अपना गुरु समझो।"

वसंत ने पिता की आज्ञा का पालन किया।

"चलो, अब घर चलो। तुम्हारी बुआजी भारी चिंता में पड़ी है। वह समझ रही है, न-जाने मैंने तुम्हें कितना पीट दिया है। और फिर, इतनी देर तक तुम्हारे न लौटने से तो वह नाना प्रकार की कल्पनाओं मे डूब गइ होगी। चलो, जिससे उनको तसल्ली हो जाय।"

वसंत उनके साथ जाने लगा। उसने पंडितजी की ओर बिदाई के लिये मूक दृष्टि की। पंडितजी बोले—"जाओ, तुम्हें अपनी आत्मा से आशीर्वाद देता हूँ। अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहकर दिन-दिन उन्नति करना। घर, पड़ोस और देश के अभिमान का कारण बनना। हर रोज मेरे पास जरूर आना। मैं भी कभी-कभी आऊँगा।"

पिता-पुत्र के जाने पर गजानन मन मे बोले—"बड़े चतुर हैं यह वकील। उस दिन कहते थे, तंबाकू की गुड़गुड़ाहट से मैं बेतार की तारबर्क़ी करता हूँ, अफसर के कानो में, और उसके धुएँ में मैं कई दिन पहले ही मुकदमे की सूरत बना लेता हूँ। क्या मज़े की बात है। और, यह मानते हैं पुराणों को एक काव्य। मूर्ति-पूजा को गुड़ियों का खेल तथा श्राद्ध को ब्राह्मणों के पैसा कमा लेने की एक तरकीब!"

वसंत ने 'जहर की पत्ती' का पूरा पारायण कर लिया। डॉक्टर जोश ने उस किताब को आकर्षक बनाने में कोई कसर नहीं रक्खी थी। संध्या-समय वसंत फिर गजाननजी के यहाँ जा पहुँचा।

"क्यों, क्या बात है ?"

"एक बात पूछनी रह गई। पाठ सारी किताब का किया जायगा क्या ?"

"केवल परिशिष्ट (ख) का किया जायगा पाठ सुबह-शाम। वैसे पूरी किताब को बराबर पढ़ते रहने की आवश्यकता है। क्योंकि उसके अनमोल तथ्य और अंकों के याद हो जाने से फिर कभी तुम्हारे ऊपर यह दानवी तंबाकू अपना फंदा न फेंक सकेगी। इसके सिवा हमें इसके विरुद्ध प्रचार भी करना है। केवल अपना ही स्वार्थ नहीं। हमें अपने सब साथियों को अपने साथ उन्नति के मार्ग पर ले जाना है। परिशिष्ट (ख), उसका पाठ करने की यह सूझ मेरी ही है। मैंने बराबर उसका पाठ किया, और उससे जो लाभ हुआ मुझे, मैं ही जानता हूँ। उसी की बदौलत गजानन अपनी प्रतिज्ञा पर यशस्वी हुआ है।"

वसंत पंडितजी का मर्म समझकर चला गया।

दूसरी सुबह जब रामधन बाबू अपनी बैठक में प्रभात की पहली गुड़गुड़ी बजा रहे थे, अचानक उन्होंने पास के कमरे से वसंत की आवाज सुनी। वह जोर-जोर से कह रहा था—"मैं अब कभी तंबाकू न पिऊँगा, मैं अब कभी तंबाकू न पिऊँगा। मैं अब कभी तंबाकू न पिऊँगा···"

रामधन बाबू को यह सावन की-सी लगातार झड़ी या वृत्ताकार घूमती हुई ग्रामोफ़ोन की-सी सुई अधिक असह्य हो

उठी। वसंत के कमरे में जाकर उन्होंने कहा—"क्या हो रहा है यह, वसंत !"

"परिशिष्ट (ख) का अभ्यास पिताजी !"

"तुम्हारा दिमाग़ तो ख़राब नहीं हो गया !"

"दिमाग़ में यह नई नहर खोद रहा हूँ पिताजी। परिशिष्ट (ख) में लिखा है—सारा संसार शब्दों से ही बना है। शब्दों की ध्वनि से हम पुराने अभ्यास को मिटाकर उसके ऊपर नई इमारत खड़ी कर सकते हैं। शब्द विचार की अगली मंज़िल है, तो कर्म की पहली। मनुष्य की आदत उसके विचारों की अनुगामिनी है।"

"बात तो ठीक है, तो क्या दिन-भर यही रटते रहोगे ?"

"जितनी देर तक कह सकूँगा, उतनी जल्दी असर होगा।"

"ज़ोर से क्यों कहते हो ? कोई मुवक्किल सुन लेगा, तो क्या कहेगा। यही धीरे-धीरे भी तो कहा जा सकता है।"

"नहीं, डॉक्टर साहब ने ज़ोर से कहने पर ही ज़ोर दिया है। इससे मन पर दोहरा असर पड़ता है।"

"पंडितजी ने नहीं बताया, बिना होंठ हिलाए जो जप होता है, वही सर्वश्रेष्ठ है ?"

"नहीं, कुछ नहीं कहा। पिताजी, यदि सचमुच मेरी लत छुड़ाना चाहते हैं, तो आपको डॉक्टर साहब के नुसख़े में कोई बदलाव नहीं कराना चाहिए।" उसने फिर आरंभ किया—"मैं

अब कभी तंबाकू न पिऊँगा। मैं अब कभी तंबाकू न पिऊँगा। मैं अब कभी—"

रामधनजी अपने दोनों कानों में उँगली खोंसकर बोले—"करो बेटा, जो तुम्हारा जी चाहे।" वह अपनी बैठक में चले गए।

फिर वसंत की आवाज़ वहाँ गूँजने लगी—"मैं अब कभी तंबाकू नहीं पिऊँगा..."

रामधन बाबू मन में सोचने लगे—"कोई मुवक्किल आ जायगा, तो क्या कहेगा?" वह ज़ोर-ज़ोर से गुड़गुड़ाने लगे। यह देखने को कि उस गुड़गुड़ाहट मे वह परिशिष्ट (ख) का मंत्र डूब सकता है या नहीं?

वसत ने सहसा अपने मंत्र में कुछ और जोड़ लगाया। वह ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा—"मैं अब कभी तंबाकू न पिऊँगा, और पिताजी को तंबाकू भी छुड़ाकर रहूँगा।..."

घबराए वकील साहब यह सुनकर। मुवक्किलों को क्या, अब तो वह आवाज उन्हीं को खटकने लगी। वह और ज़ोर-ज़ोर से गुड़गुड़ाने लगे और मन-ही-मन कहने लगे—"यह डॉक्टर जोश एक विकृत मस्तिष्क का जान पड़ता है। घर-गृहस्थीवाला होता, तो इसे पता चलता। एक अच्छी पूँजी इसके हाथ लग गई। उसी निश्चितता में इसने कॉलेज की प्रोफ़ेसरी छोड़ दी। कुछ उत्तरदायित्व इसके होता, तो संसार के सुधार के यह ऐसे ऊटपटॉग सपने न देखता। यह अपनी सनक घर-घर में फैला देगा क्या?"

वसंत वहीं आ पहुँचा। बोला—"पिताजी, एक प्रार्थना है, मेरे इस पाठ के समय आपको यह गुड़गुड़ी बंद कर देनी पड़ेगी।"

"क्यों ?"

"क्योंकि मैं आकाश में एक तरह की लहरें पैदा कर रहा हूँ। आप दूसरी तरह की लहरों से उन्हें मिटाते जा रहे हैं। फिर मुझे क्या फायदा पहुँचेगा इस पाठ से ?"

"मैं क्या कुछ कह रहा हूँ ?"

"आपकी गुड़गुड़ी ?"

"उसकी क्या कोई ज़बान है ?"

"ज़बान न हो, आवाज़ तो है। यह सारा जगत् आवाज़ का बना हुआ है।"

"कौन कहता है ? पंडितजी ?"

"नहीं, डॉक्टर जोश, प्रोफ़ेसर जोश।"

"अच्छा, मैं इसका पानी निकालकर धुआँ खींचूँगा।"

वसंत ने धीरज की साँस ली।

रामधन कुछ सोचकर बोले—"लेकिन, मैं तुम्हारा कमरा बदल दूँगा।"

[अट्ठारह]

उस दिन अंधे फुटबॉल पर लड़कियाँ टीका-टिप्पणी कर रही थीं। लक्ष्मी बोली—"मैं तो समझती हूँ, ऐसे अंधे मैच में कभी किसी तरफ गोल हो जाना मुमकिन है ही नहीं।"

चुन्नी हँस पड़ी—"किधर हमारा गोल है और किधर लड़कों का, इसका भी तो होश नहीं रहता किसी को।"

चंपा बोली—"लेकिन इस अंधे मैच को धन्यवाद है! गोल हो, चाहे न हो। एक दिन प्रकाश में जरूर आ जायँगी हम।"

यशोदा ने कहा—"मास्टरनीजी कहती हैं, इससे हमारी छठी सेंस खुल जायगी।"

भगती ने पूछा—"छठी सेंस क्या है?"

चंपा ने कुछ मुसकाकर जवाब दिया—"कहते नहीं हैं, तुम बड़ी छँटी हुई हो।"

भगती कुछ नाराज हो गई। बिजली ने अपने जनरल नॉलेज की करामात दिखाते हुए उसको शांत किया—"आँख, कान, नाक, मुँह और स्पर्श की जो हमारी पाँच इंद्रियाँ हैं, इनके ऊपर एक और इंद्रिय।"

भगती बोली—"वह कौन-सी? उससे क्या किया जाता है?"

बिजली ने प्रत्युत्तर में कहा—"यह तो वह भी ठीक-ठीक नहीं बता सकी।"

चंपा ने कहा—"उससे ग़ुलामी को दूर कर व्यक्ति स्वतन्त्रता प्राप्त करता है। हम ग़ुलाम है।"

उदासी ने पूछा—"कैसी ग़ुलामी ? खाने पीने, कपड़े-लत्ते, पढ़ने-लिखने का सुबीता जो है।"

चंपा बोली—"सीखचों मे बंद हैं। चाँदी के हुए, तो क्या; लोहे के हुए, तो क्या ?"

भगती ने कहा—"सीखचों में लड़के भी तो बंद है।"

चंपा—"उनकी भी छठी सेंस जाग उठेगी, अगर हम दोनो विभाग एक होकर ज़ोर लगावे। सीखचों को टूटते कोई देर न लगेगी, और विना मैच खेले छठी सेंस जाग उठेगी।"

भगती—"मैं नही समझी, इन नियमों के बंधनों को तुम जेलख़ाना क्यों कह रही हो ? तुम्हारी इस बग़ावत की बात अगर सेठजी के कानों तक पहुँच गई, तो वह क्या कहेंगे ?"

चंपा—"तुम्हारी बाते सुनकर मुझे आश्चर्य होता है। प्रकृति में प्रत्येक प्राणी को भगवान् ने आज़ाद पैदा किया है।"

भगती—"मैच खेलने की आज़ादी तो मिली है।"

चंपा—"उस अंधेपन को तुम आज़ादी कहती हो ? मैच मे तुम्हारा हैंड हुआ या नही ?"

भगती—"नहीं।"

चंपा—"अगर तुम्हारा हैंड हो गया होता, तो ऐसी बात न

कहती। पूछो, सबने हैंड किया है। मैं तुम्हारी लीडर हूँ। जो कुछ मैं कहूँगी, वह तुम्हें मानना ही चाहिए। मैंने सबसे हैंड करने को कहा था—तुम्हीं ने क्यों नहीं किया?"

भगती—"मैं कैसे करती हैंड?"

चंपा—"क्यों?"

भगती—"मैं गोल में थी।"

चंपा—"अब समझी, तभी तुम्हारी छठी सेंस नहीं खुली। अच्छा, अब की मैच में तुम गोल में न रहना, एक लड़का उधर भी बाकी होगा, उसी से हाथ मिलाना।"

भगती ने पूछा—"उसका नाम?"

चंपा—"पूछ लेना।"

भगती ने फिर पूछा—"इससे क्या होगा?"

चंपा—"इससे क्या होगा? हम पार्टी बना रही हैं, एक लड़के के साथ एक लड़की की। हमारे बीच में यह जो ऊँची दीवार बना दी गई है—हम इसे जमीन में बिछा देंगे।"

एकाएक सेठजी नारी विभाग का निरीक्षण करने को आते हुए दिखाई दिए। सब उस विद्रोह की भावना को दबाकर बड़े आदर से सेठजी के स्वागत को खड़ी हो गईं।

सेठजी ने आकर कहा—"परसों इतवार के मैच में हार-जीत का कोई फैसला नहीं हुआ। धीरे-धीरे हो जायगा।"

चंपा ने साहस कर उत्तर दिया—"इस तरह आँखों में पट्टी बाँधकर तो शायद ही कभी कोई फैसला हो सके।"

"अभ्यास से सब कुछ हो सकता है।"

चंपा ने फिर तुरंत ही कहा—"जिस तरह खुली आँखों से दुनिया मैच खेलती है, ऐसे ही हम भी क्यों न खेलें ?"

सेठजी नाराज हो उठे—"तुम नहीं खेल सकती हो, दुनिया की मैं नहीं जानता। 'जय हिंद बीडी-फैक्टरी' तुम्हारी परवरिश करती है, तुम्हें उसके नियम मानने पड़ेंगे।"

"परवरिश कैसी ? हम परिश्रम करती हैं।"—चंपा ने मुँहतोड़ उत्तर दिया।

"तुम बड़ी बेअदब जान पड़ती हो। और लड़कियाँ ऐसी नहीं हैं।"—सेठजी की त्योरियाँ चढ़ गई थीं।

"सब यही जवाब देंगी, आप पूछ लीजिए। मेरे मुँह से इन सबकी ही वाणी एक होकर निकल रही है। मैं इन सबकी लीडर हूँ।"—चंपा ने निर्भयता से कहा।

सेठजी ने सब लड़कियों पर तीव्रदृष्टि डाली। वे सब एक-एक कर, चंपा के पीछे पंक्ति बाँधकर खड़ी हो गई थीं।

उन्होंने घबराकर इधर-उधर देखा। सौदामिनी वहाँ न थी, शायद वह उन्हें मदद पहुँचाती। गुस्से में भरकर उन्होंने कहा—"हूँ! तुम लीडर बन गई हो आज। भिखारियों की छोकरियों! जब मोटरों की उड़ती हुई धूल में तुम्हारा घर था, जब मक्खियों से भरे भीख के टुकड़ों पर तुम्हारा जीवन था, तब क्या थीं तुम ?" सेठजी उसी समय वहाँ से चले गए।

लेकिन चंपा का उत्साह जरा भी नहीं टूटा। रात को रसोई-

घर में चंपा ने सेठजी के उस उपहास का पहाड़ बनाकर रख दिया। वह बोली—"बहनो, हो सकता है, सेठजी ने हमारा उपकार किया हो। लेकिन इस तरह हमारी हँसी उड़ाने का उन्हें क्या अधिकार है? हमारे मरे हुए पुरखों की बेइज्जती करना उनको शोभा नहीं देता। हम भिखारियों के घर पैदा हुई, तो इसमें हमारा क्या अपराध है?"

सब चुप होकर इस जातीय अपमान से भर उठीं। चंपा ने कुछ विश्राम देकर कहा—"इसलिये हे भिखारियों की संतानो, जागो, और उस संयोग को जी भरकर कोसो, जिसने तुम्हें श्रीमानों के घर उत्पन्न नहीं किया। प्रकृति ने तुम्हारी आँखें उपजाई थीं, लेकिन श्रीमान् सेठजी ने तुम्हारी उन आँखों पर पट्टी बाँधकर अंधा बना दिया। इस अंधेपन को देखो। और, बदले में क्या मिला है तुमको? वह कहते हैं, तुम्हारे जीवन का स्तर ऊँचा किया गया है, तुम्हें खाने को बढ़िया भोजन, रहने को कोठी और पहनने को साफ-सुथरे कपड़े मिले हैं। इससे तुम्हारी आत्मा गंदी कर दी गई, तुम्हारे भीतर एक झूठा अभिमान पैदा हो गया, और तुम प्रकृति के संसर्ग से दूर कर विलासी बना दी गईं।"

सब सन्न होकर चंपा के उस भयानक विस्फोट को सुन रही थीं। कुछ कमजोर दिल की द्वार की तरफ़ सेठजी, सौदामिनी या किसी अन्य अधिकारी की आहट की कल्पना से भयभीत हो रही थीं।

चंपा की घन-गर्जना जारी थी—"भीख माँगते थे ? कोई अशर्फियाँ नहीं बरसा जाता था हम पर। जो हमें देता, वह धर्म कमाने के उद्देश्य से ही देता। एक छोटा-सा जगत् था हमारा, एक छोटी-सी आवश्यकता थी। बड़े धीरज के साथ हम सरदी, गरमी और वर्षा को सहन करती थीं। बिना छत और दीवारों का हमारा वह आश्रय यहाँ लालच के घेरे में बंद कर दिया गया।"

अचानक भगती ने उठकर चंपा से चुप हो जाने का संकेत किया।

वह अपने उसी स्वर में बोली—"क्या है ?"

भगती धीरे धीरे कहने लगी—"कोई आ रहा है।"

चंपा ने और भी ऊँचे स्वर में उत्तर दिया—"आने दो, चोरी कर रही हैं क्या ? लेकिन तुमने अपने भय से मेरे प्रवाह को बड़ी भारी चोट पहुँचा दी। मैं कुछ विशेष बात कहने को थी। जाने दो, फिर कभी कह दूँगी। सारांश यही है, हम अपनी इस स्थिति से संतुष्ट नहीं हैं। सड़कों पर अब भी सैकड़ों भिखारी मौजूद हैं। सेठजी छाँट-छाँटकर ही हमें यहाँ लाए हैं। क्या यह उनकी स्वार्थपरता नहीं है ? मैं अब और अधिक इस समय कुछ न कहूँगी। क्या तुम सब मेरे साथ एक हो ?"

"हैं।"—सबने एक स्वर में कहा।

"मेरे निश्चय पर सब सहमत रहोगी ?"

"रहेंगी।"—सबने उत्तर दिया।

"मैं जो करने को कहूँगी, करोगी ?"

"करेंगी।"

चंपा ने अपनी जेब से एक काग़ज़ निकालकर कहा—"मैंने सेठजी के लिये सबकी तरफ से यह अर्ज़ी लिखी है। कोई बेअदबी या विद्रोह की ध्वनि नहीं है इसमें। केवल जन्म-सिद्ध मानवीय अधिकारों की माँग की गई है। तुम सब एक-एक कर, इसका एक-एक अक्षर समझकर इसमें हस्ताक्षर करो।"

अनेक लड़कियों ने आँख मूँदकर उसमें दस्तख़त कर दिए। कुछ ने उसका एक बार, कुछ ने दो बार पढ़ने पर अपनी सही कर दी। दूसरे दिन चंपा ने वह अर्ज़ी सौदामिनी की मेज़ पर रक्खी और कहा—"इसमें आप अपने दस्तख़त भी कर दीजिए, और सेठजी की सेवा में समर्पित कर दीजिए।"

सौदामिनी कहने लगी—"मेरे कैसे दस्तख़त ?"

चंपा उसे राज़ी न कर सकी, पर उसने कहा—"मेरा हृदय तुम्हारे साथ है। मुझे वह वेतन देते हैं, इसलिये मुझे क्षमा करना चाहिए। पहुँचा दूँगी मैं ज़रूर इसे उनके पास तक।"

सौदामिनी ने लड़कियों की अर्ज़ी सेठजी को दी। उन्होंने उसे पढ़कर भारी क्रोध प्रकट किया, और उसके टुकड़े-टुकड़े कर भूमि पर फेक दिया। कहने लगे—"मैं उनका नौकर हूँ क्या ? मैंने उनके सुख-आराम का इंतज़ाम किया है। मैं हर महीने उन्हें तनख़्वाह देता हूँ। मैं जैसे उन्हें रखना चाहूँगा, उन्हें रहना

पड़ेगा। अगर वे मेरी भलाई को बुराई समझती है, तो जहाँ उनकी इच्छा हो, वहाँ चला जायँ।"

सौदामिनी सेठजी का पक्ष लेकर बोली—"आपका उदारता का ये लाभ उठाना चाहती हैं। आपने उनको मैच की आज़ादी दे दी न?"

"मैं उनका मैच बंद कर दूँगा अगली बारी से।" कुछ सोचकर शीघ्र ही उन्होंने कहा—"नहीं, अभी मैच तो बद नहीं करूँगा। तुम अपनी तरफ से उन्हे ऐसा भय दिखा देना।"

लड़कियाँ आँखो की पट्टियाँ खोलकर देवी के मंदिर और खेल के मैदान मे लड़को के साथ स्वतत्रता के सपने देख रही थीं कि सौदामिनी ने आकर उन्हे चूर-चूर कर दिया।

चंपा का साहस सौदामिनी के आगे खुल चुका था। वह निर्भय होकर कहने लगी—"नहीं, यह ग़ुलामी, यह अधिकारों का लूट हमे किसी भाव बर्दाश्त नहीं है। हम फुटपाथ पर ही अच्छी हैं, हमें ले जाकर वहीं छोड़ दिया जाय।"

सौदामिनी उसका हाथ पकड़कर उसे समझाने लगी—"पागल हो गई हो क्या? धीरे-धीरे सब कुछ हो जायगा। ऐसी जल्दी क्या पड़ी है।"

"नहीं, अब हम जाग उठी हैं। अब एक मिनट भी हम इस अँधेरी कोठरी में रहने को तैयार नहीं हैं।"

सौदामिनी उसकी उत्तेजना देखकर वहाँ से खिसक गई।

लेकिन तमाम लड़कियाँ उसके आदेश पर आग-पानी में कूद जाने को भी तैयार हो गईं।

यह आश्वासन पाकर चंपा बोली—"घबराओ नहीं, जिसने पेट दिया है, वही खाना भी देता है। हम दीवार तोड़ देंगी—दरवाज़ा खोल देंगी। हिम्मत रक्खो, अगर 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' में हमारे लिये जगह न रहेगी, तो हम दूसरी फैक्टरी खोज लेंगी।"

"चंपादेवी की जय!"—सब बोल उठीं।

"लेकिन ठहरो, आज इतवार की छुट्टी है। शाम को मैच में लड़कों की राय ले लेना जरूरी है। फिर कल जो निश्चय होगा, निर्भय होकर करेंगी।"

शाम को अंधे फ़ुटबॉल का मैच आरंभ हुआ। सेठजी भी वहाँ आवेंगे, ऐसी आशा थी। लेकिन उनका ग़ुस्सा अभी शांत नहीं हुआ था, वह नहीं आए। मैच आरंभ हुआ। चंपा नौजवान को ढूँढ़ने लगी।

सौदामिनी ने मेघदूत से लड़कियों की अर्ज़ी की घटना सुनाकर कहा—"मैं तो समझती हूँ, यह इस अंधे मैच का ही फल है। इसकी आज्ञा न देनी थी सेठजी को, यहीं पर उनसे पहली भूल हो गई।"

मेघदूत बोला—"यह बाँध, नहीं तो किसी दूसरी जगह से टूट जाता सौदामिनी। प्रतिबंध प्रतिक्रिया ढूँढ़ता है, उसमें स्वयं बल है, उसके आगे मार्ग कोई-न-कोई निकल ही आता है। वह तो केवल एक बहाना है। चलो, ठीक ही हुआ, नहीं तो तुम्हारे दर्शन कैसे होते?"

सौदामिनी चौंककर बोली—"विद्रोहियों में शामिल हो जाओगे क्या ?"

मेघदूत बोला—"उसी से तुम्हें प्राप्त किया है।

"नौकरी चली जायगी, तो ?"

"दूसरा मालिक मिल गया।"

"कहाँ ?"

"यहीं।"

"कौन ?"

"तुम।"

"चलो, हटो। वह देखो, लड़कियों की लीडर किससे बातें करने लगी ?"

"वह लड़कों में सबसे भयानक लड़का नौजवान है। लेकिन हम उन दोनों की बातचीत अंधे फ़ुटबॉल की किसी धारा से नहीं रोक सकते।"

"सीटी बजाकर हैंड कह दो।"

"एंपायर ऐसा भूठ नहीं बोल सकता।"

"कह दो, एक सौ चवालीस !"

"असंभव ! तुम परिहास करने लगीं।"

"तब यह विद्रोह अपने आप सुलग गया !"

चंपा ने नौजवान को ढूँढ़ लिया और बोली—"सेठजी ने हमारी अर्जी फाड़ दी, अब हम क्या करें ?"

"जो जी में आवे। हम तुम्हारी मदद करेंगे।"

"भूख-हड़ताल कर दें ?"

"ज़रूर कर दो।"

"तुम क्या मदद करोगे ?"

"रात को आकर तुम्हें मिठाइयाँ खिला जाया करेंगे।"

"हँसो नहीं। हम गंभीर हैं, और फिर फ़ुटपाथ पर बिछौना और भीख का ठीकरा ले जाने को तैयार हैं।"

"हम भी प्रस्तुत हैं।"

"वचन दो।"

"भगवान् साक्षी हैं।"

दोनो विभागों के लीडरों ने सबकी सलाह ली। मैच की ओट में उस दिन यही धंदा चलता रहा। दोनो एंपायरों ने बराबर सुनी-अनसुनी की। वे कहाँ तक उपेक्षा करते। जब उन्होंने हड़ताल-शब्द की बार-बार पुनरावृत्ति सुनी, तो मेघदूत बोला—"सौदामिनी ! अब तो कुछ करना ही चाहिए। हमारी नज़रों के सामने इस विद्रोह को पनपता देखकर सेठजी क्या कहेंगे ? सोचो कुछ, जल्दी से।"

नौजवान चंपा से कह रहा था—"हमारे दल के सब लड़कों ने लड़कियों से पार्टियाँ बना ली हैं, सिर्फ़ संतू नाम का एक लड़का बाक़ी रह गया।"

"उससे कह दो, हमारे यहाँ बची हुई लड़की का नाम भगती है। संतू ढूँढ़कर उससे हाथ मिला ले।"

"संतू एक विशेष नमूने का है, इसके लिये भगती को ही कष्ट करना होगा।"

चंपा ने भगती को तैयार कर दिया। वह उसे ढूँढ़ती हुई पुकारने लगी—"संतू!"

संतू घबरा उठा। कोयल के-से कोमल कंठ से अपने नाम की पुकार सुनकर उसका हृदय धड़कने लगा। एक-दो आवाज़ों पर उसने अपने मन का भ्रम मिटाया, और फिर उस पुकारनेवाली के निकट जाकर बोला—"क्या है?"

"तुम संतू हो?"

"हाँ।"

"कब से तुम्हें ढूँढ़ रही हूँ। हाथ मिलाओ।"

"नहीं, मैं औरतों से हाथ नहीं मिलाता।"

"उनके साथ मैच खेलते हुए तुम्हें शरम नहीं आती, हाथ मिलाते हुए कैसी लाज?"

"मेरा उसूल है।"

"तुम्हारे दिमाग़ की कमज़ोरी है। सातों लड़कों ने सातों लड़कियों से हाथ मिलाकर अपनी-अपनी पार्टियाँ बना ली हैं, सिर्फ़ हम-तुम ही फुट रह गए हैं। यह हम दोनो के लिये कलंक की बात है।"

"नहीं, ये पार्टियाँ हड़ताल करने के लिये बनाई जा रही हैं।"

भगती ने बलपूर्वक संतू का हाथ खींच लिया—"कुछ भी हो, हर हालत में हमें अपने कमांडरों का हुक्म मानना ही होगा. नहीं तो हम दोनो की ख़ैर न होगी।"

मैच समाप्त होते-होते अंत मे निश्चय हुआ—भूख-हड़ताल के बदले काम-हड़ताल की जायगी। पहला क़दम लड़कियाँ ही उठा-वेंगी। अगर सेठजी कोई समझौता करने को राज़ी न हुए, तो फिर लड़के भी उस हड़ताल मे योग देंगे।

दूसरे दिन चाय-नाश्ते के बाद लड़कियाँ स्कूल गईं। वहाँ उन्होंने इस मज़मून की एक अर्ज़ी लिखी कि जब ~~तक~~ उन्हें लड़कों के साथ सामाजिक एकता नही दी जाती, वे बीड़ी लपे-टने से इनकार करती है। उसमें आठों ने दस्तख़त किए।

सौदामिनी ने उन्हे समझाने की कोशिश की, पर वे न मानीं। अंत मे निरीक्षिका ने उस अर्ज़ी को सेठजी के सामने पेश करने से बिलकुल इनकार कर दिया। चंपा ने वह अर्ज़ी चौकीदारिन के माफ़त उनके पास भिजवा दी।

सेठजी ने पढ़ा उस निवेदन को। आज उत्तेजना न बढ़ने दी उन्होंने। बड़ी गंभीरता से मुंशीजी को देकर उसे फ़ाइल करा दिया। चौकीदारिन से कहा—"जाओ, फिर जवाब मिलेगा। निरीक्षिका को यहाँ भेज दो।"

सेठजी ने सौदामिनी से उस अर्ज़ी के सिलसिले में कहा—"यह नादानी कैसे सूझ गई इन्हें! यह इनकी शिक्षा की कमी है।"

अपने ऊपर छींटा पड़ता देख सौदामिनी ने कहा—"मैं तो समझती हूँ, अख़बारों के पढ़ने से उनकी सूझ और साहस बढ़े हैं।"

"तो वे क्या चाहती हैं, मैं जाकर उनकी ख़ुशामद करूँ?"

"यह कैसे हो सकता है ?"

"काम करने को तैयार नहीं, भोजन के लिये ?"

"सुबह चाय-नाश्ता तो किया, आप आज्ञा दें, तो दिन का खाना बंद करा दिया जाय ?"—सौदामिनी ने पूछा।

"नहीं, नहीं, वे मेरी संतान हैं। उनकी नासमझी को मुझे [illegible] ही सहन करना चाहिए। मैं अपनी ओर से कुछ न करूँगा। करने दो, वे जो भी करती हैं। मैं लड़कों के साथ उन्हें अभी कोई सामाजिक एकता नहीं दे सकता।"

निरीक्षिका जब लौटकर स्कूल में पहुँची, तो सब लड़कियों ने उसे घेरकर पूछा —"हमारी अर्जी का क्या हुआ ?"

"विचार करने के लिये फ़ाइल कर दी है।"

"हमने आज ही उत्तर माँगा था।"

"जल्दबाज़ी ठीक नहीं।"

चंपा बोली—"दस बजे तक हमें कोई उत्तर न मिला, तो हम दस बजे काम पर न जायँगी।"

दस बजे तक सेठजी ने उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया। वे सब एक होकर, मुँह फुला बैठ गईं। उन्होंने काम की घंटी को बजने दिया, और निरीक्षिका के आग्रह को ठोकर मार दी।

एक बजे सब खाना खाने गईं। दो बजे तक सेठजी की कोई आज्ञा उन्हें नहीं मिली। सलाह-मशविरे में ही उनका समय बीतता चला। सेठजी के प्रतिरोध न लेने के कारण बहनों के पैर लड़खड़ाने लगे।

सेठजी अपनी आराम-कुरसी पर लड़कियों के इस विद्रोह का प्रतीकार सोच रहे थे कि मेघदूत ने हाथ में एक काग़ज़ लेकर वहाँ प्रवेश की आज्ञा माँगी।

सेठजी ने उसके हाथ का काग़ज़ लेने से पूर्व ही कह दिया—"और, यह धमकी क्या लड़कों के विभाग की है?" उन्होंने अर्ज़ी पढ़ी, और उसमें भी वही बात पाई। उन्होंने सुपरिंटडेट के मुख की ओर देखा।

मेघदूत कहने लगा—"श्रीमन्, नौजवान नाम का जो लड़का आपने भरती किया है, वह बड़ा धूर्त है। इस तमाम गड़बड़ की जड़ में वही है। मेरी समझ मे उसे तुरंत फ़ैक्टरी से निकाल देना चाहिए, फिर सब कुछ अपने आप ठीक हो जायगा।"

"नहीं-नहीं, ऐसा न कहो। उसे निकाल बाहर करना मेरी सबसे बड़ी कमजोरी होगी। जयराम के निर्णयों ने उसे कभी धोखे मे नहीं रक्खा। उसे निकालना उसकी नहीं, मेरी नालायक़ी का सबूत है। वह चारों ओर मुझे बदनाम करता फिरेगा।"

"तब उसे किसी दूसरे विभाग में बदल दीजिए।"

वह उस विभाग मे भी गंदगी फैलावेगा। असल में उसकी जगह नहीं, उसकी आदत बदलने की जरूरत है। वह जहाँ है, वहीं उसे ठीक किया जायगा। कठोरता के व्यवहार से नरमी से काम लेना अधिक आसान भी है, और लाभदायक भी। इसलिये चुप रहिए, मुझे सोचने दीजिए।"

[उन्नीस]

उसी दिन मुंशीजी शाम को भूधर की दूकान में जा पहुँचे। सेठजी की आज्ञा या अपनी ही प्रेरणा से गए, कुछ पता नहीं। वहाँ जाकर जो उन्होंने देखा, उससे उनके अचरज का ठिकाना न रहा। दूकान की सारी काया पलटी नज़र आई। बाहर उजाला, भीतर प्रकाश, फ़र्श साफ़, दीवारें चमकती हुई। कूड़े-कचरे का पता नहीं, मकड़ियों के जाले तोड़ दिए गए, और चूहों के बिल पाट दिए गए। उलझन और गड़बड़ का कहीं कोई निशान नहीं। हर चीज़ ठौर-ठिकाने से लगी हुई। सर्वत्र स्वच्छता और नियम की व्यापकता मन को खींच रही थी। बाहर, दूकान के द्वार पर, एक लड़का बैठा हुआ था। मुंशीजी के प्रवेश पर वह नम्रता से उठा। उसने हाथ जोड़कर पूछा—"क्या आज्ञा है?"

मुंशीजी हँस पड़े। भीतरी कमरे से आती हुई आवाज़ में सुना उन्होंने—मशीन का पहिया बेखटके, निर्बाध और मीठे स्वरों में, तमाम पुरज़ों के सामंजस्य में चल रहा था। सारा वातावरण मानो इस बात की घोषणा कर रहा था—"भूधर की मशीन बन गई!"

"कहाँ हैं भूधरजी?"—मुंशीजी ने लड़के से पूछा।

"आपका शुभ नाम ? वह कुछ ज़रूरी काम में व्यस्त हैं। मैं उन्हें ख़बर दे आऊँगा।"

"मैं हूँ मुंशी।"

दौड़ता हुआ भूधर बाहर चला आया। उसने बड़े तपाक से मुंशीजी का हाथ पकड़ लिया—"आइए, पधारिए मुंशीजी, मैं न-जाने आज कितनी बार आपको याद कर चुका हूँ। और, मुझे पक्का विश्वास था, आज आप आवेंगे ही।"

"हम लोग आज दिन-भर ऐसी ही अजीब समस्या में फँसे रह गए।"—मुंशीजी भूधर के साथ भीतरी कमरे में गए।

मुंशीजी ने उस कमरे का भी काया-कल्प देखा। मशीन पर दूर ही से दृष्टि गई। परिपूर्णता उसके भीतर बोल रही थी, और उसे किसी साक्षी की जरूरत न थी। मशीन के निकट जाकर देखा, फर्श पर हज़ारों सुंदर और सुडौल बीड़ियों का ढेर लगा हुआ था। मुंशीजी के आनंद का ठिकाना न रहा। फ़ैक्टरी के भीतर बीड़ी लपेटनेवालों की धमकी से उनके दिमाग़ में जो आँधी चल रही थी, वह इस मशीन की उगली हुई बीड़ियों के ढेर को देखकर शांत हो चली। वह अपना आवेश न रोक सके। वह चिल्लाए—"भूधरजी, क्या बीड़ी की मशीन बन गई ?"

"हाँ, आपकी दया से, आपके अनुग्रह से।"—भूधर ने फिर हाथ जोड़कर कहा।

"बधाई है आपको। और धन्यवाद उस भगवान का है.

जिसने आपके परिश्रम को सफल किया।" मुंशीजी ने दो-चार बीड़ियाँ उठाकर उनकी जाँच करते हुए कहा—"कोई कसर नहीं दिखाई देती इनमें।"

"जो कुछ है भी, वह बहुत जल्दी ठीक हो जायगी।"

मुंशीजी ने कुछ विचारकर कहा—"भूधरजी, बड़े मौक़े से आपकी यह मशीन बनी है। न समय से पहले न समय के बाद। भगवान् का बड़ा विचित्र विधान है, और मनुष्य ने अपने अज्ञान से इसका नाम रख दिया है—संयोग। एक-एक पत्ता भी प्रभु के इशारे पर पनपता और झरता है।"

भूधर की समझ में मुंशीजी का यह दर्शन नहीं आया। वह बड़ी गंभीरता से उनके मुख को देखने लगा।

मुंशीजी ने भूधर के कंधे पर हाथ रखकर धीरे-धीरे कहा—"सेठजी को बड़ी सख्त जरूरत पड़ी है आज इस मशीन की। उनको बुलाकर इसे दिखाइए तो सही, वह ख़ुशी से उछल पड़ेंगे।"

"क्यों, क्यों, ऐसी क्या बात है?"

"सेठजी संकट में पड़ गए!"

"कैसा संकट?"—उतनी ही धीरता और गंभीरता से भूधर ने मुंशीजी का हाथ पकड़कर पूछा।

"अभी यह खबर फैक्टरी से बाहर नहीं फैलाई गई है। बद-नामी की बात है। आप तो अपने ही आदमी हैं, और फिर भगवान् ने बड़ी अद्भुत रीति से इस घटना के साथ आपका रिश्ता जोड़ा है।"

कुछ पुलकित और कुछ आकुल होकर भूधर ने पूछा—"आखिर बात तो बताइए।"

बाहर के कमरे में बैठे हुए लड़के पर नजर डालकर मुंशीजी ने भूधर को कोने की ओट में ले जाकर कहा—"हड़ताल हो गई फैक्टरी में। लड़के और लड़कियों के विभाग ने आज से बीड़ी लपेटने से इनकार कर दिया। इसी से तो मैं कह रहा हूँ, आपकी यह ईजाद कैसे ठीक समय पर हुई।"

"क्यों, हड़ताल क्यों कर दी? काम के घंटे कम कराने की माँग है, या तनख्वाह बढ़ाने की?"

"दोनो मे से कुछ नही।"

"फिर क्या बात है? मैंने तो सुना था, सेठजी उन भिखारियों के लड़के-लड़कियों को बड़े यत्न और आदर से रखते हैं। उनके लिये अच्छे भोजन और निवास का ही इंतजाम नहीं, वहाँ उनके पढ़ाई-लिखाई, खेल और मनोरंजन का भी प्रबंध है। यह झूठ है क्या?"

"नहीं, यह तो एक एक अक्षर ठीक है।"—मुंशीजी कुछ और कहना चाहते थे।

पर भूधर बीच ही मे बोल उठा—"मनुष्य को किसी तरह संतोष नहीं, वह अपनी पुरानी हीनावस्था को जल्दी ही भूल जाता है, नए सुख से शीघ्र ही ऊबकर, और ऊंचे भवनों के लिये छटपटाने लगता है। लालच मनुष्य का सबसे बड़ा वैरी है। इस बात को अच्छी तरह समझकर इस पर व्यवहार करनेवाला

ही एकमात्र सुखी है। फिर हड़ताल का कारण क्या बताते हैं वे ?"

"वे आपस में सामाजिकता चाहते हैं।"

"तो क्या सेठजी ने उन्हें द्विज और अद्विजों में बाँट दिया ? रंग देखकर उनके दर्जे बनाए या माता-पिता का पता लगाकर ? वे दरिद्रता की अभिशप्त संतान, मैं तो उनके बीच में ऊँच-नीच के लिये कोई भी पैमाना नहीं देखता था।"

"आपको शायद यह मालूम नहीं है। हमारी फैक्टरी में इन लड़के और लड़कियों के अलग-अलग विभाग हैं, और एक विभाग का दूसरे विभाग से कोई संबंध नहीं है। कोई लड़का किसी लड़की से हँसना-बोलना तो क्या, उसको देख भी नहीं सकता। वे अपनी इसी सामाजिकता के लिये हड़ताल कर रहे हैं।"

"ओ हो ! मैं समझा। यह संघर्ष पैसे और समय के लिये नहीं है, यह तो उनसे भी ज़बर्दस्त चीज़—यह स्वभाव की बग़ावत है, मुंशीजी, इसे कौन रोक सकता है ?"—भूधर की आँखों के आगे चंपा की सूरत दिखाई दी।

मुंशीजी कहने लगे—"फैक्टरी में निश्चित होकर समय पर भोजन मिलने से वे कुछ ही दिन में अपनी आयु से बड़े दिखाई देने लगे।"

भूधर बोला—"मैं समझता हूँ, अगर सेठजी दोनों दलों को अलग-अलग इस तरह हवा-बंद कमरों में न बाँट देते, तो यह आग इतनी जल्दी न फैलती।"

'सेठजी को मैं पहले कुछ और समझता था, इधर मेरी सारी धारणा बदल गई। मैं उनको एक असाधारण व्यक्ति मानता हूँ।"

"उन छोकरे-छोकरियों की हड़ताल से आज वह बहुत उद्विग्न हैं। जिनको दरिद्रता के कूड़े से उठाकर सजाया सँभाला, आज वे ही सेठजी की पगड़ी उछालने को आमादा हैं। इतना दुखी और उदास मैंने उन्हें कभी नहीं पाया था। आपकी मशीन को देखकर उनका सारा दुख चला जायगा, और उनको पाकर आपका सुख-सौभाग्य लौट आवेगा। सेठजी बहुत उदार हैं। उनकी समझ में आने की बात है। आ गई, तो फिर वह हजारों और लाखों के सौदे सेकिंडों और मिनटों में कर देते हैं।"

भूधर मन-ही मन उस मशीन के सूत्रपात की लहरों में डूबता- उतरा रहा था।

मुंशीजी कहते जा रहे थे—"मैं खुद जाकर उनसे इस मशीन की बात कह देता, लेकिन तुम्हारे अपने मुँह से कहने से एक दूसरी ही शकल बनेगी। समय की बचत होगी, दोनों का काम बन जायगा। लोहा गरमागरम ही पीटा जाता है—भूधर-जी, इसी समय लोहा गरम है, अभी जाइए।"

"अच्छी बात है, अभी जाता हूँ।"—भूधर ने निश्चय के साथ कहा।

मुंशीजी के बिदा होने पर भूधर ने उस मशीन के कमरे को बंद कर उसमें ताला लगाया, और उस नए नियुक्त किए हुए

लड़के से कहा—"मैं सेठजी के यहाँ जा रहा हूँ। तुम खबरदारी से चौकसी पर रहना।"

भूधर सेठजी को खोजते हुए जा पहुँचा। वह अपनी बैठक में एक कुरसी पर बैठे हुए गहरी चिंता में डूबे हुए थे। भूधर के प्रवेश पर उन्होंने उसे बैठने के लिये कुरसी दी।

लेकिन भूधर खड़ा ही रह गया। दोनो हाथ जोड़कर बोला—"श्रीमन्, मैं आपका तुच्छ सेवक हूँ। मुझे क्षमा कीजिए।"

सेठजी ने उठकर भूधर के कंधे पर हाथ रक्खा—"तुमने क्या बिगाड़ा है मेरा? मैं तो तुम्हे एक मेहनती और ईमानदार मनुष्य समझता हूँ।"

"आप अगर मेरा उपकार न करते, तो शायद मैं बरबाद हो गया होता।"

"मैंने कैसा उपकार किया तुम्हारा? शायद साल-भर से मैंने कभी तुम्हें देखा भी नहीं, बातें करनी तो एक तरफ।"

"आपने दो बार मदद कर मेरी नाव डूबने से बचाई है।"

"मुझे तो कुछ याद नहीं, तुम कैसे कहते हो?"

"सच्चाई जितनी छिपाई जाती है, उतनी ही वह प्रकट होती जाती है।"

सेठजी मुस्किराने लगे।

भूधर बोला—"मैंने सुना है, आपके यहाँ बीड़ी लपेटनेवालों ने हड़ताल कर दी है। आप बड़ी आसानी से उनका सामना कर सकते हैं।"

"हूँ! सामना कैसा? कोई लड़ाई थोड़े हो रही है। वे मेरे बच्चे हैं। उनकी नासमझी पर मुझे सिर्फ मुस्किरा देना होगा।"

"आपके मुस्किरा देने पर भी अगर उन्हें शरम न आई, तो हलके हाथों से उनके कान तो गरम किए जा सकते हैं।"

सेठजी हँसने लगे—"हाँ, मैंने सुना तो है, तुम एक बीड़ी लपेटने की मशीन बना रहे हो। सच्ची लगन से मनुष्य क्या नहीं कर सकता। अब वह ठीक-ठीक काम करने लग गई?"

"आपके आशीर्वाद से।"

"वादों में नहीं, मैं मनुष्य के कर्मों का विश्वासी हूँ।" सेठजी उठ खड़े हो गए—"चलो, मैं देखूँगा तुम्हारी मशीन को, अभी इसी समय।"

भूधर ने उन्हें आगे चलने के लिये मार्ग दिया। सेठजी भूधर के यहाँ जा पहुँचे। मशीन को देखते ही उनकी आँखों में रोशनी चमकने लगी।

जब भूधर ने मशीन चलानी आरंभ की, तो सेठजी बीड़ियों के धारा-प्रवाह को देखकर आनंद से गद्गद हो गए। उन्होंने भूधर की पीठ ठोकते हुए कहा—"शाबाश, भूधरजी, मैं जानता था, तुम एक दिन जरूर अपने काम में सफल होगे, मनुष्य से अधिक परिचय न होने पर भी सिर्फ उसके मुख के भावों से ही उसका इतिहास जाना जा सकता है।" सहसा कुछ विचार आते ही उन्होंने अपवाद को प्रकट किया—"लेकिन उन बीड़ी लपेटने-

वालों को लौटने में शायद मुझसे कुछ भूल हो गई ! भूल मेरी ! तुम उनके कान गरम करने को कहते हो ?"

भूधर मशीन घुमाता हुआ बोला—"आपकी कोई भूल नहीं हो सकती।"

सेठजी कहने लगे—"अब तुम्हारे कष्ट के दिन बिदा हो गए। भूधरजी, मैं तुम्हारी मशीन के तमाम अधिकार ख़रीद लेने को तैयार हूँ।'

"मै आपका सेवक हूँ सेठजी।"

"केवल शिष्टाचार से पेट नही भरता। बहुत बढ़िया न हो, पूरा-पूरा खाने-पहनने को तो चाहिए ही मनुष्य को। संकोच छोड़कर कहो, क्या मूल्य लोगे ?"

"इस मशीन के निर्माण में मेरी कुछ मजदूरी हो सकती है, पर जो आरंभ मे सूक्ष्म विचार की चिनगारी थी, वह मुझे आप ही से मिली।"

"कहाँ ? कब ?" सेठजी ने कुछ याद करते हुए कहा—"नहीं तो।"

"और, अगर आपकी आर्थिक सहायता न मिलती, तो इन लोहे के पुरज़ों में कोई जान न पड़ती।"

"लेकिन तुमने इस मशीन के लिये बहुत बड़ा त्याग किया है। मुझे उसका अंदाज़ है। मैंने तुम्हारी फलती-फूलती घड़ी-साजी की दूकान देखी है, और तुम्हे इस दूकान के भीतर एक क़ैदी की हालत में भी देखा है। सोचकर इसके दाम बताना मुझे। मैं भी अपने सहकारियों से पूछ-ताँछ करूँगा।"

भूधर ने कोई उत्तर नहीं दिया।

सेठजी फिर बोले—"एक मूल्य तुम्हें इस मशीन के पेटेंट अधिकार के लिये दिया जायगा। उसके बाद मैं तुम्हें और भी ऐसी कई मशीनें बनाने का ऑर्डर दूँगा। प्रत्येक मशीन के लिये अलग मूल्य दिया जायगा।"

भूधर ने मन-ही-मन प्रसन्न होकर, सेठजी के प्रति हाथ जोड़कर अपनी कृतज्ञता दिखाई।

सेठजी चल दिए। हड़ताल के भविष्य ने जो उदासी उनके तन-मन में बिछा दी थी, वह बिलकुल तिरोहित हो गई। वह स्थिर और विश्वास-भरे डगों से अपनी फैक्टरी को लौट गए। भूधर बहुत दूर तक उन्हें पहुँचाने गया।

सेठजी ने उसे लौटाते हुए कहा—"भूधरजी, तुमको जितना धन चाहिए, मैं मुंशीजी से कह देता हूँ, वह फैक्टरी के खजांची से अभी दिला देंगे।"

"आपकी कृपा है। अभी मुझे कुछ नहीं चाहिए।"

"मैं मुंशीजी को इस आशय की आज्ञा दे दूँगा। जब जितनी जरूरत हो, उनसे ले लेना।"

चिंताओं से मुक्त-भार होकर फिर सेठजी अपनी बैठक में लौट आए। उन्होंने विशाल दर्पण में अपनी प्रतिच्छाया देखी। वह मुस्किराए, बड़ी हलकी रेखाओं में। मन में सोचने लगे—"मैंने भूधर के ऊपर जो दया की, वह इतने शीघ्र मेरे काम आ जायगी, इसकी कल्पना न थी मुझे। अब कितने घंटे

ठहर सकेगी यह हड़ताल ? परोपकार कभी खाली नहीं जाता।"

सेठजी ने बिजली की घंटी का बटन दबाया। तुरंत ही एक सेवक ने आकर आज्ञा माँगी।

"जाकर दोनो विभागो के निरीक्षकों को बुला लाओ।"

कुछ ही देर मे मेघदूत और सौदामिनी, दोनो एक साथ सेठजी की बैठक मे हाजिर हो गए। इससे पहले कभी सेठजी उन्हे अपनी बैठक मे नहीं बुलाते थे। कभी बुलाया भी था, तो एक साथ नहीं। आज दोनो के मन मे इस रूढ़ि के टूट जाने पर अवश्य ही भारी कौतूहल था।

सेठजी ने दोनो से पूछा—"क्या समाचार हैं ?"

दोनो का एक-सा उत्तर था—"दोनो दल वैसे ही मुँह फुलाए बैठे हैं।"

"कब तक बैठे रहेंगे ?"—सेठजी ने पूछा।

मेघदूत बोला—"जब तक आप कोई आज्ञा न दें।"

"कहो, तो मैं अपने सिद्धांत तोड़ दूँ, तब ?"

मेघदूत ने घबराकर जवाब दिया—"नहीं, यह आशय नहीं है मेरा। खाना खाने के लिये दोनो विभाग तैयार हैं, पर काम करने को नहीं। यह सर्वथा एक अविचार है। काम न करने-वालों को भोजन का कोई अधिकार नहीं।"

"नहीं, नहीं—उन्हें हमने आश्रय दिया है। उन्हें भूखा मार देना बड़ा भारी पाप होगा।"

सौदामिनी ने तेजस्विता से कहा—"फिर उन्हें अपने-अपने घर चले जाने को कह दीजिए।"

"ओ हो हा! सौदामिनीजी! कहाँ है उनका घर? अगर कहीं होता, तो यहाँ क्यों बनाता? यही है उनका घर—क्या कह दिया जाय फिर उनसे?"—सेठजी ने सकरुण कंठ से कहा।

दोनों चुपचाप रह गए।

इसके बाद सेठजी ने उन दोनों से भूधर घड़ीसाज़ के यहाँ उस बीड़ी की मशीन को देखकर अपने-अपने विभाग में उसका समाचार फैला देने को कहा। दोनों जाकर बीड़ी की मशीन देख आए।

लौटते हुए मेघदूत ने सौदामिनी से कहा—"भगवान् की माया बड़ी विचित्र है। वह बीमारी पैदा करता है एक ओर, और दूसरी तरफ उसकी दवा भी उपजा देता है।"

सौदामिनी हँसकर बोली—"अब देखना है उन हड़तालियों का सारा जोश!"

सौदामिनी जाकर अपने विभाग में पहुँची। संध्या का समय था। घंटे बदस्तूर बज रहे थे। पाँच बजे काम समाप्त होने का घंटा बजा। लड़कियाँ चाय पीने पहुँच गईं।

सौदामिनी ने कहा—"क्यों, क्या विचार है? खेल से तो हड़ताल नहीं है?"

चंपा बोली—"क्यों होने लगी?"

"और देवी-मंदिर की आरती से?"

"उससे भी नहीं।"

अचानक सौदामिनी बोली—"पड़ोस में भूधर घड़ीसाज ने एक बीड़ी की मशीन बनाई है।"

चंपा ने आँखें तरेरकर पूछा—"कैसी मशीन ?"

"एक तरफ से उसमें पत्ते, तंबाकू और डोरा रख दिया जाता है, पहिया घुमाते ही दूसरी तरफ से बीड़ियाँ बनकर निकल आती हैं। मैं देख आई हूँ। एक मिनट में एक सौ बीड़ियाँ। कोई बड़ी न छोटी, एक सार।"

तमाम लड़कियों को जैसे काठ मार गया! वे उस मशीन से एक घंटे में बनी बीड़ियों का हिसाब लगाने लगीं।

चंपा ने घबराकर पूछा—"छः लड़कियों के बराबर वह मशीन अकेली काम कर लेगी ?"

"बिजली से चलने पर सोलह लड़कियों के बराबर।" सौदामिनी ने कहा।

चंपा ने पैर पटककर कहा—"झूठी बात।"

"तुमसे झूठ बोलने की जरूरत क्या है ?"

"हाथ का काम मशीन से ज्यादा पवित्र है।"

"हाथ से बीड़ी लपेटनेवाले कभी-कभी तागे को जूठा कर देते हैं।"—सौदामिनी ने कहा।

तमाम लड़कियाँ सन्न रह गईं। चंपा को भूधर घड़ीसाज की याद आई, जब वह उसकी नौकरी छोड़कर 'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' में चली गई थी।

सौदामिनी फिर बोली—"पढ़े-लिखे और श्री-संपन्न लोगों के बीच में बीड़ी के प्रचार में यही एक बाधा है कि वह हाथ से बनाई जाती है, और उसके बनानेवाले स्वास्थ्यकर बातों की परवा नहीं करते। बीड़ियाँ जब मशीन में तैयार होने लगेंगी, तो वे अपने व्यापार का बहुत बड़ा विस्तार बना लेंगी।"

चंपा ने धड़कते हुए दिल से कहा—"वह एक घड़ीसाज़, उसे बीड़ियों से क्या मतलब?"

"सब बात जो थी, कह दी मैंने। सेठजी उस मशीन के तमाम अधिकारों को खरीदने की बात चला रहे हैं। मुझे तुम्हारी भलाई का खयाल है, इसी से तुम्हें बता दिया। बाकी तुम्हारी इच्छा।"—सौदामिनी यह कहकर वहाँ से चल दी।

सब-की-सब हड़ताल करनेवाली एक क्षण के लिये विमूढ़ होकर रह गई। किसी के मुँह से एक शब्द भी न निकला। उन्हें ऐसा जान पड़ा, मानो वह मशीन का राक्षस उनकी हड़ताल की धमकी को ही नहीं, नख-शिख पर्यंत साक्षात् उनका भी सर्वग्रास कर जायगा।

चंपा कुछ साहस इकट्ठा कर बोली—"कुछ भी हो, यह सब हमें डराने के लिये ही किया जा रहा है। और, हम अपनी कमज़ोरी से ही इस जेल के भीतर क़ैद हैं। वह एक खयाली डर है, जिसने हमें यहाँ बाँध रक्खा है। जब हमने एक बार सोच लिया, हम चिड़ियों की भाँति आज़ाद हैं, तो कौन हमें इस नीले आसमान में उड़ने से रोक सकता है? ये दरवाज़े किसी के हों, इन्हें

बंद करनेवाली जंजीरें हमारी ही हैं। हम अपनी ही कोशिश से उन्हें खोलकर जा सकती है, जहाँ चाहे। सारी दुनिया न सेठों की है, न राजाओं की—वह भगवान् की है। इसलिये साहस करो—कल सुबह होते ही हम इस जेलखाने को तोड़ देंगी।"

"तोड़कर कहाँ जायँगी ?"—कुछ लड़कियों ने घबराकर पूछा।

चंपा बोली—"बाहर की दुनिया में अपने अधिकारों का प्रचार करेंगी, फिर यहीं लौट आवेंगी।"

"हमारी जगह पर यहाँ बीड़ी की मशीन आ गई, तो ?"

"बीड़ी की मशीन क्या, हम मशीनगन से भी नहीं डरेंगी। अगर हमें यहाँ नहीं आने दिया गया, तो हमारे लिये फुटपाथ तो है—हमारी जन्मभूमि ! जहाँ से हम यहाँ आईं, वहाँ कौन रोक सकता है ?" चंपा ने कहा।

[बीस]

वसंत को सिगरेट छोड़े छ महीने हो गए। उसने बड़ी वीरता से अपनी प्रतिज्ञा को निभाया। आरंभ के कुछ दिन उसने अवश्य बड़ी कठिनता से बिताए, पर पंडित गजानन की अभिभावुकता और डॉक्टर जोश के बताए हुए उपायों से उसने सफलता-पूर्वक शत्रु को पछाड़कर रख दिया।

लेकिन गजाननजी ने उसके संतोष को नहीं जमने दिया। उस दिन फिर उन्होंने उससे आकर कहा—"वसंत, सिगरेट छोड़ने-वाले को कभी चैन से बैठना न होगा। जब तक मेरे मुहल्ले से इसका धुआँ आता रहेगा, जब तक मेरी गलियों के कूड़े में मुझे बीड़ी सिगरेट के टुकड़े दिखाई देंगे, तब तक मुझे शांति नहीं। और, मैं समझता हूँ, तब तक तुम्हारे भी कर्तव्य की पूर्ति नहीं होती, जब तक तुम्हारे घर के भीतर तुम्हारे पिताजी के मुख से गुड़गुड़ी नहीं छूटती।"

"उसकी आवाज़ तो मैंने बंद करा दी है, आपको मालूम ही है।"—वसंत ने विजय की मुद्रा के साथ कहा।

"लेकिन जहर तो धुएँ में है वसंत, और वह धुआँ बराबर तुम्हारे कमरे मे आता होगा। वह इच्छा के विरुद्ध भी तुम्हार साँस में मिलकर तुम्हारी प्रतिज्ञा पर चोट पहुँचाता रहता है।"—गजानन बोले।

"क्या करूँ फिर ? कोई उपाय बताइए।"

"नारे लगाने छोड़ दिए क्या तुमने आजकल ?"

"वह दरवाजे बंद कर लेते है, और यह कहना शुरू करते हैं कि मेरा दिमाग़ ख़राब हो गया।"

"झूठी बात! 'जहर की पत्ती' के आठवे पेज मे लिखा है—तंबाकू के सेवन से दिमाग़ की ग्राहिका शक्ति चुला जाती है, स्मरण-शक्ति का ह्रास हो जाता है, तर्कणा दुर्बल पड़ जाती है, लिखने-पढ़ने और बोलने की धारा टूट जाती है, निद्रा का नाश हो जाता है, सिर मे चक्कर आने लगते हैं—धीरे धीरे आदमी पागल—"

"यह तो सब मुझे याद है।"

"तुमने उनके सामने नहीं दुहराया इसे ?"

"दुहराया क्यो नहीं ? उन्होने उत्तर दिया कि ये बात बालको के लिये ठीक है। मेरे-जैसे अधेड़ पर तो इसका तुम्हारे इस लेख से बिलकुल उलटा असर पड़ता है। मैं जब तंबाकू पीता हूँ, तो मेरे दिमाग़ की तमाम ताकतें खुल जाती है। सब भूली हुई दफाएँ आँखो के आगे नाचने लगती है, तर्क मे धार चढ़ जाती है—विरोध का मुँहतोड़ जवाब अपने आप मुँह से निकलता है, पढ़ने-लिखने-बोलने का एक अटूट क्रम बँध जाता है।"

गजानन कहने लगे—"सरासर झूठी बात! तुम्हारे पिताजी पर यह तबाकू की राक्षसी बहुत बुरी तरह से छाई हुई है, वसंत।

उनका उद्धार नहीं होगा, तो यह हमारे लिये बड़ी शरम की बात होगी। तुम्हीं यह बात कर सकते हो।"

"कैसे हो फिर पंडितजी?"

"सब कुछ 'ज़हर की पत्ती' में दिया हुआ है। जान पड़ता है, तुमने आजकल उसका पाठ करना छोड़ दिया। स्कूल की किताबें इम्तहान पास करने के लिये हैं—मैं तुमसे उनकी उपेक्षा करने को नहीं कहता, लेकिन मनुष्य के चरित्र का निर्माण उसकी सबसे बड़ी पूँजी है। चरित्र के चार पायों में संयम का पाया प्रमुख है। तम्बाकू पीनेवाला कदापि संयमी नहीं कहा जा सकता। पिताजी को अगर तुम संयमी न बना सके, तो उनके ऋण से उऋण कैसे होओगे? और, डॉक्टर जोश का ऋण, उसका सूद भी तो तुम्हारे सिर पर चढ़ता जा रहा है।"—गजानन ने एक साँस में कह डाला।

"अच्छी बात है, मैं फिर कोशिश करूँगा।"—वसंत कमर कसने लगा।

"परिशिष्ट (ख), उसमें सब कुछ दिया हुआ है। उसके नारों की शक्ति से जिस प्रकार तुमने दिव्य जीवन पाया, वही अगर पिताजी के लिये भी प्राप्त करा सके, तो सारे शहर में लोग तुम्हारे यश का वर्णन करना एक तरफ़, वे उसे गाने लगेंगे, वसंत।"

"अच्छी बात है, मैं फिर नारे लगाऊँगा।"

"अगर नारे असफल होते हैं, तो धरना दो। दृढ़ इच्छा-शक्ति-

वाला क्या नहीं कर सकता ? वह चाहे, तो धरती और आकाश, दोनो के सिरे आपस मे मिला सकता है। जिसने सिगरेट छोड़ दो, उसे इच्छा-शक्ति की कमी क्या है ?"

"अच्छी बात है, धरना दूँगा।"

गजाननजी वसत की पीठ ठोककर चल दिए।

दूसरे दिन सुबह होते ही वसत पिताजी के कमरे मे जा पहुँचा। वह उस समय बाएँ हाथ से मुँह मे हुक्के की नली दिए दाहने हाथ से कुछ लिख रहे थे। धारा प्रवाह छूटा हुआ था कि वसत नारा लगाता हुआ आ पहुँचा—"मैंने सिगरेट छोड़ दी, अब मैं पिताजी की तबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा। मैंने सिगरेट छोड़ दी—"

"फिर वही पागलपन जाग उठा तुम्हारे। चुप रहो, मैं बहुत जरूरी काम कर रहा हूँ।"—पिता ने तीखी आँखो से उसे देखकर कहा।

"मेरा भी उतना ही जरूरी काम है, पिताजी। आप अपना जरूरी काम करते रहें, मै अपना।" उसने फिर अपना स्थायी शुरू किया—"अब मैं पिताजी की तबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा।"

"मैंने कह दिया, इस समय जाओ तुम। मुझे एक बहुत जरूरी अपील लिखनी है। मेरा ध्यान मत बँटाओ। इसमे एक निर्दोष मनुष्य के जीवन-मरण का प्रश्न है।"—वकील साहब ने कुछ नरमी के साथ कहा।

"मेरी यह अपील भी बहुत पुरानी है, पिताजी। मुझे भी तो

डॉक्टर जोश का ऋण चुकाना है। मैं भी आज इसे अपने जीवन-मरण का प्रश्न बनाकर लाया हूँ।" फिर वसन्त का नारा शुरू हुआ—"अब मैं पिताजी की तंबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा।"

"देखो, तुम इतने नादान नहीं हो, यह परोपकार के सिवा हमारी रोटी का भी प्रश्न है। मेरी तबाकू तुम्हें क्या हानि पहुँचाती है? जाओ, सीधे अपने कमरे में, स्कूल के पाठ याद करो। तुमने गुड़गुड़ की आवाज़ बंद कर देने को कहा, सुनते नहीं, वह बंद कर दी गई।"—रामधन ने धुआँ खींच, प्रयोग कर दिखाया।

वसंत बोला—"आवाज़ से क्या होता है, पिताजी?"

रामधन ने कहा—"तब तुम कहते थे, ध्वनि ही तमाम भौतिकता का मूल आधार है। जाओ, मैं कहता हूँ, तुरंत चले जाओ। हर महीने अपने आदर्श को बदलनेवाला उन्नति नहीं कर सकता।"

वसंत कहने लगा—"यह योग का तत्त्व है। अकेले योग से कुछ न होगा, हमें साइंस की भी तुक मिलानी है। यह जो बिना आवाज का धुआँ आप निकाल रहे हैं, यह दरवाजा बंद कर देने पर भी मेरे कमरे में हवा के साथ घुस आता है, और इसकी जहरीली गंध मुझे बेचैन कर देती है। तंबाकू के ये छोटे छोटे अणु क्या मेरी प्रतिज्ञा निरंतर नहीं तोड़ रहे हैं। इसलिये अब मैं पिताजी की तंबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा।"

रामधन के क्रोध चढ़ गया। हुक्क़े की नली छोड़ वह

उठ गए। उन्होंने कोने से बेंत उठा लिया—"बुद्धि से काम न लेनेवाले मूर्ख की डंडे के सिवा दूसरी कोई औषधि ही नहीं है। अब भी अगर तुम अपनी अक्ल का उपयोग नहीं करते, तो मुझे तुम्हें हाँक देना पड़ेगा।"

"मैं अपने निश्चय पर दृढ़ हूँ। मैं पिताजी की तंबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा।"—वसंत ने स्थिरता से कहा।

रामधन ने उसके पैरों में एक बेंत जड़ दिया। वसंत ने उसे सहन कर लिया। कोलाहल सुनकर वसंत की बुआ चली आई। वकील साहब के क्रोध के समय और किसी का साहस उनके समीप आने का नहीं होता था। वसंत की बुआ विधवा थी। माता की मृत्यु के बाद उस बालक का लालन-पालन उन्हीं ने किया था। वसंत पर उनका प्रगाढ़ स्नेह था।

बुआ ने वकील साहब के हाथ का बेंत पकड़ लिया—"मैं कहती हूँ, तुम्हें क्या हो गया? सिगरेट पीने पर भी तुमने वसंत को पीटा, और आज न पीने पर भी पीट रहे हो।"

"वह मेरी तंबाकू छुड़ानेवाला कौन होता है?"

"तंबाकू जब बुरी चीज़ है, तो सभी के लिये है। इसमें बेंत चला देने की क्या बात है? लोग क्या कहेंगे? तुम इतने बड़े वकील—तुमलोगों के लिये इंसाफ़ करते हो, अपने घर के भीतर तुम्हारा ऐसा अंधेर!"—बुआ ने वसंत की मदद करते हुए आँखों में आँसू भरकर कहा।

वकील साहब गंभीर होकर सोचने लगे। उन्होंने देखा, चोट

खाकर भी वसंत अपने निश्चय पर अडिग था। उसकी आँखों में आँसू की जगह एक प्रकाश था, और उसके अधरों पर थी रुदन के बदले अक्षुण्ण आशा!

वह कहता जा रहा था—"पिताजी, आप मारिए, पीटिए, चाहे जो कुछ कीजिए, आप समर्थ हैं। लेकिन मैं धरना देने की दृढ़ता को लेकर आज आपके पास आया हूँ। मैं आपकी तंबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा।"

वसंत को बुआ ने अपने आभूषण-विहीन, अशक्त हाथों के कवच से घेर लिया। बड़े-बड़े आँसू उनकी आँखों से निकलकर धरती पर गिरने लगे। वह बोलीं—"आज अगर वसंत की मा जीवित होती, तो भैया, शायद तुम इस तरह इसे न डाँट सकते।"

रामधन को स्वर्गीया स्त्री की याद आ गई। वसंत को जन्म देकर दो ही तीन दिन बाद वह चल बसी थी। रामधन को उसकी मृत्यु की भारी चोट थी। स्मृति-पटल पर उस घटना के ऊपर रोटी के लिये किए जानेवाले श्रम का औचित्य और अनौचित्य, जिम्मेवारियों की पूर्णता और अपूर्णता तथा जीवन की हार-जीत, आशा-निराशा आदि ने जमा होकर उसे धूसर, धूमिल और फिर कुछ ही वर्षों में बिलकुल ही विलुप्त कर दिया था। पंद्रह-सोलह साल बीत गए उस घटना को। रामधन बाबू ने फिर विवाह न करने का निश्चय किया था, उसे निभाया। चाहते, तो कर सकते थे।

रामधन बाबू का सारा क्रोध स्वर्गवासिनी पत्नी की स्मृति से उतर गया। बड़ी करुणा-भरी दृष्टि से वह उस मातृहीन पुत्र को देखने लगे।

वह अपने नारे और निश्चय मे पश्चात्पद नही था। बुआ के हाथ हटाकर फिर उसने पिता की ओर हाथ जोड़कर कहा—"मैं आपकी तबाकू छुड़ाकर ही यहाँ से जाऊँगा।"

वह मन मे सोचने लगे, माता के सुख से जीवन-भर वंचित यह वसंत—सिगरेट पीने के लिये मैंने इसे पीटा, आज जब यह उसे छोड़कर मेरी तबाकू भी छुड़ा देना चाहता है, तो फिर इसे पीटना सरासर घोर अमानवता है, अन्याय है—अत्याचार है।

भाई की भावना मे सात्त्विकता का उदय देखकर बहन के आँसू बंद हो गए, लेकिन वसंत का नारा जारी था—"मैं पिताजी की तंबाकू छुड़ाकर ही रहूँगा"

रामधन बाबू बड़े मनोयोग से उसे सुनने लगे। उन शब्दों ने अब उन्हे उत्तेजित नहीं किया, वह अतीत के चित्रों मे खोए हुए से वसंत के मुख को एकटक देख रहे थे। सहसा उन्होंने उसके मुख पर पत्नी की अनुरूपता देखी। एक ही क्षण मे एक बिजली सी उनके मस्तिष्क मे संचारित हो उठी। थोड़ा कहा उसने, बहुत समझे वह उसे।

धीर मद्र स्वर मे उन्होने कहा—"वसंत!"

बड़ा स्नेह और माधुर्य था उनकी वाणी में। वसंत गद्गद होकर बोला—"हाँ, पिताजी!"

दोनों की बातों में स्नेह का उद्रेक पाकर सुना ने धीरज की साँस ली, और मन ही-मन भगवान् को प्रणाम किया।

पिता कुछ ठहरे, फिर कुछ सोचकर उन्होंने कहा—"वसंत, अच्छी बात है, मैं तंबाकू छोड़ दूँगा। लेकिन अभी नहीं।"

"भविष्य में कोई विशेष घड़ी उसके लिये आनेवाली नहीं है। जिस घड़ी आप प्रतिज्ञा कर लेंगे, वही हो जायगी। जब ऐसा है, तो फिर अभी क्यों नहीं ?"—वह उल्लास में भरकर इधर-उधर दौड़ने लगा—"मैं प्रतिज्ञा का फ़ॉर्म ले आता हूँ।"

"ठहरो। बालकपन न दिखाओ। मैं प्रतिज्ञा कर तोड़ देना बड़ा भारी पाप समझता हूँ। इसलिये तुम जल्दी मत करो। मैं विगत तीस साल से तंबाकू का शिकार, तुम इसी घड़ी कैसे उसे छोड़ देने को कहते हो। धीरे-धीरे वसंत, एक-एक सीढ़ी कर।"

"डॉक्टर जोश ने इस धैर्य को असंभव नाम दिया है। उनका कहना है, ऐसा कल कभी नहीं आता। एक बार मनोबल को दृढ़ कर संकल्प कीजिए, और इसे छोड़ दीजिए—यह छूट जायगी।"

"यह डॉक्टर जोश का कहना है। अगर उनका नाम डॉक्टर होश होता, तो वह विचारकर किए हुए काम की महत्ता को समझते।"

"पिताजी, मैंने एक ही दिन और एक ही क्षण में यह प्रतिज्ञा की थी।"

"तुम्हारी शारीरिकता में यह दुर्व्यसन ही कहाँ थी ? मुश्किल से

दो-चार हफ्ते तुमने इसका सेवन किया होगा कि तुम्हें पकड़ लिया गया।"

वसत ने उत्तर दिया—"लेकिन पंडित गजाननजी, वह तो आपकी तरह इसके जन्म-भर के आदी थे।"

"अभी उन्हे इसे छोड़े साल-भर भी तो नहीं हुआ।"

"साल-भर क्या छोटी अवधि है?"

"तुम अभी बालक हो, वसत। मेरे पास एक ऐसे मनुष्य का उदाहरण है, जिसने बीस साल तक सिगरेट पीकर अचानक छोड़ दी, एक दिन जोश मे आकर। उन्होने दस साल तक कभी उसकी सूरत भी नही देखी। अंत मे क्या हुआ? दस साल बाद एक दिन फिर उनकी चेतना मे सिगरेट की मोहनी जाग उठी, और वह फिर उसको पीने लगे—शृंखला-बद्ध पीने लगे। और शायद, सिगरेट ने दस साल के वियोग की जो कमी थी, वह सब वसूल कर ली।"

वसंत ने कुछ निराशा के स्वर मे पूछा—"फिर आप कैसे छोड़ेंगे इसे?"

"धीरे-धीरे कम करूँगा।"

"किस तरह?"

"तंबाकू पीने और न पीने के बीच में समय की रेखा खींचकर। धीरे-धीरे उस रेखा को बढ़ाता जाऊँगा, जब तक वह बिलकुल सिमटकर ग़ायब न हो जाय।"

आशा से उत्साहित होकर वसंत बोल उठा—'ठीक

है पिताजी, एक चिलम सुबह पीजिए, एक शाम।"

"नहीं, वसंत, दस बजे तक सुबह—चिलमें जितनी भी हों, फिर कचहरी से लौटकर पिऊँगा।"

"कचहरी से तो आप कभी-कभी बारह ही बजे आ जाते हैं। दस बजे तक आप सुबह पिएँगे, फिर रात के आठ बजे से सोने तक।"

"यह असंभव है। दस बजे तक सुबह और शाम को चार बजे से। यह छ घंटे की छूट क्या कम है? धीरे-धीरे यह बढ़ा दी जायगी।"

"प्रतिज्ञा की फिर आपने?"

"हाँ, वसत, क्योंकि पिता-पुत्र के बीच में किसी अविश्वास का उद्भव न हो, इसलिये इस प्रतिज्ञा का लेख में आना जरूरी नहीं।"—पिताजी ने कहा।

"लेकिन पिताजी," वसंत ने उनके हुक़्क़े की ओर शंकित दृष्टि से देखकर कहा—"दस बजे मैं इस हुक़्क़े को उठाकर, अपने कमरे में बंद कर स्कूल चला जाऊँगा, और चार बजे फिर यहीं रख जाऊँगा।"

"क्यों?"

"क्योंकि प्रोफेसर जोश ने लिखा है, मनुष्य का मन बड़ा दुर्बल है। कई बार तंबाकू पीने के इन उपकरणों ने, सामने रहने पर, बड़े-बड़े आदमियों की प्रतिज्ञाएँ तोड़कर रख दीं।"

रामधन बाबू हँसकर बोले—"जैसी तुम्हारी इच्छा। लेकिन

एक बात तो बताओ, यह डॉक्टर जोश प्रोफेसर कब से बन गए ?"

"प्रोफेसर थे पहले। अब प्रोफेसरी छोड़ दी मानवता के उपकार के लिये।"

"प्रोफेसर कहाँ थे ?"

"किसी विद्यालय में।"

"कौन-से ?"

"यह मुझे मालूम नहीं।"

"'ज़हर की पत्ती' में नहीं लिखा है ?"

"नहीं। अच्छा, पिताजी, मैं अब जाता हूँ। मुझे स्कूल की किताबें देखनी हैं, और आपको भी तो कचहरी का काम करना है। मैं दस बजे आकर यह हुक्का उठा ले जाऊँगा। लेकिन एक बात, आप दिन में कचहरी में सिगरेट तो न पिएँगे ?"

"तंबाकू तो हरगिज़ न पिऊँगा, दस से चार बजे दिन तक। रह गई सिगरेट, वह भी अपने मन से या ख़रीदकर न पिऊँगा। हाँ, कोई पीने को देगा, तो अपना अमल बुझाने के लिये नहीं, देनेवाले का मान रखने के लिये पीना ही पड़ेगा। लोगों में मैंने तंबाकू छोड़ दी, इसकी घोषणा करनी मुझे पसंद नहीं। दिखावे का करनी पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता।"

कुछ टूटे हुए दिल से वसंत ने कहा—"अच्छी बात है, पिताजी।"

वसंत वहाँ से अपने कमरे को चला। बुआ दोनों फ़रीक़ों

को राज़ीनामे की तरफ बढ़ता देखकर पहले ही चली गई थी।

वकील साहब ने फिर हुक्के की नली सँभाली। उसे निर्धूम पाकर उन्होंने घड़ी की ओर देखा—"अभी तो साढ़े सात ही बजे है। दस बजे से चार बजे तक।" फिर उन्होंने हुक्के के सिर की आँच पर हाथ रक्खा—"इस पर वसंत का अंकुश रहेगा।" उन्होंने नौकर को बुलाकर चिलम भर लाने की आज्ञा दी।

फिर उनका ध्यान अपील पर जा लगा। नौकर तबाकू भर लाया था, निःशब्द नली मुँह में थी, कलम हाथ में और आँखों द्वारा लिखित पंक्तियों के साथ अपनी भावना का जोड़ लगाने लगे। मन-ही-मन बहन को शत-शत धन्यवाद देने लगे, जिनके आ जाने से उनका उभड़ा हुआ क्रोध दब गया, और उनका मानसिक संतुलन भ्रष्ट नहीं हो पाया। वह सहज गति से फिर अपने लेख में नियुक्त हो गए।

ठीक दस बजे वसंत आया, फिर उसी कमरे में। वकील साहब कचहरी चल दिए थे। वसंत ने हुक्का उठाया, और अपने कमरे को ले चला। पिता के उस बंधन को उसने अपनी मेज़ के नीचे क़ैद कर दिया, और कमरे में ताला लगाकर स्कूल की राह ली।

[इक्कीस]

खेल के मैदान में उस दिन लड़कियों ने कोई खेल नहीं खेला, उनके मन में उस विद्रोह को चरम सीमा पर पहुँचाने की ही धुन समाई हुई थी। निरंतर उसी की चिंता में उनका समय बीत रहा था।

सेठजी के नियमों की ही जब उन्होंने उपेक्षा कर दी थी, तो निरीक्षिका का ही क्या भय था उन्हें। सौदामिनी अपनी इज्जत बचाने के लिये उनसे दूर ही दूर भाग रही थी। खेल के समय सेठजी ने दोनों निरीक्षकों को, किसी विशेष परामर्श के लिये, अपने पास बुला लिया था।

चंपा बोली—"मैं तो इस बीड़ी की मशीन को केवल एक हौआ समझती हूँ, उसकी कहानी हमें डराने के लिये यों ही गढ़ दी गई है। मेरा तो आखिरी फैसला यही है, कल सुबह होते ही दरवाजा खोल बाहर चल दें।"

"कहाँ?"—तुलसी ने पूछा।

"जनता में अपने ऊपर किए जानेवाले ज़ुल्मों का प्रचार कर, उसकी समवेदना अपनी तरफ करने के लिये।"

भगती बोली—"दरवाज़े पर चौकीदारिन है, और बाहर फाटक पर बंदूक़ लिए सिपाही।"

"वे केवल प्रदर्शन के लिये हैं। उनकी शक्ति तभी तक है, जब तक हम उनका भय करते हैं। जब हमने आज सेठजी के क़ायदों को तोड़ दिया, तो वे सेठजी के नौकर—उनकी क्या हस्ती है।"—चंपा ने कहा।

"एक बार फैक्टरी से बाहर जाने पर अगर फिर हमें फ़ैक्टरी के भीतर नहीं घुसने दिया गया, तो?"—बिजली ने अपना संशय प्रकट किया।

"कौन घुसने नहीं देगा? हँसी-खेल है क्या? हमारी तनख़्वाह यहाँ, सेठजी के पास, जमा है। बिना उसका पूरा पूरा हिसाब किए कोई नहीं रोक सकता हमें।"—चंपा ने गरज-कर मुट्ठी तानते हुए कहा।

सब लड़कियाँ उसकी इस दलील से प्रभावित हो चुप हो गई! चंपा का साहस बढ़ा, वह बोली—"मुझे सेठजी की दुर्बलता का पता है। उनको लोगों में अपनी बदनामी का बड़ा भारी भय रहता है। कल सुबह तुम देखना तो सही, जहाँ हमने 'जय हिंद-बीड़ी फ़ैक्टरी' के विरुद्ध दो चार नारे लगाए कि सेठजी मोटर लेकर आ पहुँचेंगे हमें मनाने को।"

"और अगर बीड़ी बनाने की मशीन एक हवाई नक़्शा नहीं, ठोस लोहे की कारीगरी निकली, तो?"—चुन्नी ने कहा।

इस बार चंपा सहम गई।

बिजली बोली—"कुछ देर के लिये मान लो, तो अपने बचाव

की सूरत पर विचार हो सकेगा। समझदारों को अँधेरे पक्ष का ज़रूर ध्यान रखना चाहिए।"

चंपा ने कुछ सोचकर जवाब दिया—"अच्छी बात है, तो फैक्टरी से बाहर होते ही हम पहला धावा उस घड़ीसाज़ के यहाँ ही बोल देंगी। अगर 'बीड़ी की मशीन' नाम की कोई चीज़ उसके यहाँ न निकली, तब तो ठीक ही हुआ।"

"वह दिखा क्यों देगा?"—भगती बोली।

"मुझे उसके यहाँ के रास्ते मालूम हैं। हम सीधे वहाँ घुस जायगी।"—चंपा ने जवाब दिया।

बिजली ने पूछा—"अगर मशीन उसके यहाँ निकल आई, तो?"

"तो हम उससे प्रार्थना करेंगी कि वह हम हाथ से काम करने-वाली मज़दूरिनों पर कृपा करे, हमारी रोटी के श्रम को नष्ट न करे।"—चंपा ने कहा।

"हमारी रोटी के लिये वह अपनी रोटी निछावर करने को तयार न हो, तो?"—तुलसी ने पूछा।

चंपा बोली—"उसकी रोटी का ज़रिया घड़ीसाज़ी है। अगर इस तरह वह अपना काम छोड़कर दूसरों के पेट में छुरा भोंकेगा, तो उसके हक़ मे अच्छा न होगा। हम सब मिलकर उसकी मशीन का एक-एक पुरज़ा तोड़कर ज़मीन मे गाड़ देंगी।"

भगती कहने लगी—"तुम सिर्फ़ जोश में आकर ही यह कह

रही हो, वास्तविकता से भेट होने पर यह बात ठंडी पड़ जायगी।"

"क्यों पड़ जायगी? लड़कों के विभाग ने हमारा साथ देने की क़सम नहीं खाई है क्या?"—चंपा बोली।

"अगर वे ठीक समय पर मुकर गए, तो?"—भगती ने फिर कहा।

"तुम सब गोबर और मिट्टी की बनी हुई हो, फौलाद की कोई भी हड्डी नहीं है तुम्हारे भीतर। इस प्रकार संशय और भय से मैदान नहीं मारे जाते। विजयी के मार्ग मे बाधाएँ होती ही हैं। वह बाधाओं की ही चिंता मे नहीं घुल जाता इस तरह। उसका एक दृढ़ निश्चय होता है, और वह उससे सभी आपदाओं को लाँघ जाता है।"—चंपा ने फिर सबके भीतर उत्साह पैदा कर दिया।

बिजली बोली—"उनका लीडर नौजवान, वह सहज ही मार खा जानेवाला नहीं है।"

चंपा ने कहा—"और मुझे उसकी प्रतिज्ञा का पूरा विश्वास है। असल मे यह सारी आग उसी की लगाई हुई है। उसी ने हमें हमारे कर्तव्यों की चेतना दी है। वह कभी हमे धोखा न देगा।"

अंत में सबने निश्चय किया, दूसरे दिन वे अपना जत्था बनाकर प्रचार के लिये फैक्टरी से बाहर निकल जायँगी। जो भी बाधा उनके सामने आवेगी, वे प्राण-पण से उसका सामना करेंगी।

खेल समाप्त होने पर देवी के मंदिर में आरती की घंटी बजी। पहले उन्होंने निश्चय किया, मंदिर मे पहुँचते ही सब-की-सब आँखों की पट्टियाँ खोल देंगी। लेकिन बाद को सबने यह सोचा, शायद सेठजी वहाँ समझौते की कोई सूरत निकालकर पधारनेवाले हों, तो उनके इस व्यवहार से बात बिगड़ जायगी।

चंपा बोली—"चलो, आज अंतिम बार अंधी बन जाने में कोई हानि नहीं। कल से दिन हमारे हाथ मे हो जायँगे।"

पर जैसी आशा की गई थी कि सेठजी देवी के मंदिर में आकर हड़तालियों से कुछ कहेंगे, वह पूरी न हुई। हड़तालिए जैसे अंधे होकर देवी के मंदिर मे गए थे, वैसे ही लौट आए। इससे बहुतों के दिल टूट गए!

दोनो विभागों के नायकों ने भोजन और मनोरंजन के घंटों में फिर अपने दृढ़ निश्चय की ही रट लगा दी। मेघदूत और सौदामिनी, दोनों इन घंटो मे अनुपस्थित थे। वे नित्य विभागों के ही रसोई-घरों मे भोजन करते थे। आज नहीं आए। चौकीदारों ने सूचना दी, आज उन दोनों का सेठजी के यहाँ ही निमंत्रण है।

चंपा बोली—"निरीक्षकों की इस अनुपस्थिति से हमें कुछ भी शंका नहीं करनी चाहिए। वे जरूर हमारे खिलाफ मीटिंग कर रहे हैं। यह हमारे लिये भी लाभ की बात है। कल हमारे जलूस की शोभा बढ़ाने की बड़ी जरूरत है, जिससे दूर-दूर से

लोग इस पर आकर्षित हों ! हम क्यों न अभी सारी तैयारी कर ले ।"

जलूस मे कैसे रग और आकर्षण पैदा किए जायँ, इस पर वहस हुई । पहनने के लिये कपड़े—नारगी शलवार, बैंजनी कुरता और गुलाबी ओढ़नी, पैरो में चप्पल, जो फैक्टरी की यूनिफ़ॉर्म थी, वही निश्चय हुई ।

"हाथो में भी कुछ होना चाहिए," बिजली बोली—"जिससे जलूस में ऊँचाई और गहराई भी पैदा हो ।"

लक्ष्मी ने कहा—"कार्ड-बोर्ड पर चिपके हुए फैक्टरी के बड़े-बड़े पोस्टर तो है, उन्हे बाँसो मे बाँधकर सिर के ऊपर उठा ले चलेगी । दूर-दूर से भीड़ उन्हें देखकर जरूर हमारे नज़दीक खिंच आवेगी ।"

यशोदा बोली—"यह भी कोई बात हुई ! लोग समझेंगे, 'जय हिंद बीड़ी फैक्टरी' ने विज्ञापन देने की कोई नई तरकीब निकाली है । बीड़ियों की बिक्री में संभव है, कुछ बढ़ती हो जाय, बीड़ी लपेटनेवालो को कुछ न मिलेगा ।"

चंपा ने कहा—"बीड़ी के पोस्टर नही, हम अपने पोस्टर लिखेंगी । बड़े-बड़े हरूफो मे ।"

उदासी ने कहा—"कागज़ कहाँ है ?"

चंपा ने जवाब दिया—"दरवाजो पर पड़े हुए परदे निकाल डालो, उनमे लिखेंगी, और उन्हीं के डंडो पर उन्हे लटकाकर ले चलेंगी ।"

क्या लिखा जाय ? प्रश्न हुआ। एक ने कहा—"अपने नारे क्यों न लिखें—दरवाज़ा खोल दिया ! दीवार तोड़ दो।"

चंपा ने कहा—"इससे जनता का क्या मतलब ? हमे उसकी हमदर्दी अपनी तरफ करनी है। कोई सनसनी-भरी बात होनी चाहिए, और एक पंक्ति से अधिक न हो। सब अपने-अपने सुझाव दो। जो सबसे श्रेष्ठ होगा, वही लिखा जायगा।"

लक्ष्मी बोली—"'जय हिंद बीड़ी फैक्टरी' बीड़ी की नहीं, गुलामी की फैक्टरी है।"

चंपा ने जवाब दिया—"इस आज़ादी के युग मे पब्लिक का ध्यान खींचने के लिये ख़याल अच्छा है, पर पंक्ति बहुत लंबी है। चुन्नी, तुम कहो।"

चुन्नी ने कहा—"भिखारियों पर ज़ुल्म हो गया !"

चंपा बोली—"पंक्ति छोटी तो है, पर इसमें कोई ताक़त नहीं। तुलसी, तुमने क्या सोचा ?"

तुलसी ने जवाब दिया—"'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' मे कालेबाज़ारी !"

चंपा ने कहा—"बात यथार्थ होनी चाहिए। बिना सचाई के हम पब्लिक के दिल मे कोई जगह न बना सकेंगी। यशोदा, तुम कहो।"

यशोदा कुछ संकोच कर कहने लगी—"'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' की ढोल मे पोल !"

सब हँस पड़ीं। चंपा बोली—"बात में गंभीरता होनी चाहिए। उदासी, तुम्हारी बारी है।"

"मैंने तो कुछ भी नहीं सोचा।"—उदासी बोली।

"सोचने में क्या रक्खा है, कह डालो कुछ।"—चुन्नी ने उसे साहस दिलाया।

उदासी बोली—"सेठ जयरामजी अच्छे तो हैं, उन्होंने हमारे ऊपर भलाई की है, लेकिन एक बात उनकी बड़ी खराब है—"

चंपा ने हँसकर कहा—"तुमने तो पूरी किताब ही लिख डाली। भगती, तुम तो कहो।"

भगती ने कहा—"'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की दीवार टूट गई!"

"कोई मतलब नहीं खुलता। लोगों को भ्रम हो सकता है, शायद सचमुच कोई दीवार गिर पड़ी।" चंपा ने बिजली से कहा—"तुमने सबके बोल सुने हैं। इसीसे मैंने सबके अंत में तुमसे पूछा है। तुम जरूर सबके विचारों को जोड़कर कोई उपयुक्त पंक्ति बताओगी।"

बिजली हँसती हुई बोली—"'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' में अंधेर!"

"बहुत ठीक! यह सबसे आगे का लेख हुआ। दो और छोटे-छोटे चाहिए।"—चंपा ने कहा।

वे दो भी कुछ सोच-विचार के बाद तय किए गए। पहला

निश्चय हुआ—'हमें अंधा बना दिया गया !" दूसरा—"हम प्रकाश माँगते हैं ।"

चंपा बोली—"अब देर न होनी चाहिए। निरीक्षिका के आने से पहले ही हमे इन तीन परदो पर पंक्तियाँ लिख लेनी चाहिए।"

सब लड़कियों ने मिलकर कुछ ही देर मे तीन परदों पर तीनों लाइनें बड़े-बड़े हरूफों मे लिख डालीं। परदों के डंडे भी उन्हें तानने के लिये फिट कर लिए, और निरीक्षिका के आने तक वे तीनों पोस्टर चंपा ने अपने तख़्त के नीचे लपेट-कर छिपा लिए।

खा-पीकर और सेठजी के साथ हड़तालियों के विरुद्ध न-जाने क्या परामर्श कर दोनों निरीक्षक लौट आए। दस बजने को थे। सौदामिनी मनोरंजन के कमरे मे लौट आई, और चुपचाप एक अख़बार पढ़ने लगीं। लड़कियों ने भी मुँह फुला लिए।

सोने का घंटा बजा। एक-एक लड़की बिना वाक्य-व्यय-किए अपने-अपने बिस्तर की ओर चली गई। सबके अंत मे सौदामिनी ने भी प्रस्थान किया, और चारों ओर देख-भालकर चौकीदारिन से कुछ बातें कीं। इसके बाद चौकी-दारिन ने बाहर से लोहे का दरवाज़ा बंद कर उसमे ताला लगा दिया, और चाबी सीख़चों की राह सौदामिनी को सौंप दी। सौदामिनी भी सोने चली गई। चौकीदारिन ने

सोने का घंटा बजने के पाँच मिनट बाद बाहर से बिजली का मेन स्विच ऑफ कर दिया।

चंपा की आँखों में नींद कहाँ? हड़ताल की तमाम बुराई-भलाई उसी के माथे पर थी। किसी तरह सोते-जागते, करवटें बदलते, मनसूबे करते सुबह जागने का घंटा बजा। चौकीदारिन ने बाहर से बिजली खोल दी और सौदामिनी से चाबी लेकर फाटक का ताला भी।

नहा-धोकर सब लड़कियों ने शृंगार किया, और ड्रिल के कपड़े पहनने के बदले अपनी निश्चित यूनिफ़ॉर्म पहनी। सौदामिनी उनके ये ढंग देखकर समझ गई, आज इन्होंने ड्रिल से भी हड़ताल कर दी। वह कुछ नहीं बोली। सिर्फ दूर से एक दर्शक की भाँति ही सब कुछ देखने लगी। शायद सेठजी की ऐसी ही आज्ञा थी।

चाय और नाश्ता करने के बाद उनका बाहर चल देने का निश्चय था। चंपा मौका देख रही थी कि सौदामिनी कुछ अन्यमनस्क हो, तो वह लड़कियों को परदे-सहित फाटक के बाहर चल देने की आज्ञा दे। उसे अवसर मिला। उसने लड़कियों को एक लाइन में खड़े हो जाने का इशारा किया। डंडों से लिपटे हुए परदे लड़कियों के कंधों पर थे। उसने मार्च की आज्ञा दी। सौदामिनी ने दूर से देखा, कुछ नहीं कहा।

लड़कियाँ फाटक पर आईं। चौकीदारिन ने उठकर उनकी राह रोकने की चेष्टा की। चंपा बोल उठी—"हट जाओ, हम

अपने ही खयाल से यहाँ कैद थीं, तुम्हारी शक्ति और चौकसी से नहीं।"

चौकीदारिन दौड़कर सौदामिनी के पास गई। सौदामिनी ने कहा—"करने दो, वे जो कुछ करती हैं। यही तो तुम्हें समझाया था मैंने कल। तुम नहीं समझीं।"

लड़कियाँ लड़कों के फाटक के भीतर चली गईं। एक-एक लड़की को एक-एक लड़के का नाम याद था। प्रत्येक ने प्रत्येक को पुकारा। लड़के मानो तैयार ही बैठे थे। तुरंत ही चले आए, और एक-एक लड़की का हाथ पकड़कर फैक्टरी के मुख्य फाटक पर आ गए।

मुख्य फाटक के संतरी ने बंदूक की नोक पर उनकी निष्क्रांति रोक दी। नौजवान ने संतरी की बंदूक की नाल अपनी छाती से लगाकर कहा—"अरे, पुराने सैनिक, दबा, घोड़ा दबा। अगर इसके लिये तू अपनी तनख्वाह वसूल करता है, तो इस नौजवान की छाती तेरे निशाने पर अटल है। तेरी तनख्वाह खानेवाले बहुत-से होंगे, इसको रोनेवाला कोई नहीं!"

संतरी देखता ही रह गया। नौजवान बोला—"हम उजाले की तलाश में जा रहे हैं। तुम्हारी अगर उससे दुश्मनी है, तो बात दूसरी है।" उसने तमाम साथियों से कहा—"चले आओ, सोच लेने दो संतरी को। अभी तो बहुत दूर तक गोली जा सकती है।"

सब बाहर निकल गए, और फाटक के बाहर अपना जलूस सजाने लगे। संतरी सेठजी के पास दौड़ा। बाहर ही उसे उनका मैनेजर मिल गया। उसने कहा—"जाने दो उन्हें।"

[बाईस]

सेठजी दुमंजिले पर अपनी खिड़की का परदा हटाकर यह सब देख रहे थे। क्रोध निष्फल होगा, विरोध और भी उस प्रतिक्रिया में घी की आहुति डाल देगा, यह समझकर सेठजी चुप होकर उनके अगले क़दम की प्रतीक्षा करने लगे।

एक तरफ लड़कियों की लाइन लगी, दूसरी ओर लड़कों की। सबसे आगे चंपा और नौजवान थे। सबसे बड़े परदे के डंडे उन्हीं के हाथों में थे, उसमें लिखा था—

'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी में अंधेर!'

परदे की पीठ जान-बूझकर की गई थी फैक्टरी की तरफ, लेकिन उसकी स्याही छनकर दूसरी ओर झलक गई थी। सेठजी की तीव्र कल्पना ने उन उलटे हरूफों को पढ़ लेने में कोई देर नहीं लगाई। "कैसा अंधेर?" जोश में आ गए वह, और जोर से उनके मुँह से निकल पड़ा—"कैसा अंधेर? इन भिखारियों की तकदीर को माँजकर चमकाया मैंने, क्या यही था वह अंधेर? जो जूठा खाने और धूल में सोने के आदी थे, मैंने उन्हें स्वच्छ भोजन और निवास दिया। मैंने उनमें एक नई आदत पैदा की। वह इनके पुराने संस्कारों को हजम न हुई, और इस विद्रोह के रूप में प्रकट हो गई! बस, अंधेर यही है 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी'

में। लेकिन यह अंधेर मेरा नहीं, उन्हीं का है। ये जनता को बह-काने जा रहे हैं। जाने दूँगा, मुझे सत्य और झूठ का अंतर ज्ञात हो जायगा।"

बीच में यशोदा और संतू ने दूसरा परदा अपने हाथों में ताना। सेठजी ने उसको भी उलटे हरूफों की मदद से पढ़ा। लिखा था—

हमें अंधा बना दिया गया !

"इस प्रकार इनकी शारीरिक और मानसिक उन्नति कर मैंने इनको एक नया जगत् दिखाया, इसको ये अंधा बना देना कहें, तो क्या लोग भी अंधे ही हैं, जो इनकी बात का विश्वास कर लेंगे?"—सेठजी ने तीसरे परदे के हरूफों को भी पढ़ा। वह परदा अंतिम लड़के और लड़की ने अपने हाथों में फैला लिया था, उसमें लिखा था—

हम प्रकाश माँगते हैं !

"मैं पूर्व जन्म को नहीं मानता था, इसीलिये मैंने इन भिखा-रियों की संतानों की दशा सुधारकर पुराने कर्मों की निःसारता दिखाई। मुझे क्या मालूम था, इनकी मति में इस तरह अंतर पड़ जायगा। मैंने तक़दीर को मनुष्य के उद्यम का लेख समझा था—इनकी करनी ने मेरी वह धारणा मिटा दी।"—सेठजी मन-ही-मन विचार कर रहे थे। उन्होंने देखा, वह जुलूस उन परदों के लेखों को ध्वनि की तरंगों में बदलता हुआ चल पड़ा।

नौजवान और चंपा के नेतृत्व में वह जलूस शोर मचाता हुआ भूधर की दूकान की तरफ बढ़ा, और उसके बाहर खड़ा होकर शोर मचाने लगा। भूधर भीतर मशीन चला रहा था, और उस शोर को उसने सड़क पर के किन्हीं आंदोलनकारियों का शोर समझा। कुछ परवा नहीं की उनकी।

चंपा बोली—"मैं भीतर जाकर देखती हूँ उन्हे। मेरा परिचय है उनसे।" चंपा दूकान के भीतर चली गई। भीतरी कमरे के द्वार पर खड़े होकर उसने देखा, भूधर मशीन मे तेल दे रहा था, और उसका नौकर धीरे-धीरे मशीन का पहिया घुमा रहा था। उस पहिए के साथ-साथ वह सारा कमरा चंपा के चारो ओर घूमने लगा।

भूधर की उस पर दृष्टि गई। उसने पूछा—"किसे ढूँढ़ती हो?"

"आप ही को।"—चंपा मशीन के निकट चली गई। फर्श पर जो अनगिनती बीड़ियों का ढेर उसने देखा, तो उसके होश उड़ गए!

"आपको कहीं देखा है?"—भूधर ने पूछा।

"हाँ, यहीं देखा है।" चंपा ने उस मशीन की ओर संकेत कर पूछा—"यह मशीन आपने बनाई?"

"कौन, तुम चंपा हो?"—भूधर ने उसे पहचान लिया।

"हाँ, वही हूँ।" चंपा ने फिर पूछा—"आपने यह मशीन क्यों बनाई?"

"सेठजी के लिये हमारे मन में आदर है, लेकिन उन्होंने हमें अंधा बनाकर रख दिया।"

"तुम तो देख रहो हो।"

"उन्होने हमारी आँखो मे पट्टियाँ बाँध रक्खी है। नर और नारी, सृष्टि के ये दो स्वरूप—उन्होंने हम दोनों को अलग-अलग दो जेलो मे फैक्टरी के भीतर कैद कर रक्खा है। तुम्हें नहीं मालूम है। नीति, युक्ति, धर्म और समाज, कौन इसका समर्थन करेगा? इससे अच्छी हम फुटपाथो पर नही थी क्या? माली हालत हमारी बदतर हुई, तो क्या? हमें प्रकृति का दिया हुआ अधिकार तो प्राप्त था?"

"दिखाव और रूप ही नहीं, आज तुम्हारी जो यह वाणी और विचारों की तरक़्क़ी मैं पा रहा हूँ, यह सब सेठजी की ही देन जान पड़ती है। फिर तुम्हारा उनको पब्लिक में आकर बुरा-भला कहना मुझे सरासर अन्याय जान पड़ता है। मै सेठजी की सज्जनता का क़ायल हूँ, और कदापि तुम्हारे स्वर में स्वर न मिलाऊँगा।"

चंपा को भीतर बड़ी देर लग गई। नौजवान को यह असह्य हो उठा। उसने सारे जत्थे को दूकान के भीतर जाने की आज्ञा दी। वे अपने प्रदर्शन के परदो पर आंदोलन के नारों को जगाते हुए भूधर की दूकान के भीतर धँस गए!

"निकलो! निकलो! बाहर निकलो! मेरी दूकान के भीतर घुस आने का तुम्हें क्या अधिकार है?"—भूधर उन्हें बाहर निकालने लगा।

चंपा बोली—"मनुष्यता का नाता !"

"जिस थाली में तुमने खाया है, उसी में छेद कर देने को तुल जाने पर क्या तुमने मनुष्यता खो नहीं दी ?"—भूधर बोला।

नौजवान बोला—"हम बीड़ी लपेटनेवाले हैं। आपने यह बीड़ी बनाने की मशीन बनाई है, हम इसे देखने आए हैं।"

"शांत हो, तो दिखा दूँगा।"—भूधर बोला।

सब चुप हो गए। भूधर ने मशीन चलानी शुरू की। ज्यों ही उसमें से बीड़ियों की अटूट धारा बह चली, त्यों ही सब-के-सब माथा पकड़कर फर्श पर बैठ गए।

नौजवान ने ठंडी साँस ली—"अब क्या करें ?"

भूधर बोला—"अब कृपा कर यहाँ से पधारिए, मशीन दिखा चुका मैं।"

सहसा नौजवान उठा। उसने पास पड़ा हुआ एक हथौड़ा उठा लिया—"नहीं, हम ग़रीबों के श्रम को खा जानेवाला यह राक्षस तुमने बना दिया ! हम इसका सिर फोड़कर ही यहाँ से जायँगे।"

"ख़बरदार !" भूधर ने उसका हाथ पकड़ लिया—"अभी सीधे बाहर चले जाओ, नहीं तो पुलिस के हवाले कर दूँगा सबको।"

चंपा ने नौजवान से कहा—"नौजवान, इस तरह जोश मे न आओ। यह ग़लत क़दम है।" उसने भूधर से कहा—"एक बात है।"

"नहीं, पहले इन सबको बाहर निकालो, तभी तुम्हारी कोई बात सुनूँगा।"—भूधर बोला।

चंपा ने नौजवान को सारे जत्थे के साथ बाहर भेज दिया, और भूधर से बोली—"तुमने कहा था, मेरे यहाँ से जाने के कारण तुमने यह मशीन बनाई। अगर मैं फिर यहाँ आ गई, तो क्या तुम इसे तोड़ दोगे?"

भूधर ने देखा, उस भिखारिन की छोकरी का मुख एक अद्भुत दीप्ति से चमक उठा था। वह बोला—"विचार कर जवाब दूँगा।"

"हाँ या नहीं। अभी दो हमें जवाब।"—चंपा ने आग्रह किया।

"कितने दिन और रातों की बलि देकर मैंने इसे बनाया है, तुम एक ही क्षण में इसे तोड़ देने को कहती हो। कुछ सोचने का समय दो।"—भूधर बोला।

"अपना सारा जीवन तुम्हारी सेवा में भेंट चढ़ा दूँगी, यह क्या छोटी बात है।"—चंपा ने तमककर जवाब दिया।

भूधर ने चंपा को देखा, मन में विचारा—"यह पथ की भिखारिन, किस तेजस्विता से बात कर रही है? इतना सम्मोहन कहाँ से प्राप्त हो गया इसे? वातावरण हमारे निर्माण में कैसा सहायक होता है?" उसने फिर चंपा को देखा, और फिर अपनी मशीन को। वह दुविधा में पड़ा खड़ा ही रह गया।

"तुम चुप क्यों हो गए?"—चंपा बोली।

"हाँ, तुम्हारा भी फैसला जरूरी है। तुम भी विचार कर लो, जाओ। लेकिन एक बात है। यह जो 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' को बदनाम करने का इरादा है तुम्हारा, इसे बिलकुल छोड़ दो, तभी मैं तुम्हारी बात पर विचार कर सकूँगा, अन्यथा नहीं।"—भूधर ने उसे ताड़ना दी।

चंपा उसकी बात मानकर चली गई। उसने बाहर आकर अपने साथियों से कहा—"जलूस को तोड़ दो।"

नौजवान बिगड़कर बोला—"कभी नहीं, जो क़दम बाहर किए हैं, उन्हें पीछे लौटा देना बड़े भारी शरम की बात है।"

"जब तक यह बीड़ा बनाने की मशीन खड़ी है, सब बेकार हो जायगा। इसलिये समझ-बूझ से काम लो। जब तक यह मशीन तोड़ नहीं दी जाती, तब तक जहाँ हो, वहीं रहो।"—चंपा ने कहा।

"मशीन कैसे टूटेगी?" नौजवान बोला—"हम अगर न तोड़ें, तो बनानेवाला उसे क्यों तोड़ेगा?"

"वह भी तोड़ सकता है, मैंने ऐसा उपाय निकाला है। लेकिन—लेकिन नौजवान—" चंपा चुप हो गई।

"लेकिन क्या?"

"मुझे तुम्हारा साथ छोड़ देना पड़ेगा।"—चंपा ने कहा।

"नहीं, तुम्हें पाने के लिये तो यह लड़ाई लड़ी है।"

"तुच्छ स्वार्थ को छोड़ दो नौजवान! हमें तमाम बीड़ी लपेटनेवालों की भलाई को देखना है। चलो, फैक्टरी को लौट

चलें, और सबसे पहले इस मशीन के राक्षस को खत्म करने के उपाय सोचें। परदे लपेट लो।"

अंत में चंपा का निर्णय ही सर्वोपरि रहा, और वे लोग फैक्टरी को लौट जाने की तैयारी करने लगे।

इसके कुछ पहले प्रोफ़ेसर जोश पंडित गजानन के साथ अपने घर आ रहे थे कि भूधर की दूकान के सामने लड़के-लड़कियों की भाड़ देखकर उसका कारण जानने को उत्सुक हो गए। जब उन्होंने परदों के लेख पढ़े, तो और भी उनका कौतूहल बढ़ गया। बीड़ी-सिगरेट का विरोध उनके जीवन का व्रत था, और यह उनकी बग़ल में बराबर ऊँची होती हुई बीड़ी की फ़ैक्टरी तो उनके दिन-रात का सिर-दर्द और दिल का काँटा था।

"जयहिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी में अंधेर!" उस लेख को उच्चारित कर प्रोफ़ेसर जोश बोले—"ठहरिए पंडित जी, देखिए, क्या बात है ?"

"सेठजी के उपजाऊ दिमाग़ ने बीड़ी के विज्ञापन के लिये कोई नया आकर्षण सोचा है।"

"नहीं पंडितजी, विज्ञापन का यह लेख तो कुछ और कहता है।"

"यही चतुराई है सेठ की। फैक्टरी की बदनामी कर फिर बीड़ियों के गुण गावेगा। कैसा ज़हर फैला दिया इसने, और यह बीड़ी, तंबाकू तथा सिगरेट से भी ख़तरनाक चीज़ है। इतनी बड़ी विशाल इमारत, अगर यह आपकी सोसाइटी के पास होती, तो देश का कितना उपकार होता।"

"होगा पंडितजी, धीरज रखिए।" प्रोफेसर ने दूसरे नारे भी पढ़े—हमें अंधा बना दिया गया! हम प्रकाश माँगते हैं!—"मुझे तो कुछ दाल में काला नज़र आ रहा है। आप जाकर ज़रा पता तो लगाइए। लड़के-लड़कियों के मुख पर गहरी चिंता छाई हुई है। फिर विज्ञापन के लिये भूधर घड़ीसाज़ का ही दरवाज़ा रह गया था क्या?"—प्रोफेसर ने कहा।

गजाननजी ने उस जत्थे के पास जाकर पूछा—"क्यों जी, यह बीड़ी-फ़ैक्टरी में कैसा अंधेर है?"

किसी ने उनकी बात का जवाब नहीं दिया। परदे डंडों में लपेटे जाने लगे।

"कौन हैं आप लोग? बीड़ी-फैक्टरी के कर्मचारी या कोई बाहर के स्वयंसेवक? यह बीड़ी का अंधेर क्यों लपेट दिया आप?"

नौजवान ने बड़े रूखेपन से जवाब दिया—"कुछ नहीं, हमारे आपस की बात है।"

"आपस की बात होगी। लेकिन आप लोग उस बात को मशहूर कर पब्लिक की बात बना देना चाहते हैं। स्वाभाविक ही है, ये जो दो विश्व-युद्ध सारी दुनिया के सिर पर ठोक दिए गए, ये भी तो शुरू-शुरू में बिलकुल आपस की ही बातें थीं। इसलिये तुम्हें ज़रा भी संकोच नहीं करना चाहिए। 'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' के बहुत-से अंधेर तो मुझे भी मालूम हैं। तुम अपना तजरबा कहो, तो शायद मेरे नक़्शे से मेल खा जाय वह।"

"अब आज हमें देर हो रही है।"—नौजवान ने इस बार बड़ी नम्रता से कहा। वे सब जाने की तैयारी कर रहे थे।

"इसी फैक्टरी में काम करते हो क्या ?"—गजानन ने पूछा।

"हाँ।"

गजानन की उत्सुकता बढ़ी। वह भूधर की दूकान से शायद इस बात पर कुछ प्रकाश पड़े, इस आशा में उसके भीतर चले गए। भूधर मशीन चला रहा था।

"कहिए, घड़ीसाजजी, आज तो यहाँ का नक़शा कुछ और ही हो गया। यहाँ कर क्या रहे हैं आप ?"—भीतर घुसते हुए पंडितजी ने कहा।

"कुछ नहीं, यह मशीन बन गई।"—भूधर बोला।

गजानन ने देखा, एक बीड़ी पर दूसरी बीड़ी अखंड रेखा की तरह मशीन उगलती चली जा रही थी। वह घबराए—"यह क्या बना दी आपने ?"

"पेट खाने को माँगता है।"

"कोई अच्छी चीज बनाते ? घड़ीसाजी क्या बुरी थी ? यह जहर बनाने की मशीन बना दी आपने। बहुत खराब काम कर दिया।"

"पंडितजी, आपने मुझे आशीर्वाद दिया था इसके लिये। याद नहीं है आपको ?"

"मुझे क्या मालूम था, तुम ऐसी मनहूस मशीन बना रहे हो। तोड़ दो इसको, इससे दुनिया खराब हो रही है।"

"खाने को कौन देगा मुझे ?"—भूधर ने प्रश्न किया।

"भगवान् देंगे। अगर विश्वास नहीं है, तो प्रोफ़ेसर जोश के यहाँ चलो, वह देंगे।"

"वह क्यों देंगे ? मैं जानता हूँ उनको।"

"दे देंगे ज़रूर, लेकिन मुफ़्त तो कोई किसी को नहीं देता। मशीन बनाने का दिमाग़ है, तो कोई ऐसी बनाओ, जिससे आदमी बीड़ी पीना छोड़ दे। यह भी क्या बात हुई दुनिया में। एक मिनट में तुम उसके ढेर लगा दे रहे हो।"

"मैं नहीं बना दूँगा, तो मेरा भाई दूसरा बना देगा, पंडितजी। इसके सिवा दुनिया बीड़ी पीने से इतनी ख़राब नहीं हुई, जितनी झूठ से। अगर तंबाकू ख़राब होती, तो भगवान् उसे उपजाते ही क्यों ?"

"तुम तंबाकू को अच्छी चीज़ बताते हो। किसी दिन प्रोफ़ेसर साहब के यहाँ जाकर नहीं पूछा।"

भूधर हँसा—"कहाँ के प्रोफ़ेसर हैं वह।"

"आपके पड़ोस में, और आप नहीं जानते उन्हें ?"

"उनका दिमाग़ ख़राब है। मुझे क्या ज़रूरत है, मैं अपना भी ख़राब कर लूँ ?"

पंडितजी सिटपिटाकर जल्दी से अपने मतलब पर आए—"यह जो भीड़ बाहर खड़ी है, वह कौन है ?"

"बीड़ी-फ़ैक्टरी के नौकर-चाकर हैं। बीड़ी का प्रचार कर रहे हैं।"

'यही तो मैंने शुरू में ही कहा था।" पंडितजी वहाँ से चलते बने।

बाहर आकर देखा, सारी भीड़ जाकर बीड़ी फैक्टरी के बाहर जमा हो गई थी। संतरी ने फाटक बंद कर रक्खा था। वहीं प्रोफेसर जोश भी खड़े थे।

"क्या बात है?"—गजानन ने पूछा।

"ये बीड़ी-फैक्टरी में काम करते हैं। जान पड़ता है, सेठजी के साथ इनका झगड़ा चल रहा है। उन्होंने फाटक बंद कर इन्हें भीतर आने से रोक दिया है। पूछो इनसे, नहीं तो हमें इनकी मदद करनी चाहिए।"

"ये बीड़ी का विज्ञापन कर रहे है, यही मालूम कर लाया हूँ मैं।" गजानन बोले।

"आपको धोखे में रख दिया किसी ने। इन्होंने शायद फैक्टरी में हड़ताल कर दी है।"

"अजी, यह भी फैक्टरी को मुल्क मे मशहूर कर देने की सेठजी की चाल है। फोकट मे तमाम अखबारों में नाम छप जायगा, और बीड़ियों की बिक्री बढ़ जायगी। भूधर घड़ीसाज ने बीड़ी बनाने की एक मशीन ईजाद कर दी है। मेरी समझ में आप वहाँ चलिए, और उसके दिमाग़ को अपनी सोसाइटी के लिये खरीदिए।"—गजानन ने कहा।

डॉक्टर जोश का ध्यान फाटक की भीड़ पर ही था। अचानक उधर संकेत कर उन्होंने कहा—"वह देखिए, सुनिए, वे क्या कह रहे हैं।"

नौजवान ने फाटक के सींखचों के भीतर पहरा देते हुए संतरी से कहा—"हम काम करने आए हैं। खोल दो फाटक।"

"कल तुम हड़ताल करनेवाले बने थे, आज काम करनेवाले हो गए!"—संतरी ने जवाब दिया।

डॉक्टर जोशी ने गजानन की पीठ पर थपकी देकर कहा—"सुना तुमने? यह विज्ञापन का लटका नहीं, हड़ताल की धमकी है।"

"जब तुमने हमें बाहर आने से नहीं रोका, तो भीतर घुसने से क्यों रोक रहे हो?"—फिर नौजवान ने कहा।

संतरी ने उसकी तरफ़ दृष्टिपात भी नहीं किया।

"नौजवान फिर बोला—"तुम जिस फ़ैक्टरी की तनख्वाह् खाते हो, उसके हितों का ध्यान होना चाहिए तुम्हें। हमने अपना इरादा बदल दिया। हमे अपने काम पर जाने दो। क्या तुम्हें होश नहीं है, फ़ैक्टरी का नुक़सान हो रहा है। लाखों बीड़ियों की कमी पड़ जायगी, ऑर्डर कैसे पूरे होंगे?"

सेठजी अपने मैनेजर के साथ पास ही के एक कमरे में ओट से यह सब देख और सुन रहे थे।

संतरी ने उत्तर दिया—"मुझे फाटक खोलने का हुक्म नहीं है।"

नौजवान ने कहा—"सेठजी पर हमारा यह विचार प्रकट कर दो। वह ज़रूर तुमसे फाटक खोल देने को कहेंगे।"

"मुझे अपनी ड्यूटी निभानी है, या मैं तुम्हारा अरदली हूँ।"

सेठजी ने धीरे-धीरे आट से संतरी से कहा—"खबरदार! संतरी, किसी हालत में नहीं खोला जायगा फाटक।"

संतरी और नौजवान की बातें सुनकर प्रोफेसर जोश ने गजानन से कहा—"क्यों पंडितजी, अब तो समझ गए न?"

"हाँ। ये 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के बीड़ी लपेटनेवाले हैं। इन्होंने तनख्वाह बढ़ाने के लिये हड़ताल की धमकी दी, जो भूधर की बीड़ी बनाने की मशीन को देखकर ठंडी पड़ गई। भूधर ने जरूर सेठजी से कोई सौदा कर लिया है, इसीलिये सेठजी अकड़ गए हैं।"

"पंडितजी, मुझे इन पर दया आती है।"

"स्वाभाविक तो है। इन बीड़ी लपेटनेवालों से लोगों की बीड़ी खुलवाने का काम लिया तो जा सकता है। आपकी जो स्कीम है, उसके लिये लाखों स्वयंसेवकों की जरूरत है। आरंभ में सोलह क्या कम हैं?"

"लेकिन ये भोजन-वस्त्र मकान के सिवा तनख्वाह भी माँगेंगे?"

"मैं पूछूँ, क्या तनख्वाह लेंगे? इस वक्त इन्हें जरूरत है, शायद फैक्टरी की तनख्वाह पर ही राजी हो जायँ।"

"पूछिए।"—डॉक्टर जोश ने कुछ सोचकर उत्तर दिया।

गजानन ने नौजवान से कहा—"देखो जी, तुम परिश्रम करते

हो, तुम्हें अपने परिश्रम का अभिमान होना चाहिए। इस तरह पूँजीपतियों के बंद फाटक पर सिर रगड़ने से तुम मजदूरी की प्रतिष्ठा को कलंकित कर रहे हो।"

फाटक बंद हो जाने से तमाम बीड़ी लपेटनेवाले अपने आत्माभिमान के लिये कोई सहारा ढूँढ़ ही रहे थे। गजानन की बात उन सबके दिलों में चुभ गई। सबने आशा-भरी दृष्टि से फिर गजानन की ओर देखा।

गजानन बोले—'प्रोफेसर जोश, यह सामने ही खड़े हैं, यहीं बगल में इनका अस्पताल है। उसकी ऊँचाई ज्यादा नहीं है, लेकिन इनके दिल के विस्तार की कोई सीमा नहीं। और इनके पास पर्याप्त धन है, जिसका दिखाव करना यह व्यर्थ समझते हैं। यह तुम सबको अपने यहाँ नौकरी में रख सकते हैं, इसी तनख्वाह पर।"

सब के-सब बड़े ग़ौर से गजानन और जोश को देखने लगे। नौजवान ने पूछा—"काम क्या करना पड़ेगा?"

गजानन ने उत्तर दिया—"जो काम यहाँ करते हो, बस, उसी का उलटा।"

नौजवान बोला—"नहीं समझे।"

गजानन ने कहा—"यहाँ बीड़ी पीनेवालों की तादाद बढ़ा रहे हो, वहाँ यह तादाद घटानी पड़ेगी।"

डॉक्टर जोश ने भी निकट आकर कहा—"यहाँ रहकर तुमने दुनिया में बुराई बढ़ाई है—"

जोश का वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि सेठ जयराम फाटक के भीतर दौड़ते हुए आ पहुँचे, और चिल्ला उठे—"नौजवान!"

सेठ जयराम को देखते ही डॉक्टर जोश भाग खड़े हुए। गजानन भी सहारा न पा उनके पीछे चल दिए।

नौजवान ने मुँह फिराकर सेठजी की तरफ देखा। सेठजी बोले—"नौजवान, चंपा, मैं तुम्हारे लिये फिर फ़ैक्टरी का फाटक खुलवा देता हूँ। कोई शरम है तुम्हें?"

नौजवान ने निर्भीक उत्तर दिया—"श्रीमन्, हम सौ बार आपके चरणों मे गिरकर आपसे माफी माँगने को तैयार हैं। लेकिन आँखो मे पट्टी बाँधकर हमारे शरम नहीं उपज सकी।"

"अच्छी बात है। वह पट्टी और यह फाटक, तुम्हारे लिये दोनो को खुलवाने की मैं अभी आज्ञा देता हूँ।"

संतरी ने फाटक खोल दिया।

समस्त जत्थे ने गगनभेदी स्वर ऊँचा किया—"जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी की जय! सेठ जयराम ज़िंदाबाद!"

उस ध्वनि के बीच में उल्लास-भरे हृदय से वे हड़तालिए फ़ैक्टरी के भीतर प्रविष्ट हुए। सेठजी समझते थे, विजय उनकी हुई, और हड़तालियो ने समझा, वे जीते।

जोश और गजानन ओट से यह सब देख रहे थे। जोश बोले—"पंडितजी, भूल मुझसे हुई। अगर हड़तालियों के साथ हम अलग से बातें करते, तो हरगिज़ सेठ उनके लिये फाटक न खोलता।"

"क्यो ?"—गजानन के प्रश्न में आश्चर्य था।

"पंडितजी, उस सेठ के साथ मेरा पिछली चौथाई सदी का झगड़ा चला आता है; आप नहीं जानते। जिस भूमि पर आज इसकी यह फैक्टरी खड़ी है, वह आधी मेरी है। मै इसकी, इस 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की ईंट से ईंट बजाकर अपना हिस्सा ले लूँगा।"—डॉक्टर जोशी ने मुक्का ताना उस फैक्टरी की तरफ, और फिर दौड़कर अपने घर की तरफ भागे।

पंडित गजानन भी उनके पीछे मन-ही-मन सोचते हुए जाने लगे—"समस्त विश्व की मंगल-कामना की जड़ क्या इस प्रकार एक मनुष्य की प्रतिहिंसा और घृणा की खाद चाहती है ?"

सेठजी दोनो लीडरों के साथ-साथ उनके विभागो के फाटकों तक उन्हें पहुँचाते हुए बोले—"देवी का मंदिर और खेल का मैदान, दोनो स्थानो में मैं तुम्हारी आँखों की पट्टी दूर करने की आज्ञा देता हूँ। लेकिन तुम दोनो के विभाग अलग-अलग ही रहेंगे।"

नौजवान बोला—"हमें स्वीकार है।"

दोनो विभागों के द्वारों पर मेघदूत और सौदामिनी उनको अपने अधिकार में लेने को खड़े थे। सेठजी संतुष्ट होकर चले गए। दोनो विभागवाले एक दूसरे से बिदा होने लगे।

संतू ने भगती से हाथ मिलाया, दयाल ने लछमी से, कानता ने उदासी से, शंकर ने यशोदा से, तेजा ने तुलसी से, फागुन ने चुन्नी से और बिच्छू ने बिजली से।

मेघदूत बोला—"यह क्या ?"

बिच्छू बोला—"आँखों में पट्टी बाँधकर हमने अपने-अपने ये साथी छाँटे हैं, और आँखें पाकर हम एक दूसरे से सन्तुष्ट हैं। आप हमें एक दूसरे से बिलग होते समय नमस्ते कहने की आज्ञा दें, क्योंकि दीवार टूट गई।"

सौदामिनी ने पूछा—"लेकिन जो ये लीडर हैं ?"

नौजवान ने हाथ बढ़ाया, लेकिन चंपा ने अपना हाथ नहीं बढ़ाया। वह बोली—"नौजवान, अभी हमारे बीच में दीवार वैसी ही है।"

दोनों अपने-अपने विभागों में चले गए। घंटाघर की घड़ी खराब हो गई थी। चौकीदारों ने हाथ से घंटे हिलाए।

[तेईस]

वसंत नित्य नियम-पूर्वक दिन के दस बजे पिताजी के हुक़्क़े को अपने कमरे मे बाहर से ताला लगा क़ैद कर जाता था। शाम को जब चार बजते, तो वह उसे उठाकर फिर वकील साहब के कमरे में रख देता।

उस दिन से वकील साहब उसके प्रति कृपालु हो गए थे। उस मातृविहीन पुत्र के लिये उनकी करुणा जाग उठी थी। वह केवल हँस देते, जब वसंत अपना नियम पूरा करने आता।

घर पर दस से चार तक की अवधि में तो रामधन बाबू पुत्र से किए गए वादे पर अविचल रहते थे, पर इस बीच बाहर रहने पर दूसरों की दी हुई सिगरेट की बत्तियों से ज़रूर इस व्रत का पारायण करते रहते थे।

दो महीने इसी प्रकार बीत गए। इतवार का दिन था। स्कूल और कचहरी, दोनो जगह छुट्टी थी। पिता और पुत्र, दोनो को अवकाश था।

नित्य की भाँति, दस बजे वसंत आ पहुँचा उनके कमरे में। वकील साहब छुट्टी के ढीलेपन को तंबाकू की फ़ूँकों से कस रहे थे।

"पिताजी, दस बज गए।"—वसंत ने दीवार की घड़ी की तरफ़ इशारा कर कहा।

"इतवार के दिन तमाम नियम तोड़ दिए जाते हैं। इसी से सोमवार को मनुष्य को जो तन और मन की ताजगी मिलती है, उससे सारी कमी पूरी हो जाती है।"

"नहीं पिताजी, नियम का प्रतिपालन धार्मिक पवित्रता से होना चाहिए। एक भी बाल पड़ जाने से उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं।"

"तबाकू अभी सुलगी है वसंत, बड़ी मीठी लग रही है। तुम इसे ले जाने को आए हो, इससे इसका माधुर्य और भी बढ़ गया है। मेरी यह घड़ी शायद पाँच मिनट तेज़ भी हो सकती है, बहुत दिन से मिलाई नहीं गई है।"—वकील साहब ने फिर एक कश और खींचकर कहा।

"घड़ी बिलकुल ठीक है। मैंने कल ही मिलाई है। अब दो महीने हो गए आपकी इस प्रतिज्ञा को। अब तो इस अवधि में आपको दो घंटे और बढ़ा देने चाहिए—सुबह नौ बजे से शाम के पाँच बजे तक।"

"हाँ वसंत, सोच तो रहा हूँ मैं भी। इसके लिये मुझे एक घंटा पहले और एक घंटा बाद को सोने का भी अभ्यास करना पड़ेगा।"—कहकर वकील साहब ने हुक्के की नली वसंत को दे दी।

इसी समय उनके मुहर्रिर ने आकर कहा—"'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' के मुंशीजी किसी क़ानूनी मशविरे के लिये आए हैं।"

"दफ्तर में बिठाइए, मैं अभी आता हूँ। आज इतवार है।"

मुहर्रिर चला गया वकील साहब का संदेश लेकर, और उससे पहले ही वसंत भी हुक़्क़े की कमर पकड़कर अपने कमरे को चल दिया था।

रास्ते में हुक़्क़े के सिर पर उड़ते हुए सुवासित धुएँ ने वसंत के मनोराज्य में सोई हुई कई स्वप्न स्मृतियों को जगा दिया। उसने हुक़्क़ा ले जाकर अपने कमरे में रख दिया, और कमरे के द्वार बंद कर दिए, बाहर से नहीं, भीतर से।

उसके मन में विचारों का तूफ़ान जाग उठा—"पिताजी कहते हैं—नियमों में ढील देने से और भी उत्साह से उनका प्रतिपालन होता है। परिश्रम करते-करते जब आदमी थक जाता है, तो वह विश्राम लेता है। विश्राम से निःसंदेह उसे फिर नई स्फूर्ति प्राप्त होती है, और वह फिर परिश्रम के लिये शक्तिमान् हो जाता है।"—उसने दौड़कर हुक़्क़े की नली हाथ में ले ली। तुरंत उसने काँपकर उसे जहाँ-की-तहाँ रख दिया।

एक दीवार पर उसे हाथ में बेंत लिए रामधन दिखाई दिए। कल्पना के स्वरों में उसने सुना—"पिएगा अब से सिगरेट? हड्डी-पसली चूर-चूर कर रख दूँगा तेरी।"

दूसरी दीवार पर उसने पंडित गजानन को देखा। मानो वह कह रहे थे—"विचार और कर्म की सहायता से मनुष्य चाहे जिस पुरानी आदत को छोड़ सकता और चाहे जिस नई की जड़ जमा सकता है। इतने महीनों की तपस्या—वसंत, तुम उसे तोड़कर नष्ट कर दोगे क्या! मनुष्य वर्षों में बनता है, और किसी

भी क्षण में, एक ही क्षण में पतित हो जाता है। सोच लो, इस-लिये सावधान हो जाओ।"

तीसरी दीवार पर उसे प्रोफेसर जोश दिखाई दे रहे थे। उनके हाथ में थी वही उनकी पुस्तक—'जहर की पत्ती'। वह बहुत विशाल होकर उसे दिखाई देने लगी। उसके आवरण पर भयानक अजगर की लपेटों में फँसा हुआ एक मनुष्य बनाया गया था।

"झूठा ही एक कोरी कल्पना! हवा को बाँधकर खड़ा कर दिया गया एक हाऊ! माता अपने अबोध बच्चों को डराने के लिये जिसका उपयोग करती है। लेकिन बालक के दिमाग का एक भाग इससे दुर्बल हो जाता है।"—वसंत की उपचेतना ने फिर वह परित्यक्त हुक्के की नली अपने हाथ में उठा ली। चौथी दीवार के सहारे वसंत खड़ा था, और उसके निकट संपर्क में था ज्वलंत हुक्का।

प्रोफेसर जोश का मानस-चित्र बोलने भी लगा—"संतान को बहुत-सी गंदी आदतें भी अभिभावकों से उसे उत्तराधिकार में मिल जाती हैं। मैं कहता हूँ—यह लड़का क्या पालने में ही सिगरेट पीना नहीं सीख गया?"

वसंत न-जाने कब हुक्के की नली मुँह में देकर धुआँ निकालने लगा। उसने उँगलियों पर गिनकर कहा—"लगभग सोलह वर्ष का मेरा यह अभ्यास! सहज ही कैसे छूट जायगा? परिश्रम करना कर्तव्य है, थक जाना स्वाभाविकता। थकने पर विश्राम

और भी स्वाभाविक। विना विश्राम किए कौन बुरी आदत के साथ युद्ध कर सकता है ?"

वसंत तंबाकू पीता जा रहा था, बड़ा आनंद आने लगा उसे। उसने उस हुक्के को शायद इसी दिन के लिये निःशब्द कर दिया था।

कुछ ही देर में उसके दिमाग़ में प्रतिक्रिया की लहरें उठने लगीं। उसने हुक्के की नली छोड़ दी। वह घबराकर उसके पास से दूर चला गया।

गजाननजी उस पर तिरस्कार बरसाते उसको देख पड़े। वह साफ उनकी आवाज़ सुन रहा था—"वसंत, तुमने इस ब्राह्मण का मुँह काला कर दिया! प्रतिज्ञा तोड़कर तुम अपने मन में एक खाई खोद देते हो। पश्चात्ताप कर जब तुम दुबारा प्रतिज्ञा करते हो, तो फिर उसी स्थान पर आकर वह बड़ी आसानी से टूट जाती है। प्रतिज्ञा तोड़नेवाले से प्रतिज्ञा न करनेवाले कहीं श्रेष्ठ हैं।"

वसंत बेचैन होकर कमरे में इधर उधर टहलने लगा। वह कमरे से बाहर निकल गया। दूर घूमने को जाने लगा। उसने भोजन नहीं किया था। पश्चात्ताप के रूप में उसने उस दिन व्रत रखना निश्चय किया। विना किसी से कुछ कहे-सुने चला गया वह। पैदल ही, दूर! कहाँ? लक्ष्य स्थान का नहीं था, मन को पछतावे से शुद्ध करने का था।

नाना प्रकार के तर्क-वितर्क से दो घंटे बाद वह फिर घर लौट

आया। बुआ उसका भोजन लेकर बिना खाए बैठी थीं, चिंतित होकर। वसंत आकर झूठ बोला—"मैं अपने एक मित्र के यहाँ निमंत्रित था, जल्दी में कहना भूल गया।"—बुआ ने उसका विश्वास कर लिया।

कमरे मे आकर वसंत ने उस हुक्के को देखा। उस पर बड़ी घृणा की दृष्टि की—'मुझे पथ-भ्रष्ट करनेवाला यही है। अगर मैं इसे अपने कमरे में न लाता, तो कदापि इस तरह मेरा पतन न होता।" उसकी इच्छा हुई, उसे भूमि पर पटककर चूर-चूर कर दे। लेकिन वह पिता की संपत्ति, उसे ऐसा अधिकार नहीं था। उसने उसे उठा लिया, और उसे लेकर पिता के कमरे को चला।

घड़ी में अभी दो नहीं बजे थे। पिताजी हुक्के को दो घंटे पूर्व ही लौट आता देखकर कहने लगे—"क्यों वसंत, तुम तो दो घंटे बढ़ाने की बात कहते थे, दो घंटे घटा दिए क्या?"

"नहीं पिताजी, घंटे तो नहीं घटाए।"

"फिर?"

"मुझे आपका विश्वास करना चाहिए। विश्वास मनुष्य की सबसे बड़ी संपत्ति है। आपका विश्वास न कर मैं जरूर अपने विश्वास को भी खो देता हूँ।"

रामधन बाबू बोले—"मैं नहीं समझा तुम्हारी बात।"

वसंत ने बड़ी उदासीनता से कहा—"पिताजी, मैं सोचता हूँ, मनुष्य को अपना सुधार करना चाहिए, दूसरे का सुधार करने में बड़ी बाधाएँ हैं।"

वसंत की बातें सुनते हुए गजाननजी आ रहे थे। कहने लगे—"यह क्या कहते हो वसंत ?"

"नहीं, पंडितजी, मैं अपना ही सुधार मानता हूँ। हमें दूसरे का सुधार करने की कोई आवश्यकता नहीं।"

"क्यों नहीं है ? अगर ऐसी बात होती, तो फिर संसार में इतने लीडर, सुधारक, उपदेशक, वैद्य, हकीम, डॉक्टर और वकील न होते।"—गजानन कुछ रोष में आकर कहने लगे।

"नहीं, पंडितजी।"—रामधन ने गजानन की बात का प्रतिवाद किया।

"आप वकील होकर ऐसा कहते हैं ? आप दुष्टों को जो दंड दिलाते हैं, वह क्या उनके सुधार के लिये नहीं है ?"

"पंडितजी, सिद्धांतों की भरी दुनिया है। कुछ मनोवैज्ञानिक ऐसा भी कहने लगे हैं कि दंड से मनुष्य का कोई सुधार नहीं होता।"—वकील साहब ने कहा।

गजानन की दृष्टि वकील साहब के हुक्के पर पड़ी—"आज दो ही बजे आपका यह हुक्का यहाँ कैसे आ गया ?"

"न मैंने मँगवाया, न मैं लाया। वसंत से पूछिए।"—रामधन बोले।

"क्यों वसंत ?"—गजानन ने विस्मय से पूछा।

"हाँ, पंडितजी, मैं अपने सुधार का जिम्मेदार हूँ। दूसरे के सुधार में मुझे ठोकर लग गई, तो ?"

गजानन ने हुक्का उठाकर वसंत को देते हुए कहा—"बंद करो इसे अपने कमरे में।"

"नहीं, पंडितजी, इसकी अजीब शकल देखकर मेरे मन में भयानक सपने दिखाई देने लगते हैं। आप अपने घर ले जाइए।"—वसंत बोला।

"अच्छी बात है।" सहसा पंडितजी अपने निश्चय से फिसल गए—"लेकिन इसे देखकर मेरी श्रीमतीजी वहम में पड़ जायँगी।"

गजानन ने हुक्का जहाँ-का तहाँ रख दिया।

रामधन बाबू मुसकाकर बोले—"क्या वहम में पड़ जायँगी?"

"कुछ नहीं, वकील साहब। आपका है, कह देने से भी काम नहीं चलेगा। वह समझेंगी, यह तंबाकू फिर से आरंभ करने की भूमिका जम रही है। तुम्हारे शक करनेवाला कौन है वसंत?"—पंडितजी ने पूछा।

"मेरा मन है, पंडितजी, वह सहज ही प्रलोभनों के पीछे पड़ जाता है।"

"अभ्यास से उसे वश में कर तो रहे हो?"

"हुक्का कमरे में रखकर दूसरा अभ्यास शुरू हो गया, तो फिर हो गया सुधार?"

"कम-से-कम एक आदमी का तो सुधार करना ही पड़ेगा, नहीं तो उधार कैसे चुकाओगे?"

"उधार कैसा?"

"डॉक्टर साहब का उधार।"

वकील साहब ज़ोर से हँस पड़े।

गजानन की दृष्टि उनकी मेज़ पर रक्खे हुए दो बीड़ी के बंडलों पर पड़ी। वह बोले—"ये बीड़ी के बंडल! क्यों वकील साहब, तो आप हुक्का वसंत के कमरे में रखकर उसके वियोग को इन बीड़ियों से भुला रहे हैं। अब भेद खुला! इस नाटक का सहन कैसे कर सकता वसंत?"

वकील साहब हँसकर बोले—"लेकिन पंडितजी, दस बजे से चार बजे के बीच तक सिर्फ़ तंबाकू न पीने की प्रतिज्ञा की गई है।"

"यह आप वकीली चाल खेलते हैं।"

"वकीली चाल कैसी?"

"लफ्ज़ की आड़ में सत्य का गला घोंटते हैं।"—गजानन कुछ रुष्ट हो गए।

"आप तो नाराज़ हो गए। मैं अभी आपको इन बंडलों का रहस्य बताऊँगा। हाँ, सिगरेट तो इस अवकाश में पी लेता हूँ मैं, लेकिन खरीदकर नहीं। वसंत से पूछिए, साफ़ लफ्ज़ों में मैं उससे कह चुका हूँ।"

वसंत "हाँ।" कहकर जाने लगा।

गजानन बोले—"ठहरो वसंत, इस हुक्के का फ़ैसला होने पर हो जाओगे।"

"नहीं, पंडितजी, प्रतिज्ञाएँ विश्वास पर ही पनपती हैं। इस

प्रकार पिताजी पर कोई प्रतिबंध रखना मेरे लिये उचित नहीं।
कहकर वसंत वहाँ से चला गया।

"वसंत को आप मूर्ख बना सकते हैं, मुझे नहीं। आज से मैं लेता हूँ आपकी तंबाकू छुड़ाने का चार्ज। सारा हुक्का तो मैं नहीं ले जा सकता, हाँ. इस चिलम को रोज दस से चार बजे तक उठा ले जाऊँगा। आप दूसरी नहीं खरीदने पाएँगे।"

"नहीं खरीदूँगा।"

गजानन ने फिर कहा—"आप दस से चार तक तंबाकू नहीं पिएँगे।"

"इस प्रतिज्ञा मे मै पहले ही से बद्ध हूँ—इसलिये दुबारा कहने की क्या जरूरत है ?"

"और भी आपकी प्रतिज्ञा पक्की होगी।"

"दस से चार तक तंबाकू नहीं पिऊँगा।" वकील साहब ने दुहराया।

"इस बीच में आप सिगरेट भी नहीं पिएँगे।"

"हाँ, पंडितजी, खरीदकर सिगरेट भी नहीं पिऊँगा।"

"अच्छी बात है। मैं तमाम आपको मुफ्त की सिगरेट पिलाने-वालों को समझा लूँगा।" गजानन ने वकील साहब की मेज पर रक्खे हुए उन दोनों बीड़ी के बंडलों पर भी हाथ मारकर कहा—"और, ये बीड़ी भी नहीं पीने पावेंगे।"

"हें ! हैं ! हैं ! पंडितजी, बीड़ी मै कभी नहीं पीता, उससे मेरे गले में खराश पैदा हो जाती है।"

"फिर क्या ये दर्शन करने को मँगवाई है ?"

"इन्हें एक आदमी दे गया है, इनको लेकर एक मुक़दमा चलाया जायगा। लाइए, ये दीजिए मुझे।"

"अच्छा बेवक़ूफ़ बनाते हैं आप।"—गजानन ने दोनों बीड़ी के बंडल उन्हें देकर पूछा—"इनका कैसा मुक़दमा ?"

"'दि जय हिंद बीड़ी फैक्टरी' के मुंशी ये दोनों बंडल मुझे दे गए हैं। देखिए, इन दोनों में बिलकुल समानता है ?"—वकील साहब ने दोनों बंडल पंडितजी को दिखाते हुए कहा।

"होनी ही चाहिए। एक ही कंपनी के एक-से बंडल समान ही तो होंगे।"

"एक ही कंपनी के नहीं हैं—यही तो झगड़े की जड़ है।" वकील साहब ने एक बंडल हाथ में लेकर उन्हें दिखाया—"यह देखिए, यह है असली 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की बीड़ी का बंडल! यह कई साल पहले रजिस्टर्ड किया जा चुका है, इसकी नक़ल करनेवाले पर मुक़दमा चलाया जा सकता है। यह दूसरा बंडल नक़ली है। यह कंपनी पब्लिक को धोखा देकर, 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की शोहरत से ख़ुद लाभ उठाना चाहती है!"

गजानन ने वकील साहब के हाथ से दोनों बीड़ी के बंडल ले लिए। कुछ देर उनका सूक्ष्म निरीक्षण करने के उपरांत बोले—"हाँ, दूर से एक झलक में दोनों बंडलों में भारी समानता है, पर नज़दीक से इन्हें पढ़ने पर तो बहुत फ़र्क़ है।"

"वह क़ानून के पंजे से बच निकलने को।"

"'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' की इस नकल करनेवाली कंपनी ने अपना नाम रक्खा है 'जय हिंदी बीड़ी-फैक्टरी।'"

"फर्क और भी है। दोनों ने अपना ट्रेडमार्क स्वस्तिक बनाया है। 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के स्वस्तिक की ये रेखाएँ वामावर्तिनी हैं, और इस नक़ल करनेवाली कंपनी ने पब्लिक और क़ानून की आँखों में धूल झोंकने को उन्हे दक्षिणावर्तिनी बनाया है।"

"मै इन दोनो कपनियों के मालिकों को समाज और राष्ट्र की जड़ पर कुठार चलानेवाला समझता हूँ। मेरा वश चलता, तो मै इन जहर के व्यापारियों का व्यवसाय क़ानूनन् बंद करा देता।"—गजानन ने भुजा उठाकर, जोश में भरकर कहा।

वकील साहब कहने लगे—"पंडितजी, एक और बड़े मजे की बात 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' के मुंशीजी सुना गए। एक तरफा बात सुनकर कोई नतीजा निकाल लेना तो मूर्खता है। लेकिन जो बातें उन्होंने सुनाई हैं, वे बड़ी विचित्र हैं। वैचित्र्य सत्य का अनुमोदन करता ही है पंडितजी।"

गजानन बोले—"मेरी समझ में, जब आप तंबाकू छोड़ने के विचार मे हैं, तो फिर इन बीड़ी-फैक्टरियों के झगड़े जायँ चूल्हे मे, आप अपने हाथ क्यों सानें उनके कीचड़ में।"

"वाह! पंडितजी, यह तो आजीविका के सवाल के सिवा सत्य और असत्य के बीच की लड़ाई का प्रश्न है। सच्चाई को झूठ के पंजे से छुड़ाना प्रत्येक का धर्म है। बीड़ी-फ़ैक्टरी के

मुंशीजी आकर मुझे एक नया ही दृष्टि-कोण दे गए हैं। मेरे दिमाग़ में बड़ी खलबली मची हुई है, तभी से। मैं वसंत की वजह से अभी तक आपसे कुछ कह नहीं सका था।'

गजानन अधिक उत्सुक होकर, उनके निकट जाकर धीरे-धीरे पूछने लगे—'आख़िर बात कहिए तो सही।"

"उन्होंने 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' और आपकी एंटी-निको-टीन-सोसाइटी के बीच के बड़े विचित्र संबंध की बात सुनाई है।"

"वह जग-प्रसिद्ध बात है, कौन नहीं जानता? एक दुनिया में ज़हर फैला रहा है—दूसरा अमृत।"

"पंडितजी, ये विष और अमृत, दोनो एक ही समुद्र से निकले हैं, जिस तरह एक ही प्रकाश से अँधेरा और उजाला निकला है।"

"और साफ़ कहिए।"

"सेठ जयराम बड़े भाई का लड़का है, और डॉक्टर जोश छोटे भाई का।"

गजानन ने कुछ उलझन में पड़कर पूछा—"लेकिन डॉक्टर जोश के चचा कौन थे?"

वक़ील साहब हँसे—"वह अपने पिता को ही चचा कहते थे, और वह सौतिया पिता थे।"

"उन्हीं से उन्होंने अपार संपत्ति उत्तराधिकार में पाई?"

"अपार संपत्ति कैसी? दोनो भाई साधारण हैसियत के थे।

सेठ जयराम ने जो कुछ कमाया है, सब अपने ही अध्यवसाय से।"

"डॉक्टर जोश के हक़ीक़ी पिता के भाई हो सकते हैं कोई ?"

"कोई नहीं।"

"फिर डॉक्टर जोश ने क्यों ऐसा कहा ?"

"एक मज़े की बात और है। जोश के दिमाग़ में कुछ ख़राबी है। वह चचा से अपार संपत्ति-प्राप्त इसी से अपने को कहता है कि लोग उसका आदर करें। उसे प्रोफेसर कहलाए जाने का भी बेहद शौक़ है।"

"डॉक्टर तो है वह ?"

"डॉक्टर भी कहीं के नहीं। कुछ दिन एक अस्पताल में कंपा-उंडर रहे। कुछ लोगों ने मज़ाक़ में डॉक्टर कहना शुरू किया, बस, डॉक्टर बन गए।"

"साइंस की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, व्याख्यान देते हैं, उतनी मोटी-मोटी किताबें, नक़शे, चार्ट जमा कर रक्खे हैं, उतनी बढ़िया किताब 'ज़हर की पत्ती' छपाकर रक्खी है। आप कहते हैं, कुछ हैं ही नहीं।"

"मैं कुछ नहीं जानता पंडितजी, जो कुछ सुना, कह दिया। आपने उन्हें देखा है, लगभग सवा साल से आपका उनका संबंध है, आप मुझसे ज्यादा सही उनके बारे में कोई राय बना सकते हैं।"

"सारी पब्लिक, राष्ट्र और देश की भलाई के लिये इतनी बड़ी

सोसाइटी खोल रक्खी है। वह भी सब अपने पैसे से। यह हर-एक का काम नहीं है।"—गजानन कुछ विचारने के अनंतर बोले।

वकील साहब हँस पड़े—"इसका भी एक इतिहास है। चचा से जोश का कुछ संबंध होने के कारण जयराम ने शुरू-शुरू में उसकी बहुत मदद की। उसके रहने का कोई ठौर-ठिकाना न देखकर, उसके लिये वहाँ अपनी जमीन का एक टुकड़ा देकर मकान बनवा दिया, कुछ रुपए देकर अँगरेजी दवाइयों की दूकान भी खुलवा दी, लेकिन जोश ने लोगों से जयराम को यह कहकर बदनाम करना शुरू किया कि वह उसके चचा की बहुत बड़ी रक़म हज़म किए बैठा है, और उसे एक पैसा नहीं देता।"

"एक ही भेंट में इतनी अजीब बातें आपको कहाँ से मालूम हो गईं?"

"जिरह करने की आदत जो होती है वकील की।"

"अँगरेज़ी दवाइयों की अब भी कई अल्मारियाँ भरी पड़ी हैं, उनके यहाँ—जिन्हें वह निकोटीन के इलाज की बताते है।"

"दिमाग़ सही नहीं है। अगर अच्छी तरह उस दवाखाने को चलाता, तो पैसेवाला हो सकता था। लेकिन उसके मन में उपकारी के लिये विद्रोह उपज गया। जयराम की 'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' की दिन-दूनी, रात-चौगुनी उन्नति देखकर वह जलने लगा, और उसे हानि पहुँचाने के लिये निरंतर उपाय सोचता रहा। सेठ जयराम चाहता, तो उसे किसी भी क्षण वहाँ से निकाल देता।"

"क्या यह सच बात कह रहे हैं आप ?"—गजानन ने पूछा।

"एक वकील के पास उसका मुंशी कानूनी मशविरा लेने को आया। उसे मुझसे झूठ बोलने की जरूरत क्या है ?"

"मैं लगा लूँगा पता। और क्या कह रहा था ?"

"अंत में उसने यह जो एंटी-निकोटीन-सोसाइटी खोल रक्खी है, इसका खास कारण देश-सेवा नहीं है, 'दि जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' को बरबाद करना है। लेकिन पंडितजी, इससे भी तुम्हारे डॉक्टर जोश के दिमाग़ी दिवाले का पता चलता है। इस तरह एक-एक चाय के चम्मच से कहीं समुद्र सूख सकता है ?" रामधन ने कहा।

"यह तो बड़ी दिल तोड़ देनेवाली खबर आपने सुनाई। अच्छा, एक बात है, वकील साहब, डॉक्टर जोश जैसे भी हों, तंबाकू तो एक बहुत बुरा अमल है, इसे तो आप मानते हैं न ?"

"क्यों नहीं ?"

"तब, मैं तंबाकू छोड़ चुका हूँ—इस पर मुझे स्थिर रहना चाहिए। वसंत सिगरेट छोड़ चुका, उसकी भी इस पर जमे रहने में उन्नति है, और आप जो तंबाकू को अपने दिन के छ घंटों से बरख़ास्त कर चुके हैं, इस पर भी जमे रहेंगे ?"

"जरूर पंडितजी, आप चार बजे तक के लिये उठा ले जाइए मेरी चिलम।"

"अब आज एक-दो घंटों के लिये क्या ले जाऊँ ? आज दिन भी ठीक नहीं है, कल से ले जाऊँगा। बड़ी अजीब खबर

आपने सुनाई। लेकिन ये सब वसंत से कह देने की बातें नहीं हैं। उसके मन में सोसाइटी की यह कच्ची बुनियाद न खुलनी चाहिए।"

"कहाँ तक न कहेंगे ?"

"कुछ दिन तक जब तक उसकी यह नई आदत नहीं बन जाती।"

"पंडितजी, जब आपने इस एंटी-निकोटीन-सोसाइटी का नाम मुझे पहलेपहल सुनाया था, तभी मैं इसके उद्देश्य को सुनकर चकराया था, तभी मुझे यह किसी संतुलन खोए हुए दिमाग़ की उपज जान पड़ी थी। मैं चुप रह गया। कुछ मेरा अपना स्वार्थ भी था, मैं वसंत की गंदी आदत छुड़ाना चाहता था। आप इसका मतलब यह कदापि न लगावें कि मैं सिगरेट के प्रचार के पक्ष में हूँ। आपकी इस एंटी-निकोटीन-सोसाइटी की जो बुनियाद मुझे बताई गई है, यदि वह आधी भी सच है, तो यह किसी भी दिन कपूर की डली की तरह हवा में उड़ जायगी। फिर वसंत को हम कौन हैं बतानेवाले ?"—रामधन बाबू बोले।

[चौबीस]

रामधन बाबू के यहाँ से जब गजाननजी लौटे, तो उन्हें ऐसा जान पड़ा, मानो उनकी समस्त सम्पत्ति लुट गई हो। उनके पैर लड़खड़ा रहे थे। जिस प्रतिज्ञा की पूर्ति से वह अपने मानस में एक शक्ति का अनुभव करते थे, एक आध्यात्मिक पथ पर अपनी प्रगति समझते थे, आज एकाएक रामधन बाबू की बातों से उस पर पानी फिर गया!

निराश और उदास होकर रह गए वह। जिस काम में हाथ लगाते, जी न लगा। जाकर बिस्तर पर लेट गए, और स्मृति के पट पर डॉक्टर जोश को इस नए दृष्टिकोण से देखने लगे।

"मैं प्रोफ़ेसर था, मैंने प्रोफ़ेसरी छोड़ दी! मुझे चचा की अपार संपत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त हुई है—मैं उसे दुनिया से इस जहर को मिटा देने में लगा दूँगा!" गजानन के मन में डॉक्टर जोश के ये शब्द प्रतिध्वनित होने लगे।

"वह प्रोफ़ेसर थे। उनके सिवा और किसी ने भी मुझसे नहीं कहा। जरूर वह कभी-कभी अँगरेजी बोलते थे। मुझे कौन-सी अँगरेजी आती है, जो मैं उनकी विद्वत्ता को नाप सकता। किताब में जो अँगरेजी उन्होंने लिख रक्खी है, वह कहीं से भी

उसे उतार सकते हैं।" गजानन मन में तर्क वितर्क कर रहे थे—"उनके पास अपार सपत्ति है, न तो मैंने उनके बैंकों की पास-बुक ही देखी, न उनके घर या घर की किसी चीज से ही वह प्रकट हुई। वकील साहब कहते हैं, वह दूकान उनके लिये सेठ जयराम ने ही खुलवा दी थी।"

कुछ भी निश्चय न कर सके वह, कल्पना की उधेड़ बुन से कोई निष्कर्ष नहीं निकला। वास्तविकता की छान-बीन के लिये वह उसी समय तैयार हो गए। उन्होंने बिस्तर छोड़ दिया, और डॉक्टर जोश के यहाँ जाने लगे।

पत्नी बोली—"अभी आए, अभी जाने लगे।"

"जरूरी काम से जाता हूँ, डॉक्टर साहब के यहाँ।"

"क्यों, तबीयत तो ठीक है न ?"

"हाँ, ठीक है।" गजानन ने पत्नी के अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया, और सीधे एंटी निकोटीन-सोसाइटी पहुँचकर ही दम लिया।

डॉक्टर जोश बहुत कम कहीं आते-जाते थे। शाम के समय तो वह जरूर घर ही पर मिलते थे। गजानन ने जाकर उन्हें बहुत उदास और गहराई में डूबा हुआ पाया।

मनुष्य के भीतरी विचारों का बाहरी जगत् पर बड़ा असर पड़ता है।

आज गजानन की अंतर्धारणा बिलकुल ही बदल गई थी, तदनुरूप ही उन्हें आज वह एंटी-निकोटीन-सोसाइटी निःसार

और खोखली जान पड़ी। जोश डॉक्टरी और प्रोफेसरी का नक़ली चेहरा लगाए दिखाई पड़ने लगे।

अनेक बार मन की भावना बिना शब्दों के लेन-देन के ही एक दूसरे की समझ मे आ जाती है। दोनो बहुत देर तक चुप रहे। दोनो सोच रहे थे, बात कहाँ से शुरू की जाय। मन की बिजली काम कर गई।

गजानन ने डॉक्टर जोश को इतना पस्त और परास्त कभी नहीं पाया था। पहले वही बोले—"क्या बताऊँ पंडितजी, इतनी बड़ी मेरी स्कीम, आप भी कुछ नहीं कर रहे है।"

पंडितजी को यह अपमान सहन नहीं हुआ। डॉक्टर जोश ने पहले कभी ऐसे शब्दों मे उन्हे संबोधित नहीं किया था। डॉक्टर की जो भव्य मूर्ति पंडितजी के मन में बनी हुई थी, उसे आज वकील साहब ने गिराकर चकनाचूर कर दिया था। तड़ से उन्होंने उत्तर दिया—"देखिए जोशजी, बिना विचारे ही आपने अपने मुँह से ये शब्द निकाल दिए।"

डॉक्टर या प्रोफ़ेसर, इन दोनो पदवियो से विहीन अपने आपको सुनकर जोश के ग़ुस्सा चढ़ गया। गजानन ने जान-बूझकर यह कुछ नहीं किया था। आज तक जोश के सामने या पीछे वह बराबर दोहरे शब्दो से ही उनको संबोधित करते थे। आज ही पहली छूट थी, और आज ही जोश के यह बात चुभ गई।

वह बोले—"बिना विचारे शब्द आपने निकाले हैं।"

गजानन ने अपनी भूल देखी। उसी समय उन्हें रामधन बाबू

के शब्द याद पड़े—"वह डॉक्टर या प्रोफ़ेसर, इनमें से कुछ भी नहीं है।" उन्हें अपनी भूल के लिये एक सहारा मिला। उन्होंने मन-ही मन निश्चय् किया, आज जरूर इन दोनो पदवियों का सत्य जानकर ही घर लौटूँगा।

पंडितजी ने शांति-पूर्वक कहा—"मुझे आपके कर्तव्य का ज्ञान है।"

"मैंने आपकी तीस वर्ष की पुरानी लत छुड़ाई है।"

दक्षिणा के रूप में मैंने वसंत के दस्तखत कराए हैं, आपके रजिस्टर मे।"—जान-बूझकर गजानन ने इस बार उनका नाम छोड़ दिया।

"यह तो कम-से-कम है, ज्यादा-से-ज्यादा होना चाहिए।"—कुछ ठंडे पड़कर प्रोफ़ेसर जोश बोले।

"कोशिश बराबर कर रहा हूँ। अभी आजकल एक वकील-साहब को पटा रहा हूँ, वसंत के पिता को।"

"पढ़े-लिखे सौ-पचास आदमी भी मेरे रजिस्टर में दस्तखत कर दे, तो फिर अपने आप यह काम बढ़ चले। 'जहर की पत्ती' के सिवा और भी कई परचे आए हुए रक्खे हैं, वे सैकड़ों की तादाद में ले जाकर आपको बाँट देने चाहिए।"

"एक बात बता दीजिए। लोग पूछते हैं, यह प्रोफ़ेसर जोश कहाँ के प्रोफ़ेसर है? उन्हें क्या जवाब दिया जाय?"

जोश की भौंहे तन गईं—"अफ़सोस है, पंडितजी, अगर आपको अँगरेजी आती होती, तो आपको हरगिज़ मुझसे पूछकर

मेरा टाइम खराब करने की न सूझती!" कुछ देर चुप रहने पर बोले—'डिक्शनरी खोलकर देखिए, प्रोफ़ेस् के माने हैं प्रतिज्ञा करना, और प्रोफ़ेसर माने हैं, जो प्रतिज्ञा करता और कराता है। मैंने सारे भारत से बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू मिटाने की प्रतिज्ञा की है, और मैं ऐसी ही प्रतिज्ञा लोगों से करा रहा हूँ। तो बताइए, मैं प्रोफ़ेसर नहीं हूँ, तो क्या कोई लुच्चा-लफंगा हूँ। आपको अपनी तरफ़ से मेरी महत्ता बढ़ानी चाहिए। इसी से तो लोग मेरे ऊपर श्रद्धा करेंगे, और सोसाइटी की मेंबरी बढ़ावेंगे।"

अब पंडितजी को कुछ विश्वास हुआ कि डॉक्टर जोश के दिमाग़ में कोई बीमारी ज़रूर है। वह बोले—"अच्छी बात है, प्रोफ़ेसर साहब, एक शक और मिटा दीजिए। आप डॉक्टर कहाँ के हैं?"

भड़क उठे प्रोफ़ेसर जोश! पैर पटककर बोले—"इतनी अलमारियाँ दवाओं की मेरे यहाँ भरी पड़ी हैं, और तुम पूछते हो, मैं कहाँ का डॉक्टर हूँ। मैं इस एक-एक शीशी का डॉक्टर हूँ। इन सबको पहचानता हूँ। अगर तुम्हें अँगरेज़ी आती होती, तो मैं एक एक का नाम पुकार-पुकारकर बता देता। अफ़सोस है, पंडितजी, मैंने कभी आपसे नहीं पूछा, आप कहाँ के पंडितजी हैं। आपने ऐसा सवाल पूछ दिया मुझसे?"

गजानन मन-ही-मन हँसे। अब उन्हें वकील साहब की बात में शक करने की कोई गुंजाइश नहीं रही। वह बोले—"हाँ,

"हाँ, बना रहा हूँ। अभी जरा देर है। लेकिन एक बार जब बात उनकी समझ में आ जायगी, तो फिर वह अपनी प्रतिज्ञा पर अटल ही नहीं रहेंगे, बड़े-बड़े जज और कलक्टरों के भी दस्तखत आपके रजिस्टर में दर्ज हो जायँगे।" गजानन बोले—"अच्छा, प्रोफ़ेसर साहब, अब मुझे आज्ञा दीजिए।"

"हाँ पंडितजी, कोई शक न बढ़ाइए। प्रोफेसरी के सबूत के लिये मेरी लिखी हुई किताब और मेरे रजिस्टर हैं, और डॉक्टरी की गवाही के लिये ये अल्मारियाँ हैं, अँगरेजी दवाइयों की। और, भगवान् शीघ्र ही न्याय करेंगे।"—डॉक्टर जोश ने आकाश की ओर हाथ जोड़े, फिर गजानन के बिदा लेते हुए हाथों की ओर इशारा कर कहा—'नमस्ते।"

गजानन प्रोफ़ेसर जोश की आज की बातों से कुछ खिन्न और कुछ हँसते हुए घर को लौटे। एंटी निकोटीन-सोसाइटी का रहस्य आज उनकी समझ में आया। और, उस सोसाइटी की इस बुनियाद को सोच-सोचकर उनकी प्रतिज्ञा भी डंगमगाने लगी।

बस से उतरकर वह अपनी गली में घुसने लगे। कुछ माथा भारी लगने लगा। छींकने की इच्छा होती थी, पर छींक नहीं आ रही थी।

तबाकूवाला पुराना परिचित, पुकार उठा—"पायँ लागे पंडितजी। दर्शन तो दे जाइए, लेने देने की ऐसी-तैसी। प्रेम बना रहना चाहिए महाराज। हम आपके पैसे के इतने भूखे नहीं, जितना आशीर्वाद के।"

गजानन उसकी दूकान के आगे उसे आशीर्वाद देकर खड़े हो गए। उसने कहा—"कहिए, आप आनंद से तो हैं ?"

"हाँ, भाई, जो घड़ी कट गई, आनंद की ही है।"

"तंबाकू तो छोड़ ही दी आपने। अच्छा किया पंडितजी, सच पूछिए, तो जी का बवाल ही है यह तंबाकू। मैं भी छोड़ देता, क्या करूँ ? पेट का सवाल है। दूकान सिगरेट-तबाकू की खोल बैठा। दिन-भर इसी से वास्ता—कैसे छोड़ूँ इसे ? मैं छोड़ूँ भी इसे, यह नहीं छोड़ती मुझे।"—तंबाकूवाले ने कहा।

पंडितजी गंभीरता से चुप ही रहे। तंबाकूवाले को कुछ ताज्जुब जरूर हुआ, जब उन्होंने तंबाकू के खिलाफ एक भी लफ्ज नहीं कहा।

तंबाकूवाला बोला—"पंडितजी, कितने मेंबर बनाए आपने ?"

"एक दो बनाए ही हैं।"

"बस ? मेंबरी का चंदा तो कुछ नहीं देना पड़ता है, फिर साल-भर में सिर्फ दो ही मेंबर ?"

"चंदे में अपना मन जो देना पड़ता है, पैसा तो हाथ-पैरों का मैल है।" गजानन ने जेब टटोलते हुए कहा—"अच्छी मदरासी सुँघनी भी है, आपके पास ?"

"बहुत बढ़िया।" तंबाकूवाले ने एक पत्थर की बटनी का काग हटाकर, चम्मच में लेकर सुँघनी दिखाई।

"खुशबूदार नहीं। दो पैसे की दे दो। ठंड लग गई है। दो-

चार छींकें आ जायँगी, तो माथा हलका हो जायगा।"—पंडितजी ने एक चौकोर अधन्ना उसे दिया।

दूकानदार ने सिगरेट के झलमलाते पन्नी-काग़ज़ में चार पैसे के बराबर सुँघनी की पुड़िया बाँधकर उन्हें दे दी। एक चुटकी दोनों नाक के छेदों में खींचकर पंडितजी रास्ते-भर छींकते हुए घर पहुँचे। सावित्री उनकी लाल-लाल डबडबाई आँखें देख बोली—"क्यों, तबीयत तो ठीक है न ? आँखें लाल हो गईं !"

"जुकाम हो गया, सुँघनी सूँघी है, इसी से। घबराने की कोई बात नहीं।"

"सुँघनी किस चीज़ की बनती है ?"

"ऐसे ही कई चीज़ों को मिलकर। मैंने थोड़े उसका नुसख़ा कभी घोटा है।"—कुछ अनखाकर गजानन ने कहा।

"कुछ लोग तो इसे बराबर सूँघते रहते हैं।"

"वह बड़ी गंदी लत है। मैं तो यह दवा के तौर पर सिर्फ़ दो पैसे की ख़रीदकर लाया हूँ।"—मन-ही-मन वह सुँघनी का आनंद ले रहे थे।

सुँघनी का मुख्य आधार पति-पत्नी, दोनों को ही ज्ञात था ; दोनों ही उसे छिपाकर रह गए। सावित्री कुछ और बातों को आगे बढ़ाना चाहती थी, लेकिन पंडितजी के मन में सोसाइटी की असलियत मालूम हो जाने से विचारों का तुमुल संग्राम मचा हुआ था। उन्होंने मुँह बंद कर लिया।

एक बार इच्छा हुई कि रामधन बाबू के यहाँ हो आवें

लेकिन वहाँ जाने का भी उत्साह मर गया। डॉक्टर जोश की बहुत-सी कमजोरियाँ उनकी समझ में आ गई थीं। वकील साहब के पास जाने पर वे अपने आप उनके सामने खुल जायँगी। उनके सामने जोश का पाया कमजोर होना वह अपनी ही पराजय समझते थे। इसलिये वह घर ही पर रह गए कि बातें उनके मन में कुछ गहराई में समा जायँ, रात-भर में।

नींद कहाँ आती उन्हें? दूसरे दिन नहा धो, खा-पीकर वह वकील साहब के यहाँ जा पहुँचे। दस नहीं बजे थे। वकील साहब कचहरी जाने की तैयारी कर रहे थे।

"क्यों, पंडितजी, आप गए नहीं श्रीमान् प्रोफ़ेसर जोश साहब के यहाँ?"—वकील साहब ने व्यग्य-पूर्वक पूछा।

शूल-सा चुभ गया गजानन के वह प्रश्न। "हाँ, गया तो सही।"—उन्होंने जवाब दिया।

"मेरी बातों का कोई समर्थन मिला आपको? कुछ समाधान हुआ या नहीं?"—उन्होंने पूछा।

"नहीं, मैंने उस विषय की कोई बात नहीं चलाई।"

"क्यों नहीं चलाई? सत्य की शोध क्या पंडित का धर्म नहीं? उस झूठे डॉक्टर और नक़ली प्रोफ़ेसर के सामने आपकी हिम्मत क्यों नहीं खुली, आश्चर्य है!"

"उतनी दवाइयों का संग्रह है, उनके यहाँ। इलाज भी करते ही हैं, मेरी बीमारी में इंजेकशन देकर मिनटों में मुझे चंगा कर दिया। फिर डॉक्टरी पास कर ही क्या रक्खा है? जब हिंदु-

स्थान में ये डॉक्टरी के कॉलेज नहीं थे, तब तो सभी अपनी बुद्धि और अनुभव से ही हकीम या वैद्य बन जाते थे।"—गजानन ने कहा।

"और, यह प्रोफेसरी कैसी है?"

"बहुत-से पहलवान और जादू के खेल दिखानेवाले अपने को प्रोफेसर कहते हैं, फिर उन्होंने क्या बिगाड़ा है। एक पढ़ा-लिखा आदमी देश की भलाई के लिये जो रात-दिन विचार करता है, उसे प्रोफेसर कह देने मे हमारी गाँठ का क्या खर्च होता है?"

"हाँ, हर्ज तो कुछ नहीं है। लेकिन शब्द का एक विशेष अर्थ होता है। उसका सही सही उपयोग होना चाहिए, नहीं तो यह जाली सिक्का चलाने के समान ही एक जुर्म है। लुच्चे-लफंगों को अगर हम महात्मा कहना शुरू करें, तो उनकी तो कोई धार्मिकता नहीं बढ़ेगी, उल्टे लोग कहनेवाले पर कलंक लगावेंगे। हिम्मत रखिए, एक दिन पूछिए उनसे, वह कहाँ के डॉक्टर हैं, और कहाँ के प्रोफेसर? देखिए तो सही, क्या उत्तर मिलता है?"—वकील साहब कचहरी जाने के लिये तैयार हो गए थे।

"अच्छी बात है।"—गजानन ने घड़ी की तरफ़ देखा, फिर उनके हुक़्क़े की तरफ़।

"हाँ, इसे ले जा सकते है आप।"—वकील साहब ने कहा।

"जरूर।"—गजानन ने अपने पक्ष को सबल करते हुए उत्तर दिया, लेकिन हाथ-पैर ढीले हो रहे थे उनके।

"चार बजे पहुँचा दीजिएगा।"

गजानन ने चिलम उतार ली हुक्के पर से। कोयले गरम ही थे। इस तरह हाथ में चिलम ले जाते हुए एंटी-निकोटीन-सोसाइटी के मेंबर को लोग गली में देखेंगे, तो क्या कहेंगे? यह लज्जा उनके पैदा हो गई। कोने में एक ढकनेदार टीन का डिब्बा रक्खा था। उसे उठाते हुए उन्होंने पूछा—"इसे ले जाऊँ वकील साहब!"

"ले जाइए। एक पार्सल आया था इसमें, खाली ही पड़ा है। क्या करेंगे आप इससे?"—वकील साहब ने पूछा।

"यह चिलम रखकर ले जाऊँगा इसमें।"—गजानन ने गरम चिलम उसमें रखकर ढकना बंद कर दिया।

"सचाई को ढकने की क्या जरूरत है, पंडितजी?"

"लोग न-जाने क्या समझें?"

"समझने दीजिए, आप अपनी आत्मा को धोखा न दें।"

"चिलम गरम है, उसके लिये ढकना चाहिए ही। फिर कहाँ तक मैं हरएक को इस चिलम का इतिहास समझाता जाऊँगा?"

"जैसी आपकी इच्छा।"

वकील साहब कचहरी को चले, और गजाननजी वह टीन का डिब्बा बग़ल में दबाकर अपने घर को। पत्नी की आँख बचाकर वह अपने कमरे में घुसे, और चारपाई के नीचे वह डिब्बा रख दिया।

पत्नी आकर बोली—"तुम ठीक ही समय पर आ गए, मैं पड़ोस में कहीं जा रही हूँ, जरा देर के लिये।"

पत्नी के जाने पर गजाननजी ने जेब से वह सुँघनी की पुड़िया निकाली। मन में एक नई ही चिंता के घुस जाने से उन्हें जुकाम की पीड़ा कुछ भी नहीं व्याप रही थी। वह चढ़ाव में कुछ था भी नहीं।

पहले दिन सुँघनी की चुटकी ने उनकी कई महीनों की सोई हुई स्मृतियों को जगा दिया था। उस मानसिक अशांति को दबाने के लिये फिर सुँघनी सूँघा। वह सफल हुए। अचानक एक बिजली-सी उनके मस्तिष्क में कौंध गई। उन्होंने झट से वह टीन का डिब्बा खोल दिया। ढकना पूरा बंद नहीं हुआ था। हवा का प्रवाह उसमें जारी रहने के कारण चिलम के कोयले बुझे नहीं थे। उन्होंने फूँक मारकर उसे सतेज कर लिया।

वह समझे, उनकी विजय हुई, और ओट से शैतान अपनी विजय पर मुस्करा उठा। एंटी-निकोटीन-सोसाइटी के नीचे उन्होंने एक झूठे डॉक्टर और प्रोफ़ेसर को दबा पाया, और उसके रजिस्टर में उन्होंने अपने दस्तखत के सिवा सिर्फ़ वसंत के हस्ताक्षर पाए। वह मन-ही-मन कहने लगे—"प्रोफ़ेसर जोश पागल नहीं है, तो कुछ सनकी जरूर है। उसके हाथों में मेरी प्रतिज्ञा क्या, मेरी सनक नहीं?"

दोनों हाथों में चिलम थाम ली उन्होंने—"इस असार संसार में क्या छोड़ना है और क्या पकड़ना? एक दिन सब कुछ अपने आप छूट ही जाता है, जब महाकाल पुकारता है।"

वह तंबाकू पीने लगे। वह ताज़ी ही भरी हुई थी। वकील साहब कचहरी की देर के कारण उसे पी नहीं सके थे। लगभग साल-भर के विद्रोह के बाद बड़ी मीठी जान पड़ी वह। आँखें बंद कर पीने लगे वह उसे। डॉक्टर जोश और निकोटीन-सोसाइटी की तरफ़ से जो उदासी छा गई थी उनके मन में, वह सब तंबाकू ने दूर कर दी।

चारों तरफ़ के दरवाज़े बंद कर वह पीते ही जा रहे थे, और कल्पना में विश्वव्यापी वह एंटी-निकोटीन-सोसाइटी, प्रोफ़ेसर जोश, उनके वे तमाम रजिस्टर और स्वयं उनकी अपनी प्रतिज्ञा, सब-के-सब पतझड़ के पीले पत्तों की तरह निराधार और असहाय होकर धरती पर उड़े जा रहे थे। कोई स्थिरता नहीं, कोई चेतना नहीं, कोई उद्देश्य नहीं। हवा पटक-पटककर उन्हें अणु-परमाणुओं में ताड़ रही थी।

तंबाकू के धुएँ का रस लेते हुए पंडितजी सोच रहे थे—"सारा विश्व टूटता जा रहा है। बड़े-बड़े राष्ट्र-साम्राज्य, सभ्यता-संस्कृतियाँ, सौध-दुर्ग, नगर-पत्तन विनष्ट होकर काल के गाल में समा गए! मैं भी एक दिन काल के चरणों की धूल में समा जाऊँगा। फिर मेरी उस प्रतिज्ञा का ही क्या मूल्य है? एक क्षणिक पाखंड! एक झूठा अभिमान!" उन्होंने फिर तंबाकू का एक दम खींचा।

सहसा सीढ़ियों पर उन्होंने सावित्री की चूड़ियों की झनकार सुनी। जल्दी से चिलम उस टीन के डिब्बे में बंद करने उन्हों

दरवाज़े खोल दिए। उनके सतर्क और व्यवस्थित होने में जरूर कुछ कसर रह गई थी। श्रीमती लौट आईं।

गजानन जल्दी में बोल उठे—"प्रोफेसर जोश बेचारा बड़ी मुश्किल में फँस गया!"

सावित्री ने आज कई महीने बाद फिर उस तंबाकू के वायु मंडल का अनुभव किया, इसी से फौरन् ही वह उसे ताड़ गई। इधर-उधर उसका सूत्र ढूँढ़ने लगी। कहीं कुछ न मिला। कुछ देर बाद वह बोली—"तो उनकी मुश्किल से आपकी प्रतिज्ञा को क्या चोट पहुँचेगी?"

"सहारा तो उन्हीं का है न?"—गजानन पत्नी के रंग-ढंग देखकर कुछ शक में पड़ गए।

और सावित्री पतिदेव का मुँह देखती रह गई। अवश्य ही उसने तंबाकू की गंध अनुभव की। उसकी नाक बड़ी तेज़ थी। कोई उसे धोखा नहीं हो सकता। एक बार उसकी इच्छा हुई कि साफ़-साफ़ पूछकर अपना संशय दूर कर लूँ, लेकिन वह कुछ समझकर चुप हो रही।

गजाननजी चारपाई के नीचे के टीन को छिपाने के लिये फ़र्श पर एक कंबल बिछा उधर पीठ कर बैठ गए। सामने पंचांग खोलकर किसी का वर्ष-फल बनाने लगे। पत्नी कुछ देर वहीं सोच-विचार में खड़ी रही। हवा में से तंबाकू की गंध ग़ायब हो गई थी, लेकिन उसके मन में जो कालिमा बस गई थी, वह उज्ज्वल न हो सकी।

"बैठ जाओ, खड़ी खड़ी बुरी दिखाई दे रही हो।"—पंडितजी ने लिखते-लिखते कहा।

"बैठूँ क्या? गेहूँ साफ़ करने हैं।"—सावित्री अनखाती हुई बोली।

"मुझे जान पड़ता है, निकोटीन-सोसाइटी कहीं टूट न-जाय!"—पंडितजी बोले।

"तो क्या उससे पहले आपको अपनी प्रतिज्ञा तोड़ देनी चाहिए?"

"नहीं! नहीं!" चौंककर पतिदेव ने कहा—"मेरा मतलब है, अगर फिर कहीं बीमार हो गया, तो इंजेक्शन कौन लगावेगा? डॉक्टर जोश की आर्थिक अवस्था बहुत ख़राब है। उन्हें ज़रूर यह विना आमदनी की सोसाइटी तोड़ ही देनी पड़ेगी। और हाँ, वकील साहब कहते हैं, वे इंजेक्शन तंबाकू के ही होंगे।"

"और, सुँघनी में क्या तबाकू नहीं है?"

"ज़रूर है। तुमसे क्यों छिपाऊँ। लेकिन दवा के तौर पर उपयोग हो सकता है। वकील साहब कहते हैं, बचपन और जवानी की तंबाकू एक निकृष्ट अमल है। बुढ़ापे की तो यह एक दोस्त और डॉक्टर है।"

सावित्री इस कथन पर घृणा की दृष्टि फेककर चली गई। गजानन ने किसी तरह साढ़े तीन बजाए, और वकील साहब का टीन एक अख़बार में लपेटकर चल दिए।

उनके जाने पर पत्नी ने कमरे का एक-एक कोना छान डाला, पर तंबाकू की गंध की उद्भावना का कहीं कोई चिह्न नहीं मिला।

पच्चीस

भूधर ने उस बीड़ी की मशीन को देखा। मनुष्य के श्रम का उपहास कर देनेवाले वे लोहे के टुकड़े! जहाँ एक पहुँच जाय, वहाँ बीस मनुष्यों को अपाहिज बनाकर रख दे। उसे चंपा याद आई! उसके वे वाक्य उसकी स्मृति में चमकने लगे, जिनका भावार्थ यही था—"अगर तुम इस मशीन को तोड़ दो, तो मैं अपना जीवन तुम्हे समर्पित कर दूंगी।" कहाँ एक निर्जीव लौह-खंड, कहाँ एक सुंदरी नारी? मनुष्य के सूने जीवन की परिपूर्णता! भूधर ने दोनो को एक साथ अपने मानस में देखकर विचारा—'मशीन मुझे बहुत-सा रुपया दे देगी? मेरी तमाम जरूरतें पूरी हो जायँगी। समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त होगी। लेकिन सैकड़ों-हजारों श्रमजीवी—जिनका पेट काटकर मैं रख दूँगा, उनकी गालियाँ किसे लगेंगी?"

भूधर के मन में फिर चंपा का आग्रह उभर आया—"सुसंगति और संस्कार पाकर उसने रूप और गुण में कैसी उन्नति कर ली। कौन अब उसे भिखारिन कहेगा? वह अपना जीवन मुझे समर्पित कर देने को तैयार है। क्या मतलब है उसका? क्या वह मेरे हृदय और घर की शून्यता में उजाला फैला

सकेगी ? मैं यह मशीन तोड़ दूँगा। इस त्याग को क्या वह अपने उत्सर्ग से बराबर कर सकेगी ? क्या उसमें इतनी समझ होगी, ऐसा हृदय होगा उसके ? मान लिया, सब कुछ है उसके। तब मैं खिलाऊँगा क्या उसे ?" भूधर ने कुछ देर बाद मन में विचारा—"मैं फिर अपनी घड़ीसाज़ी शुरू कर दूँगा। मुझे विश्वास है, मेरे श्रम और उसके प्रेम के सहारे कोई अभाव न रहेगा।" भूधर खड़ा हो गया, और मशीन के दुर्बल भाग की तरफ नज़र डाली उसने।

उसने मशीन खोल डाली, और जो सबसे नाजुक पुरज़े थे उसके, जिनके चिंतन मे उसने उपवासों से भरे सैकड़ों दिन और अनिद्रा से भरी रातें बिताई थीं, उनको एक-एक कर तोड़ दिया उसने। उसी समय 'जय हिंद बीड़ी-फैक्टरी' से एक नौकर ने आकर उससे कहा—"सेठजी ने आपको बुलाया है।"

भूधर तुरंत ही वहाँ चला। मन मे बड़ी बाधा हो रही थी उसे। वह सोच रहा था, सेठजी ज़रूर उस मशीन के ही बाबत पूछेंगे। लेकिन सेठजी ने कहा—"भूधरजी, हमारे घंटा-घर की घड़ी खराब हो गई है। इसे ठीक करना है।"

भूधर घंटा घर पर चढ़ गया, और कुछ ही देर बाद उसे ठीक कर उतर आया। हड़तालियों की हड़ताल के साथ ही वह घड़ी खराब हो गई थी, और उनके काम पर आने के बाद-ही वह ठीक भी हो गई। इससे सेठजी के मन में उन हड़तालियों के प्रति एक विस्मय का भाव पैदा हो गया।

सेठजी ने भूधर से कहा—"तुमने तो कुछ भी देर नहीं लगाई।"

"श्रीमन्! यह मेरा कौशल नहीं।"

"क्यों?"

"एक घंटे के पुरज़ों में एक चमगादड़ न-जाने किधर से घुसकर फँस गया था, उसे छुड़ाते ही घड़ी ठीक हो गई!"

"एक विचित्र संयोग! मैंने हड़तालियों को क्षमा कर दिया। तुमने मशीन के दाम सोचे?"

"नहीं, वह प्रश्न ही नहीं रहा। मैंने मशीन तोड़ दी!"

"शाबाश!" सेठजी ने भूधर की पीठ ठोक दी—"मैं भी उसके लिये यही सोच रहा था। लेकिन मैं तुम्हें उसके पूरे-पूरे दाम दे दूँगा। उसके निर्माण के लिये नहीं, उसको तोड़ देने के लिये। यह सच है, मशीनों का निर्माण हमारे तोड़ देने से रुक नहीं सकता, लेकिन हमें अपने आदर्श पर क़ायम रहना है। किंतु तुमने मशीन तोड़ क्यों दी?"

भूधर सिर नीचा कर कुछ सोचने लगा, फिर भी कोई उत्तर न दे सका।

सेठजी ने बड़े प्रेम से उसके कंधों पर हाथ रक्खा—"क्या सचमुच जनता में बढ़ते हुए कोलाहल से मिली प्रेरणा तुम्हें?"

"नहीं, श्रीमन् विशुद्ध स्वार्थ—अपना मतलब।"

"मशीन तोड़ क्यों दी?"

"मतलब हल हो गया!"

"अगर मैं तुम्हें मशीन तोड़ने के दाम न दूँ ?"

भूधर ने सेठजी के पैर छूकर कहा—"आप मुझे क्षमा करेंगे। मैं अपने मन का पाप खोलता हूँ। आपके यहाँ जो चंपा नाम की लड़की काम करती है, वह पहले मेरे यहाँ थी। उसके असाधारण रूप-गुण का सड़कों पर भीख माँगते हुए लुट जाना मुझे असह्य हो उठा था, इसीलिये मैंने उसे अपने यहाँ नियुक्त कर लिया था।"

सेठजी ने बीच ही में कहा—"इसीलिये मैं भी उसे अपने यहाँ ले आया।"

"मेरे यहाँ से आपके यहाँ जो शरण उसे मिली, वह निर्विवाद रूप से उसके लिये कल्याणकारी साबित हुई, परंतु अपने स्वार्थ को देखनेवाला मैं, मैं 'जय हिंद बीड़ी-फ़ैक्टरी' से ईर्ष्या करने लगा, और उसकी प्रतिहिंसा के लिये ही मैंने बीड़ी बनाने की मशीन की ईजाद करनी आरंभ की। आपके द्वेष से प्रेरित होकर मैं जिस काम को कर रहा था, अवश्य उसमें बरबाद हो जाता, यदि आप दो बार मेरी सहायता न करते। भगवान् की विचित्र माया है, मैं जिन्हें नीचा दिखाना चाहता था, उन्होंने ही मेरा माथा ऊँचा कर दिया। मुझे क्षमा कीजिए, इस पापी को क्षमा कीजिए।"—कहता हुआ भूधर फिर उनके चरणों पर गिर पड़ा।

सेठजी ने उसे प्रेम के साथ उठाकर गले लगा लिया—"भूधरजी, तुम्हारी ईमानदारी, लगन और परिश्रम देखकर मैं

बहुत प्रसन्न हूँ। कोई अपराध नहीं है तुम्हारा। एक बात का ठीक-ठीक उत्तर दोगे ?"

दोनों हाथ जोड़कर भूधर ने जवाब दिया—"आपसे कभी झूठ न बोलूँगा।"

"क्या तुम चंपा को चाहते हो ?"

कुछ देर चुप रहने पर उसने पूछा—"आपसे किसने कहा ?"

"अपने आप मालूम हो गया। जिसके बिछोह पर तुमने दिन-रात एक कर ऐसी प्रतिहिंसा साधी, सहज ही अनुमान किया जा सकता है, बिना उस पर प्रेम किए ऐसा कभी संभव न था। लेकिन तुमने मुझसे सच बोलने का वादा किया है।"

"हाँ श्रीमन् !"

"मैं समझता हूँ, तुम्हारी इस 'हाँ' में मेरे मुख्य प्रश्न का उत्तर भी शामिल है ?"

भूधर ने सिर नीचा किया, और चुप हो रहा।

कुछ देर चुप रहकर सेठजी बोले—"अच्छी बात है। चंपा यदि तुम्हारे साथ विवाह करने को राजी न भी होगी, तो मैं उसे राजी कर लूँगा।"

भूधर चुपचाप जाने लगा।

सेठजी बोले—"अभी कहाँ जाते हो ? हमारे खजांची के पास तुम्हारे नाम का चेक है, उसे लेते जाओ। मैं उसमें हस्ताक्षर कर चुका।"

"किसलिये, घंटा-घर की मरम्मत के लिये ? नहीं, उसमें मैंने कोई परिश्रम नहीं किया।"

"मशीन के पेटेंट का मूल्य।"

"उसे तो मैं तोड़ चुका।"

"वह केवल स्थूलता में टूटी है, तुम्हारे मस्तिष्क के विचार की सूक्ष्मता में वह अब भी साबुत है, भूधर ! है न ! तुम जब चाहो, फिर उसे जोड़ सकते हो न ?"

"हाँ, सेठजी।"

"बस, उसी का मूल्य देता हूँ। इससे तुम उसे कभी फिर जोड़ लेने का लालच न करोगे। जाओ, चेक ले जाओ। अभी दस हज़ार दिए हैं, और फिर दे दूँगा। तुम इस रुपए से फिर अपनी घड़ीसाज़ी की दूकान आरंभ करो।"

भूधर चेक लेकर सेठजी को धन्यवाद देता हुआ चला गया।

दस बजे वकील साहब के घर से अपने यहाँ और चार बजे शाम को अपने घर से वकील साहब के यहाँ उनकी चिलम के हेर-फेर कराते-कराते पंडितजी को प्रायः आधा महीना हो गया। अब तो वह चिलम वकील साहब की तंबाकू छुड़ाने के लिये इतनी ज़रूरी न थी, जितनी अपनी छुड़ाने के लिये।

चिलम रखने का वह टीन का डिब्बा उन्होंने एक कलईगर के यहाँ ठीक करा लिया। ऊपर से पकड़ने का हैंडिल और सामने ताला लगाने को छपका और कुंडा जड़ा लिए।

कई दिन तक सावित्री को उस डिब्बे का कोई पता नहीं

चला। अख़बारों में लपेटकर पंडितजी उसे लाते-ले जाते। संशय उसके मन में जमा होता जा ही रहा था। एक दिन उसने डिब्बे को देखकर पूछा—"इसमें क्या है?"

"वकील साहब के रेडियो के कुछ पुरज़े मरम्मत को भेजने हैं।"

सावित्री ने उस पर हाथ रक्खा—"यह तो गरम है।"

"बिजली का मामला, गरम न होगा, तो क्या आइसक्रीम बनाने के कील-काँटे हैं।"—पंडितजी ने जवाब दिया। अब वह मुश्किल में पड़े। रोज़-रोज़ उसे रेडियो के पुरज़े कब तक कहा जायगा?

सावित्री चुप हो गई।

पंडितजी पेट पकड़ कराहते हुए बोले—"फिर पेट में वैसा ही दर्द जान पड़ता है।"

"सोसाइटी में जाकर डॉक्टर साहब को दिखलाइए।"

"उनका दिवाला निकल रहा है। फिर वही तंबाकू के इंजे-क्शन लगा देंगे वह। इससे अच्छी तो वैद्यजी की दवा है।"

"कौन-सी?"

"वही, जो चिलम में भरकर पी जाती है।"

इतनी भूमिका बाँध दूसरे दिन पंडितजी जब दस बजे वकील साहब की चिलम घर को ले जा रहे थे, तो वकील साहब बोले—"पंडितजी, चिलम को गरमागरम क्यों ले जाते हैं, ठंडी कर ले जाइए।"

पंडितजी ने कोयले उलट दिए, और थोड़ी-सी तंबाकू भी डिब्बे में और बचाकर रख ली। घर जाकर डिब्बा खोल दिया, पत्नी के सामने कराहते हुए।

सावित्री बोली—"ऐंऽ इसमें तो चिलम है।"

गजानन—"रेडियो के पुरज़े बनने को दे दिए।"

सावित्री—"चिलम क्यों लाए?"

गजानन फिर कराहते हुए बोले—"वैद्यजी के यहाँ से दवा लाया हूँ न। दो-चार अंगारे ला दो इसमें।"

"क्या दवा लाए हो?"

"विप की दवा विप, और क्या?"

तंबाकू भरकर पंडितजी बेखटके पीने लगे। सावित्री चुप रही।

सेठ जयराम ने एक दिन उन लड़के लड़कियों का विवाह निश्चय किया। शहर के सैकड़ों भिखारियों को उस दिन उन्होंने न्योता दिया। सबके लिये कपड़े बनवाए, और बोले—"यह दिन देखने को मेरी बड़ी इच्छा थी। यह तुम्हारे ही बच्चों की शादी है। तुम्हारे जीवन में यह संयोग नहीं पड़ा। उसे प्राप्त कर तुम्हें सुख मिलेगा—यही मेरा मतलब है।"

एक अनाथालय से ढूँढ़कर एक पढ़ी-लिखी, सुंदर कन्या और बुला ली थी उन्होंने। उसी दिन दोनो विभाग तोड़कर एक कर दिए गए। सौदामिनी को उसके रिक्त पद के बदले उसे मेघदूत की सहधर्मिणी बना दियो

गया। इसके बाद बिच्छू बिजली, ------ ----- तेजा-तुलसी, शंकर यशोदा, ------ ----सी, दयाल लक्ष्मी और संतू-भगती का विवाह हुआ। सबके अंत में जब अनाथालय की कन्या के साथ नौजवान की शादी होने लगी, तो नौजवान बोला—"चंपा कहाँ है ?"

सेठजी ने उत्तर दिया—"उसका विवाह भूधर से होगा।"

"क्यों होगा ?"—नौजवान ने विवाह के कपड़े उतार दिए।

"भूधर के ही वहाँ से चंपा यहाँ आई है। उसके सिवा उसने अपनी वह बीड़ी की मशीन तोड़ दी, और तुम्हारे गौरव को बचा लिया।"

"चंपा नहीं, तो फिर नौजवान का क्या गौरव ? मेरी चंपा की फुटपाथ पर की पहचान थी।"

"पहचान से क्या होता है ? उसकी सम्मति भी तो चाहिए ? वह भूधर से ही विवाह करना चाहती है।"

"धोखा ! विश्वासघात ! धन का मद और पढ़े-लिखों का पाखंड ! मैं नहीं रहूँगा ऐसी दुनिया में। मुझे अपना फुटपाथ ही चाहिए। वही असली समता और सच्ची शांति है।"—नौजवान विवाह की वेश-भूषा उतारकर चला गया। उसने किसी की एक न सुनी।

वह विवाह का उत्सव कुछ देर के लिये नौजवान के जाने से सूना पड़ गया, फिर गीत-वाद्य ने उस सूनेपन को ढक दिया।

सबके अंत में भूधर और चंपा का विवाह हुआ।

उस दिन गजाननजी वकील साहब का हुक्का उन्हें लौटाते हुए बोले—"बस, वकील साहब, कल से मैं भार को न ढोऊँगा। कल मेरी वर्ष-गाँठ है।"

"तो कैसे काम चलावेंगे आप?"

"बाजार से ले आऊँगा।"

"शाबाश, पंडितजी! इसे कहते हैं लेन का देना। लेकिन आपको पैसा खर्च करने की जरूरत नहीं, पंडिताइनजी नाराज होंगी। मैं पूरा हुक्का-चिलम आपको वर्ष गाँठ के उपहार के रूप में दूँगा।"

उसी समय एक पुलिसवाला गजाननजी को ढूँढ़ता हुआ वहाँ आया और बोला—"दरोगा साहब आपको बुलाते हैं। डॉक्टर जोश अपने कमरे में मृत पाए गए हैं। जाँच-परताल में उनके एक रजिस्टर में आपका नाम लिखा मिला है, इसलिये आपको बुलाया है।"

पंडितजी ने घबराकर वकील साहब की तरफ देखा। वह बोले—"कोई हर्ज नहीं, पंडितजी, हो आइए।"

पंडितजी काँपते हुए वहाँ पहुँचे। पुलिस ने कुछ पूछ-पाछकर उन्हें बिदा कर दिया। एंटी-निकोटीन-सभा के इस भयानक अंत पर आज उन्हें विश्वास हुआ, जरूर डॉक्टर जोश के दिमाग में कुछ कसर थी, और उसने उसी फिट में आत्महत्या कर ली। वकील साहब के पास लौटने पर उन्होंने भी इस बात का समर्थन किया।

घर जाकर, बहुत उदास होकर जब उन्होंने पत्नी से यह शोक-

समाचार कहा, तो वह बोली—"अरे, तुम तो महीने-भर पहले ही उन्हें मार चुके।"

"चुपो चुपो। जोर से मत कहो ऐसा। बड़ी मुश्किल से पुलिस से गर्दन छुड़ाकर आया हूँ, वकील साहब की मदद से—तुम ऐसा कहती हो, मेरे घर ही में।"

"क्या ऐसी भोली हूँ मैं? उसी दिन धुआँ सूँघ लिया था मैं नाक रखती हूँ। तुमने तो कटा दी।"

दूसरे दिन सुबह ही, जब पंडितजी अपने जन्म-दिवस के अवसर पर मार्कंडेय ऋषि की पूजा कर रहे थे, वकील साहब का मुहर्रिर हुक्के पर चिलम, चिलम में तंबाकू, तंबाकू पर दहकते अंगारे और अंगारों पर मँडलाता हुआ सुवासित धूम लिए एक नौकर के साथ आया और बोला—"वकील साहब की तरफ़ से यह आपकी सेवा में सालगिरह की भेंट।"

"यह शनीचर फिर आ गया हमारे घर!"—सावित्री चिल्लाई।

"चुप रहो। घर आई लक्ष्मी का अनादर नहीं करते।"—गजाननजी बोले।

खा-पीकर पंडितजी पहुँचे वकील साहब के यहाँ, उनके उपहार-सहित। छुट्टी का दिन था। पंडितजी ने वकील साहब को धन्यवाद दिया, और बिछुड़े हुए मित्र को फिर मिला देने की खुशियाँ मनाईं।

वकील साहब ने भी अपने हुक्के में पानी भरवाकर उसे

सवाक् कर लिया। दोनो मिलकर गुड़गुड़ाने लगे—प्रायः एक साल के मध्यांतर के बाद।

वकील साहब ने कश खींचा—"गुड़-गुड़-गुड़-गुड़-ड़-गुड़।"

पंडितजी ने दम लगाई—"गुड़-गुड़-गुड़-गुड़-ड़ गुड़।"

यह पुरानी राष्ट्र-भाषा फिर दोहरी होकर गूँज उठी उनके कमरे में।

वकील साहब ने दैनिक पत्र में पढ़ा—"एंटी-निकोटीन-सोसाइटी के श्रीजोश अपनी दूकान में मरे हुए पाए गए। पोस्ट-मार्टम द्वारा पता चला, उन्होंने अपनी दाहनी बाँह में इंजेक्शन द्वारा अफीम की एक घातक खुराक ले ली, उसी से उनकी मृत्यु हुई।"

दोनो ने दो मिनट के लिये अपनी गुड़गुड़ी और मुँह बंद कर उस मृतात्मा की शांति के लिये भगवान् से प्रार्थना की।

फिर गुड़गुड़ी बजने लगी। आवाज़ सुनकर वसंत दौड़ता हुआ वहाँ आ पहुँचा, और दोनो के मुँह में हुक्कों की नलियाँ देखकर चिल्ला उठा—"यह क्या पिताजी और पंडितजी, क्या हो गया आपकी प्रतिज्ञा को?"

वकील साहब ने वह अख़बार वसंत को दे दिया। वसंत उसे पढ़कर बोला—"उनके मर जाने से आपकी प्रतिज्ञा क्यों टूट गई? मैं तो नहीं तोड़ूँगा।"

गजानन बोले—"तुम नौजवान हो, हम बुड्ढे हैं।"

"हट जाइए फिर आप, दुनिया बुड्ढों की नहीं है, आप

शान लेकर कोने मे बैठ जाइए। पिताजी, जोश मर गए, तो क्या हुआ ? मैं चलाऊँगा एंटी-निकोटीन-सोसाइटी को नौजवानों के लिये।"

"जरूर! जरूर! उसके क़ानूनी वारिस जोश के बाद अब सेठ-जयराम हैं। मैंने उनके ट्रेडमार्क की नक़ल का मुकदमा जिता दिया है। विद्यार्थियों मे सिगरेट-बीड़ी के प्रचार के वह बहुत खिलाफ हैं। मै दिला दूँगा तुम्हें वह सोसाइटी।"

"अच्छी बात है। ससार के सूत्र नौजवानों के हाथ मे आने दीजिए, हम बुड्ढों की तंबाकू भी छुड़ा देंगे।"

और नौजवान उस समय फुटपाथ पर फिर चीथड़े पहन लोगों की फेकी हुई बीड़ी-सिगरेट के टुकड़े बीन रहा था!